हिन्दी छन्दप्रकाश

[हिन्दी छन्दों का अभिनव अध्ययन, निरूपण तथा संकलन]

लेखक

रघुनन्दन शास्त्री, एम. ए., एम. ओ. एल.

(भू० पू० अध्यापक, यूनिवर्सिटी ओरियंटल कालेज)

सम्पादक, प्रकाशन विभाग,

पंजाब यूनिवर्सिटी

राजपाल एण्ड सन्ज़

कश्मीरी गेट दिल्ली

प्रथम सस्करण

मूल्य चार रुपया

सङ्कल्प

ॐ अद्य तत्सत्

इस पुस्तक की आय का ३३ प्रतिशत भाग हिन्दी साहित्य की अभिसमृद्धि के निमित्त पजाब यूनिवर्सिटी सोलन को अर्पण किया जायगा।

—रघुनन्दन

न्यू इण्डिया प्रेस, नई दिल्ली मे मुद्रित।

प्राक्कथन

यह आम धारणा है—और कुछ वर्ष पहले मेरा भी ऐसा ही विचार था—कि सस्कृत के छन्दोज्ञान की सहायता से हम हिन्दी के छन्दो को पूरी तरह से समझ सकते है। परन्तु इधर कुछ वर्षो से हिन्दी के मध्य-युगीन काव्य साहित्य के गम्भीर अनुशीलन का सुयोग मिलने पर मेरा यह दृढ विश्वास हो गया है कि सस्कृत का ज्ञान हिन्दी छन्दो को जानने के लिए अपेक्षित होने पर भी अपर्याप्त है और अनेक अशो मे भ्रामक भी है। जैसे केवल सस्कृत क छन्दज्ञाता की वैदिक छन्दो मे गति नही, वैसे ही वह हिन्दी के छन्दो मे भी उलझकर रह जाता है।

इसका प्रधान कारण यह है कि यद्यपि हिन्दी के छन्दो का 'प्रधान आधार' सस्कृत ह, तथापि वह 'एकमात्र आधार' नही। हिन्दी के छन्द केवल सस्कृत से ही नही आए ह, अपितु प्राकृतिक और अपभ्र श के छन्द भी उनके प्रधान स्रोत है। हिन्दी के अधिकाश छन्दो का (विशेषत मात्रिक तथा कवित्त, घनाक्षरी आदि दडको का) सस्कृत मे कही नाम मात्र भी उपलब्ध नही होता। इधर सस्कृत के अनेक छन्द और छन्दोवर्ग (विशषत आर्या और वैतालीय वर्ग) हिन्दी मे पहुँचने से पहले ही प्रयोग-बहिष्कृत हो चुके थे।

दूसरे हिन्दी के छन्दो का विकास भी एकमात्र सस्कृत की पद्धति पर नही हुआ है, न हो रहा है। वे तो प्रारम्भ से ही प्राकृत और अपभ्र श की परम्परा मे पनप रहे है। सस्कृत मे तो व्याकरण के समान छन्द की परिभाषा को इतने कडे, निबिड और जटिल नियमो में बाँध दिया गया है कि उसमे सहज विकास की प्रक्रिया का अवरोध सा हो गया है।

मुझे तो ऐसे लगता है कि हिन्दी मे छन्दतत्व की मूल धारणा भी

सस्कृत से कुछ भिन्न है। भारतीय 'छन्दतत्व' के विकास मे हमे तीन अवस्थाएँ स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है—स्वरतत्वप्रधान, ध्वनितत्वप्रधान और कालतत्वप्रधान। वैदिक छन्द 'स्वरतत्वप्रधान' है। इनमे छन्द की गति 'ऊँची-नीची स्वरलहरियो' (rising and falling tones) पर अवलबित है। सस्कृत के छन्द 'ध्वनितत्वप्रधान' है। इनमे लय का आधार 'छोटी-बडी, या ह्रस्व और दीर्घ ध्वनियो' (short and long sounds) पर है। परन्तु हिन्दी के छन्द, प्राकृत और अपभ्र श के छन्दो के समान 'कालतत्व' (time element) को प्रधानता देते है, अर्थात् इनमे छन्द की लय के लिए ध्वनि की मौलिक ह्रस्वता या दीर्घता का विचार नही किया जाता, अपितु किसी ध्वनि के उच्चारण मे जो काल लगता है, उसके आधार पर उस ध्वनि की ह्रस्वता या दीर्घता का निर्णय होता है। जैसे 'ए' अपने मूल रूप मे दीर्घ ध्वनि है और सस्कृत में इसे गुरु ही माना गया है, परन्तु हिन्दी में यदि कही इसके उच्चारण में 'इ' जितना कम समय दिया जाय तो यह अपने स्थान-प्रयत्न से भ्रष्ट हुए बिना भी ह्रस्व ही मानी जायगी।

सस्कृत में इस प्रकार का कालतत्व का सूक्ष्म पर्यवेक्षण नही मिलता। सस्कृत के छन्द-आचार्यों ने वैयाकरणो के ध्वनिविश्लेषण को यथावत् ग्रहण कर लिया है। परन्तु हिन्दी में तो मात्रिक और वर्णिक दोनो प्रकार के छन्दो की लय का प्रधान आधार 'कालतत्व' ही है। (हिन्दी की इस प्रकार की अनेक पारिभाषिक विशेषताओ का उल्लेख इस पुस्तक में यथास्थान किया गया है, पाठक वही से देख ले।)

इन सब तथ्यो के आधार पर मे इस निश्चय पर पहुँचा हूँ कि हिन्दी छन्दो का यथावत् अध्ययन सस्कृत के शास्त्रीय ज्ञान को 'प्रयोग' के प्रकाश में परिष्कृत करके ही सम्भव हो सकता है। हिन्दी छन्दो के मर्म को समझने के लिए उनके ऐतिहासिक विकास की जानकारी परम अपेक्षित है। हिन्दी का छन्दशास्त्र सस्कृत से प्रेरणा और अवलब लेकर भी अपनी स्वतन्त्र पद्धति पर विकसित हुआ और हो रहा है। उसको

इन स्वतन्त्र रुचियो और विशेषताओ के अध्ययन के बिना उसका निरूपण एकागी और अधूरा रहता है।

जिस प्रकार प्राकृत और अपभ्रंश के छन्द-आचार्यों ने सस्कृत का आश्रय लेकर भी उन भाषाओ के छन्दो की स्वतन्त्र विशेषताओ के आधार पर लक्ष्यानुविधायी लक्षणग्रन्थ लिखे है, वैसा हिन्दी लेखको ने नही किया। हिन्दी के विद्वान् अभी इस विषय मे उपेक्षावृत्ति से ही काम ले रहे है। जो कतिपय लक्षणग्रन्थ लिखे भी गये है वे प्रायः सस्कृत के एक प्रकार से यात्रिक अनुकरण मात्र है जिनमे 'प्रथापालन' की मनोवृत्ति ही सर्वत्र दृष्टिगोचर होती है। प्रयोग के साथ उनकी परिभाषाओ की एकरूपता नही। उनके ज्ञान से सुसज्जित विद्यार्थी हिन्दी के महाकवियो की वाणी में प्रयुक्त अनेक छन्दो में गुरु-लघु तक की पहचान मे व्यामुग्ध हो जाता है। न उसकी इस विषय की भूख बढती है और न वह प्राप्त सामग्री को ही हजम कर पाता है। 'रट कर परीक्षा मे उत्तीर्ण होना' ही वह इस शास्त्र का एकमात्र उपयोग समझता है। निश्चय ही यह स्थिति विज्ञान के गौरव को बुरी तरह आहत कर रही है।

ऐसी स्थिति मे प्रस्तुत पुस्तक को हिन्दी पाठको की भेट करते हुए मुझे विशेष समाधान देने की आवश्यकता नही। विज्ञ पाठक इसके गुण-दोषो का निर्णय स्वय कर सकेंगे। इसकी भूमिका मे मैंने एक विहङ्गम दृष्टि के द्वारा हिन्दी छन्दो के ऐतिहासिक विकास तथा तत्सम्बद्ध कतिपय अन्य विषयो पर विशद प्रकाश डालने का यत्न किया है। छन्द-साहित्य और छादस परिभाषाओ के सम्बन्ध में भी पर्याप्त जानकारी देने की चेष्टा की गई है। पुस्तक के प्रधान कलेवर मे हिन्दी के मुख्य-मुख्य, विशेषतया साहित्य मे प्रयुक्त, छन्दो का यथाविधि निरूपण किया है। उदाहरण भी प्राय साहित्यिक प्रयोगो से ही लिए गए है। अन्त में एक छन्दकोश जोड दिया है जिसमे हिन्दी साहित्य में प्रयुक्त और लक्षणकारो द्वारा भाषित प्राय: सभी छन्दो का अकारादिक्रम मे सकलन करके लक्षणो

का भी समावेश कर दिया है। एक स्थायी और विश्वसनीय 'सकेत ग्रन्थ' (Reference Book) के रूप मे इस कोश की उपयोगिता का भान विज्ञ विद्वान् स्वय कर लेगे। शायद यह हिन्दी साहित्य मे नई और पहली चीज है।

छन्द जैसे पारिभाषिक और सूक्ष्म विषय की अनेक गहन समस्याओ के सम्बन्ध मे 'अन्तिम बात' कह सकना असम्भव है। फिर वर्तमान वातावरण मे किसी नए दृष्टिकोण को प्रस्तुत करना और भी भयकर है। कहते है—'नूतनता खतरे से खाली नही होती'। सभव है मेरे दृष्टि-कोण से अनेक सुयोग्य विद्वान् सहमत न हो। उनकी सेवा मे मेरा नम्र निवेदन यह है कि मै उनके बहुमूल्य सुझावो का सदा स्वागत करूँगा और उनके प्रकाश मे अपनी ज्ञानपूर्ति करके उनका चिरऋणी रहूँगा। मै अपने को लक्षणकार नही मानता, ना ही छन्द शास्त्र का ज्ञाता होने का मुझे अभिमान है। मै तो छन्द का एक विद्यार्थी या अध्येता हूँ और इसी नाते से अपने अध्ययन और चिन्तन के परिणामो को हिन्दी पाठको के समक्ष रख रहा हूँ। इनसे यदि इस विषय के पठन-पाठन और मनन-चिन्तन मे कुछ सुकरता और तीव्रता मिल पाई तो मै अपने प्रयास को सफल समझूगा।

सच बात तो यह है कि इस पुस्तक मे मेरी चीज तो केवल मेरा परिश्रम ही है। शेष सामग्री तो उन अमर कलाकारो और छन्द साहित्य स्रष्टाओ की है जिनके सपर्क और अनुशीलन ने मुझे भी कुछ उन्मेष प्रदान किया है। एतदर्थ मै उन सबका आभारी हूँ जिन के भावो और वाणी के उद्धरणो से इस पुस्तक का कलवर सुसज्जित हो पाया है।

शिमला
जन्माष्टमी, १९५२

—रघुनन्दन

समर्पण—

छन्दशास्त्र के प्राचीन तथा अर्वाचीन आचार्यों
की पुण्य स्मृति मे—

—रघुनन्दन

विषय-सूची

भूमिका

१ छन्दों की उत्पत्ति

छन्दो की उत्पत्ति कब हुई ?—इस प्रश्न का 'भाषा की उत्पत्ति' के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है। मानव ने भाषा कब सीखी ? इस विषय पर विद्वानो ने अनेक कल्पनाए प्रस्तुत की है। इन्हे हम मुख्यतया दो विचार-धाराओ मे बॉट सकते हैं। पुराने लोगो के विचार मे भाषा की उत्पत्ति का स्रोत 'दैवी' है और आधुनिक प्राणी-शास्त्र एव भाषा-शास्त्र के तत्त्वज्ञ उसे 'ऐहिक' ही मानते है।

जो लोग भाषा की उत्पत्ति को दैवी स्रोत से मानते है, उनका विचार है कि सृष्टि के प्रारम्भ मे जब परमेश्वर ने मनुष्य को बनाया, तब उसी ने भाषा भी मनुष्यो को सिखा दी और मानव जीवन के लिए उपयोगी 'ज्ञान' भी मनुष्य को 'शब्दब्रह्म' या शब्दमय रूप मे ही दे दिया। ससार की विभिन्न जातियो मे 'ईश्वरीय ज्ञान' मानी जाने वाली सभी पुस्तके शब्दब्रह्म के भाषामय कलेवर मे ही गुफित हुई है।

इसके विपरीत आधुनिक जीव-वैज्ञानिक और भाषातत्वज्ञ यह मानते है कि मानव की सृष्टि किसी खास तौर पर अलग रीति से नही हुई है, अपितु वह सृष्टि-क्रम की साधारण शृङ्खला मे एक विकसित कडी मात्र है। अपने शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक विकास मे मानव पशु-जगत् से एक पग आगे मात्र है। इसी प्रकार भाषा मे भी वह विकास-क्रम की एक अगली सीढी मात्र को प्रकट करता है। भय, क्रोध, प्रेम, हर्ष आदि मनोवेगो के प्रदर्शन के लिए पशु जिन विशेष ध्वनियो का प्रयोग करते

उन्हीं से मानव ने भी बोलना सीखा है और उन्ही मे शनै शनै परिष्कार करते हुए क्रमश अपनी भाषा को सम्पन्न और समृद्ध बनाया है ।

उक्त दोनो ही विचारधाराए 'भाषा की उत्पत्ति' के प्रश्न पर मतभेद रखती हुई भी इस बात पर सहमत है कि मानवता और भाषा सहजात और समकालीन है । मानव के अवतरण के साथ ही भाषा का भी अवतार हुआ है । मूक मानवता की कल्पना आजतक किसी ने नही की । एक प्रकार से भाषा ही मानवता को पशुता से अलग करती है । शारीरिक गठन मे मानव और पशु समान है । मानव का मनोविकास भी तात्विक रूप मे पशुओ से भिन्न नही है । पशुओ मे भी मनोवेग पाये जाते है । सहज ज्ञान भी उनमे भरपूर है—शायद मानव से भी अधिक है, और कई विद्वानो के मत मे मनन, चिन्तन और निर्धारण की शक्तिया भी पशुओ मे पाई जाती है । केवल मनोभावो की अभिव्यक्ति—भाषा—मे ही मानव ने पशुओ से विशेषता प्राप्त की है । पशु भी मनोभावो की अभिव्यक्ति करते है, परन्तु उनकी भाषा अस्पष्ट, अव्यक्त और परिच्छिन्न है । अभिव्यक्ति के विकास की विशेषता ही मानवता की विशेषता है ।

पशु-पक्षियो की भाषा (जिससे मानव ने अपनी भाषा सीखी है), यद्यपि छन्दोमय तो नही होती, तथापि उसमे एक प्रकार से स्वर-सारस्य, लयसाम्य और नाद-माधुर्य आदि छन्द के कतिपय आधारतत्व बीजरूप से अवश्य पाये जाते है । प्रकृति के इस कलरवमय सगीत ने आदि मानव को अवश्य अपनी ओर बलवत् आकृष्ट किया होगा । आज भी मानव इस पर मुग्ध है । वस्तुत यही कलरव छन्दो का जन्मदाता है और इसी से पीछे सगीत शास्त्र की भी नीव पड़ी है ।

विद्वानो का यह भी अनुमान है कि आदिमानव की भी भाषा मे स्वर-सारस्य, लयसाम्य और नादमाधुर्य की प्रचुरता रही होगी और यह भी असम्भव नही कि कदाचित् मानव ने गद्य से पहले पद्यमयी बोली ही सीखी हो । इस अनुमान की पुष्टि मे एक हेतु यह भी दिया जाता है कि

आदिमानव ने पहले-पहल भाषा का प्रयोग केवल अपने अति उद्दीप्त और उत्कट मनोवेगो के प्रदर्शन के लिए ही किया होगा। गभीर विचार और तत्व-चिन्तन बहुत पीछे की अवस्थाएँ है। तीव्र भावावेश की अवस्था मे प्रयुक्त की जाने वाली भाषा अवश्य ही छन्दोमयी रही होगी, या कम-से-कम उसमे बल, मात्रा साम और लय आदि के साम्य की प्रचुरता अवश्य ही अधिक होगी। आज भी तीव्र और उत्कट भावोद्रेक की अवस्था मे हमारी भाषा स्वत ही लयात्मक प्रवाह मे फूट पडती है। प्रेम, करुणा, भय, क्रोध आदि की उत्कटता मे हम एक प्रकार से उन्माद की-सी अवस्था मे पहुँच जाते है और हमारी अभिव्यक्ति अपने आप छन्दोमयी हो जाती है। *

दूसरे, आजकल हमे 'सुगम' और 'स्वाभाविक-सी' प्रतीत होने वाली गद्यभाषा वस्तुत पद्य से अधिक जटिल है। गद्य की रचना के नियम, 'उसके वाक्यो मे शब्दो—कर्ता, कर्म, क्रिया, क्रियाविशेषण आदि—की अवस्थिति के नियम तथा सकीर्ण और मिश्रित वाक्य-विन्यास के नियम इतने अधिक, इतने जटिल और इतने सकीर्ण है कि गद्य को छन्द के समान स्वत प्रसूत (Spontaneous) नही माना जा सकता, नाही उसका अस्तित्व साधारणतया विकास की प्रारम्भिक दशा मे सम्भाव्य प्रतीत होता है। नि सन्देह ये सब बाते गद्य की उत्तरवर्ती अवस्था की द्योतक है। इस आधार पर यह कल्पना सर्वथा निर्मूल नही कि छन्दोमयी भाषा गद्य से अधिक प्राचीन है और गद्य का प्रादुर्भाव सम्भवत छन्दो से बहुत पीछे हुआ है।

---

* घाटे . वैदिक मीटर .—"The language of Nature clothes itself in metre"

पुन·—"Deep strong passions express themselves in metre"

कुछ भी हो, यह निर्विवाद रूप से स्पष्ट है कि छन्दो की उत्पत्ति इतनी ही पुरानी है जितना कि मानव और उसकी भाषा ।

२ छन्दों का प्रारम्भ

ऐतिहासिक दृष्टि से भी छन्द गद्य से अधिक प्राचीन है। मानव-साहित्य की प्राचीनतम रचना, ऋग्वेद, हमे छन्दो मे ही मिलती है। सम्भव है उस समय साधारण व्यवहार मे गद्य का प्रयोग भी होता हो, परन्तु इससे इतना तो स्पष्ट है कि कला की अभिव्यजना के लिए उस प्राग्-ऐतिहासिक काल मे छन्दो का ही प्रयोग होता था। विद्वानो का अनुमान है कि छन्दो का प्रयोग सम्भवत ऋग्वेद से भी पुराना है, कारण कि ऋग्वेद के छन्द छान्दस रचना की पर्याप्त विकसितावस्था के द्योतक है। अवश्य ही उस अवस्था तक पहुँचने से पहले छन्द-निर्माण के अनेक प्रयोग हुए होगे जो क्रमश विकसित होकर ऋग्वैदिक छन्दो की पूर्णता तक पहुँच पाये। इस विकास-शृङ्खला मे निश्चय ही सैकडो वर्ष लगे होगें। परन्तु ऋग्वेद से पूर्व के छन्दो के अध्ययन के लिए हमारे पास कोई मूर्त सामग्री विद्यमान नही है, इसलिए साधारणतया हमे ऋग्वेद को ही छन्दो के प्रयोग का आदिम प्रतिनिधि मानना पडता है।

ऋग्वेद से लेकर अब तक छन्दो का प्रयोग निरन्तर हो रहा है। केवल शुद्ध साहित्य या कविता के लिये ही नही, अपितु व्याकरण, कोश, धर्मशास्त्र, इतिहास, राजनीति, आयुर्वेद, ज्योतिष आदि पारिभाषिक विषयो के लिए भी छन्द का ही माध्यम अपनाया गया है। सस्कृत का प्राय सम्पूर्ण साहित्य और पाली प्राकृत अपभ्र श का अधिकाश साहित्य तथा मध्ययुगीन हिन्दी का प्राय समग्र साहित्य छन्दो मे ही रचा गया है।

३ छन्दो का विकास

अपने मूल रूप मे छन्द, वस्तुत, 'किन्ही छोटी-बडी ध्वनियो के व्यवस्थित सामजस्य' का ही नाम है। प्राकृतावस्था में यह सामजस्य

अवश्य ही स्वयजात या स्वत प्रसूत (Spontaneous) होगा ।* इसकी स्वरमाधुरी और लय पर आदिमानव अवश्य ही मुग्ध हुआ होगा । पीछे स्वत प्रसृति के अभाव मे भी मानव ने इसका अनुकरण करने मे अनेक सकाम चेष्टाएँ की होगी और वह एक सीमा तक उनमे सफल भी हुआ होगा । निश्चय ही इन सकाम चेष्टाओ और कृतक प्रयत्नो की शृङ्खला मे मानव ने इस ध्वनि-सामजस्य की प्राप्ति के लिए किन्ही खास नियमो की व्यवस्था का भी कुछ निर्धारण किया ही होगा ।

अनुमान है कि इस दिशा मे सबसे पहला नियम यह ठहराया गया होगा कि सामजस्य की प्राप्ति के लिए छन्द के भिन्न-भिन्न ध्वनिसमूह-खडो मे ध्वनियो का तोलमाप या वजन बराबर होना चाहिये । इसे हम ध्वनि-सतुलन का नियम कह सकते है । अब ध्वनियो के तोल वा वजन को मापने का उस समय एक ही तरीका हो सकता था—कि स्थूल रूप से प्रत्येक खड की ध्वनिया गिनती मे बराबर हो । फलत प्रारम्भिक छन्द जिनका प्रतिरूप हमे ऋग्वेद के छन्दो मे मिलता है, वस्तुत ध्वनियो या अक्षरो की गिनती के आधार पर ही रचे गये है । इनमे ध्वनि-सन्तुलन का आधार केवल अक्षर-सख्या है । अक्षर चाहे ह्रस्व हो या दीर्घ, ह्रस्वो की सख्या अधिक हो या दीर्घों की, कहा ह्रस्व हो, कहाँ दीर्घ—इन बातो का विचार वैदिक छन्दो मे नही किया गया । इनकी पाद-व्यवस्था भी ढीली है । ऋग्वेद मे साधारणतया तीन और चार पाद वाले छन्द हैं, परन्तु कही-कही एक, दो और पाच पाद वाले छन्द भी मिलते है । अनुक्रमणीकारो के अनुसार ऋग्वेद मे सात प्रधान छन्दो का

---

* इस स्वत प्रसृति का सकेत हमें ब्राह्मण ग्रन्थो की एक निरुक्ति से भी मिलता है । 'गायत्री' शब्द की निरुक्ति यो की गई है—'गायतो मुखादुदपतत्'—अर्थात् गाते हुए आदि मानव (ब्रह्मा ?) के मुख से अपने आप निकल पडी=गायत्री ।

प्रयोग हुआ है ।* उनके नाम ये है—गायत्री, उष्णिक्, अनुष्टुप् बृहती, पक्ति, त्रिष्टुभ् और जगती । इनमे गायत्री और उष्णिक् के तीन, पक्ति के पाच और शेष के चार पाद होते है । गायत्री के प्रत्येक पाद मे आठ अक्षर हैं, और इसमें कुल मिलाकर ८×३=२४ अक्षर होते हैं । उष्णिक् के तीनो पादो को मिलाकर कुल २८ अक्षर होते है—दो पाद आठ-आठ अक्षर के और एक पाद १२ अक्षर का । इस आधार पर इसके तीन भेद हो जाते है—(१) उष्णिक् (८ ८ १२), (२) पुर उष्णिक् (१२ ८ ८) और (३) ककुप् (८ १२ ८) । अनुष्टुप् भी आठ अक्षर का छन्द हैं, परन्तु इसके पाद चार होते है (कुल ८×४=३२) । बृहती चार पाद का ३६ अक्षरो का छन्द है जिसके तीन पादो मे ८-८ और एक मे १२ अक्षर होते है । यद्यपि इस आधार पर इसके चार भेद हो सकते हैं, तथापि ऋग्वेद मे केवल दो का ही प्रयोग मिलता है—८ ८ १२ ८ और १२ ८ ८ ८ । इस द्वितीय भेद को सतोबृहती कहते हैं । पक्ति आठ-आठ अक्षर के पाच पादो का छन्द है (८×५=४०) । इसका एक विषम भेद (१२ १२ ८ ८) प्रस्तारपक्ति के नाम से प्रयुक्त हुआ है । त्रिष्टुभ् ११ अक्षर के चार पादो का छन्द है (११×४=४४) । कही-कही इसके पाच पाद भी मिलते है ।† जगती के प्रत्येक पाद मे १२

---

* 'तस्मात् सप्त चतुरुत्तराणि छन्दासि इति ह्याम्नातम्' । "गायत्र्युष्णिगनुष्टुब्बृहतीपक्तित्रिष्टुब्जगतीत्येतानि सप्त छन्दासि । चतुर्विशत्यक्षरा गायत्री । ततोऽपि चतुर्भिरक्षरैरधिकाष्टाविंशत्यक्षरोष्णिक् । एवमुत्तरोत्तराधिका अनुष्टुबादयोऽवगन्तव्या" । —सायण ।

† पचपादी त्रिष्टुभ् का प्रयोग प्राय सूक्त के अन्तिम मन्त्र में हुआ है । पूरा सूक्त पचपादी त्रिष्टुभ् का कहीं नहीं मिलता । कहीं-कही पचम पाद चतुर्थ पाद की ही आवृत्ति मात्र होता है । वहाँ इसे अतिजगती या शक्वरी कहते हैं । जहां कही पचम पाद स्वतन्त्र है वहाँ इसे अलग एकपादी त्रिष्टुभ् माना गया है । ऐसे एकपादी त्रिष्टुभ् ऋग्वेद ५. ४१ २०, और

अक्षर होते हैं और यह चारपादी छन्द है (१२×४=४८)। इनके अतिरिक्त ऋग्वेद के सप्तम मंडल मे एक और छन्द का प्रयोग हुआ है जिसे विराज् कहा गया है। इसके दो ही पाद होते हैं और प्रत्येक पाद में १०-१० अक्षर हैं।*

इन सब छन्दो मे स्थूल रूप से पाद का आधार अक्षरो की गिनती ही है। परन्तु यह स्थूल नियम भी कही-कही पूरा नही बैठता। इसमें भी कही-कही अनेक अपवाद दिखाई देते हैं। उदाहरणार्थ प्रसिद्ध गायत्री मत्र के प्रथम पाद (तत्सवितुर्वरेण्यम्) मे आठ के स्थान पर केवल सात ही अक्षर है। इसी प्रकार कहीं-कही आठ के स्थान पर नौ अक्षर भी मिलते है और यह न्यूनाधिक्य प्रत्येक छन्द के सम्बन्ध मे पाया जाता है। पीछे के अनुक्रमणीकारो ने इन्हे निचृत (एकाक्षरहीन) और विराड् (दो अक्षर हीन) का नाम दिया है।† इसी प्रकार एकाक्षर अधिक को भूरिक् और दो अक्षर अधिक को स्वराड् कहते हैं। अनुक्रमणीकारो ने न्यूनाक्षर छन्दो को 'विच्छन्द' और अधिकाक्षर छन्दो को

---

६ ६३ ११ आदि स्थलों में प्रयुक्त हुए है।—मैकडानल वैदिक ग्रामर पृ० ४११।

अथर्ववेद (३ १५ ४) में षट्पादी त्रिष्टुभ् का भी प्रयोग मिलता है। शायद यह 'छप्पय' या षट्पदी छन्दो का सर्वप्रथम प्रयोग है।

* मैकडानल ने अनुक्रमणीकारों के नामकरण के आधार पर ऋग्वेद में कुल १८ छन्दो का प्रयोग निश्चित किया है। वे ये है—गायत्री, अनुष्टुप्, पक्ति, महापक्ति, शक्वरी, त्रिष्टुभ, जगती, द्विपदा विराज्, उष्णिक्, पुर उष्णिक्, ककुप्, बृहती, सतोबृहती, अतिशक्वरी, अत्यष्टि, प्रगाथ, ककुभ् प्रगाथ तथा बार्हत प्रगाथ।

† इसके अनुसार प्रसिद्ध गायत्री मत्र का छन्द 'निचृत गायत्री' है क्योकि इसके एक पाद में एक अक्षर कम है।

'अतिच्छन्द' का नाम दिया है। इस न्यूनाधिक्य का समाधान इस प्रकार से किया जाता है—छन्द तो लय के अनुसार चलता है और सहितापाठ मे प्रयुक्त शब्द व्याकरण की दृष्टि से शुद्धरूप मे दिये गये है। इसके अनुसार उक्त गायत्री मत्र के 'वरेण्यम्' (जो व्याकरण की दृष्टि से शुद्ध रूप है) को 'वरेणियम्' (जो छन्द की दृष्टि से शुद्ध है) करके पढने का विधान है। इसी प्रकार ७ १९ २ मे 'इन्द्र' शब्द को 'इन्दर' करेके पढने की व्यवस्था की गई है। यह बात पचासो मत्रो मे है। कही 'ज्येष्ठ' को 'ज्ययिष्ठ' और 'सख्याय' को 'सखिआय' और कही 'स्याम' को 'सिआम' और 'व्युषा' को 'वि उषा' करके पढने का विधान है।

इस प्रकार वैदिक छन्द किन्ही कडे नियमो मे बँधे हुए नही है। इनका प्रत्येक नियम प्राय सापवाद है। शायद इसीलिए पीछे के वैयाकरणो ने स्थान-स्थान पर 'छान्दस प्रयोग' का अर्थ ही 'नियम-शैथिल्य' किया है। जहा कही नियम मे शिथिलता मिली, उसे 'छान्दस' कहकर निपटा दिया है। 'छन्दसि सर्वे विधयो विकल्पन्ते' उनकी आम परिभाषा है। परन्तु ऐसा समझना भूल है। प्रत्येक विज्ञान के आविष्करणकाल मे इस प्रकार की नियम-निर्मुक्ति स्वाभाविक और अपेक्षित भी है। लक्षण और नियम तो वस्तुत लक्ष्य को देखकर बहुत पीछे बनते है। ये नियमशैथिल्य वस्तुत छन्दो के निर्माण मे नये-नये प्रयोगो की दिशा मे की जाने वाली सतत चेष्टाओ के स्वाभाविक परिणाम हैं। इन्ही तथाकथित अपवादो की तह मे पीछे के अनेक छन्दो के बीज विद्यमान है। पीछे के आचार्यों ने यही से प्रतीक लेकर अनेक नये छन्द गढे है और वेद के गायत्री आदि छन्द क्रमशः विकसित होकर पीछे सस्कृत मे 'केवल छन्द' न रह कर 'छन्दोजातिया' बन गये है जिनसे प्रस्तार की रीति से सैकडो नूतन छन्दो की सृष्टि हुई है। इसी नियम-शैथिल्य मे वस्तुत साधारण विकास के मूलतत्व सन्निहित है। नियमो का उल्लघन नि सन्देह प्रगति का प्रधान लक्षण है और नियमो का

अक्षरश पालन कट्टरता को उत्पन्न करके प्रगति का विघातक सिद्ध होता है ।

विकास की दृष्टि से वेद के मूल छन्द वस्तुत तीन ही है—गायत्री, त्रिष्टुभ् और जगती । गायत्री के अष्टाक्षरी तीन पादो मे एक पाद की वृद्धि करके जब उसे भी अन्य छन्दो की समानता पर लाया गया, तब वही अनुष्टुप् नाम से अलग छन्द गिना गया ।* वस्तुत वह गायत्री का ही परिवर्धित रूप है । सहिताओ मे गायत्री की प्रधानता है और ब्राह्मण ग्रन्थो की गाथाओ मे अनुष्टुप् की प्रचुरता मिलती है । ब्राह्मण ग्रन्थो का अनुष्टुप् वैदिक स्वरो से नियत्रित न होकर तालसगीत के अनुशासन मे बद्ध है । गाया जाने के कारण इसे गाथा कहते है । यही गाथा छन्द पीछे कालमात्रा से नियत्रित होकर सस्कृत, प्राकृत और अपभ्र श मे 'आर्या' कहलाया है । हिन्दी मे पहुँचकर यही दोहा बन गया है । इसी का विपरीत रूप सोरठा है । यही वैदिक अनुष्टुप् 'वर्णक्रम' से नियत्रित होकर सस्कृत मे श्लोक या अनुष्टुप् नाम से प्रचलित है । विचित्र बात यह है कि वर्णवृत्त बनकर भी यह 'गणो' के बन्धन मे निर्मुक्त है ।† वैदिक अक्षर सख्या (८×४) ही इसका प्रधान लक्षण है । हा, तोलपूर्ति के लिए पाचवा वर्ण लघु और छठा वर्ण गुरु रखने का ही इसमे विधान है ।‡ प्रयोग की दृष्टि से यही सबसे अधिक प्रयुक्त हुआ है । रामायण, महाभारत, पुराण, स्मृतियो आदि मे इसी की

---

* "गायत्रीं त्रिपदा सतीं चतुर्थेन पादेनानुस्तोभतीत्यनुष्टुप्"—निरुक्त में का ब्राह्मणग्रन्थ का उद्धरण ।

† बाबा भिखारीदास ने इसे 'मुक्तक समवृत्त' ही मानने का सुझाव दिया है ।

‡
पचम लघु सर्वत्र सप्तम द्वि-चतुर्थयो ।
गुरु षष्ठ तु पादानामन्येष्वनियमो मतः ॥

प्रचुरता है। वैयाकरणो, दार्शनिको और आलंकारिको ने इसी का मात्रिक रूप, आर्या, कारिका नाम से प्रयुक्त किया है।

इसी प्रकार वैदिक त्रिष्टुभ् (११×४) भी ब्राह्मण ग्रन्थो मे 'ताल' से नियन्त्रित होकर सस्कृत मे वर्णवृत्त के रूप में पहुँचा है। वर्णवृत्त बनकर भी इसने वैदिक स्वच्छन्दता को नही छोडा। पीछे का बेचारा लक्षण-आचार्य इसे किसी भी कडे नियम में नही बाध सका। सस्कृत में इसके दो रूप मिलते है—एक मे पाद का पहला अक्षर लघु और दूसरे में गुरु। इन्हे क्रमश उपेन्द्रवज्रा और इन्द्रवज्रा का नाम दिया गया हैं। परन्तु महाकवियो ने लक्षण-आचार्य के इस भेद को भी नही माना। वे यथारुचि इसका प्रयोग करते आये हैं—प्रथम पाद में यदि पहला अक्षर लघु है तो द्वितीय मे उन्होने गुरु रख दिया है, मानो वे तो इसे एक ही छन्द मानते है। हारकर लक्षण-आचार्य ने इस मिश्रण को 'उपजाति' का नाम दे दिया है। यह नाम पीछे हर प्रकार के 'छन्दसकर' के लिए प्रयुक्त हुआ है।

वैदिक जगती के भी इसी प्रकार से दो छन्द बने है—वशस्थ और इन्द्रवशा। इनमे भी पाद के पहले अक्षर के लघु (वशस्थ) और गुरु (इन्द्रवशा) होने का ही नियम है। पीछे के लक्षण-आचार्य ने इसे भी उपजाति कहकर जान छुडाई है। अनुष्टुप् के समान त्रिष्टुभ् और जगती छन्द भी प्राकृत और अपभ्र श में पहुँचकर अपने मात्रिक रूप मे वैतालिक बन गये है। शायद राजदरबारो के वैतालिक (भाट) इनका अधिक प्रयोग करते थे जिससे इनका नाम वैतालिक पड गया। इन्हे ही कई आचार्यो ने 'मागधिका' कहा है।

शेप वैदिक छन्द—उष्णिक्, बृहती, सतोबृहती, विराज्, प्रस्तार-पक्ति और शक्वरी आदि—विषम और अर्धसम छन्दो के प्रतिनिधि है। जहा दो पादो मे एक समान लक्षण मिला, वहा अर्धसम और जहा चारो पादो मे भिन्न लक्षण हुआ वहा विषम छन्द होते है। पिगल ने अर्धसम

छन्द केवल दस बताए हैं। हेमचन्द्र ने इनकी सख्या मे पुष्कल वृद्धि की है।*

पीछे के लक्षण-आचार्यों की प्रवृत्ति कुछ यह रही है कि प्रत्येक छन्द को समान नियमो मे जकड दिया जाय। वैदिक गायत्री के आठ-आठ अक्षरो के तीन पाद थे। और छन्दो के साथ समानता लाने के लिए जहा एक ओर इसमे एक और पाद की वृद्धि करके इसे पूरे चार पाद वाला छन्द अनुष्टप् बना दिया (यह प्रक्रिया वैदिक काल मे ही हो चुकी थी) वहा दूसरी ओर सस्कृत मे इसके २४ अक्षरो के पूरे चार पाद बना कर इसे छ अक्षरो के पाद वाला छन्द (पीछे छन्दोजाति) मान लिया गया। इसी प्रकार तीनपादी २८ अक्षर वाले उष्णिक् छन्द के भी सात-सात अक्षर के पूरे चार पाद बना दिये गये। पीछे यह उष्णिक् जाति बन गई।

पिगल ने अपने छन्द इसी ६×४ (वैदिक गायत्री का रूपान्तर) तनुमध्या छन्द से प्रारम्भ किये है। पिगल का सबसे बडा छन्द—अपवाह, २६ अक्षर का है। जयदेव (८०० ई०) भी छ अक्षरपादी छन्दो से प्रारम्भ करता है। जयकीर्ति (१००० ई०) केदार (११०० ई०) और हेमचन्द्र (११५० ई०) ने एकाक्षरा जाति से प्रारम्भ किया है। इससे स्पष्ट है कि छ अक्षर से कम पाद वाले छन्दो की सृष्टि बहुत पीछे हुई है। पिगल ने दडको का विशेष निरूपण नही किया। ये भी पीछे ही विकसित हुए है। भवभूति के दो-एक प्रयोगो को छोडकर सस्कृत साहित्य मे दडको का प्रयोग बहुत ही कम हुआ है। हा, हिन्दी मे ये प्रचुर मात्रा मे प्रयुक्त हुए है।

*** प्रयोग की दृष्टि से सस्कृत साहित्य मे अर्धसम छन्द प्राय तीन प्रयुक्त हुए है और विषम छन्द केवल एक। देखो—वेलकर,** J B B R A S 1948

यह बात भी ध्यान मे रखने योग्य है कि वैदिक छन्दो मे ध्वनिसतुलन की व्यवस्था केवल अक्षरो की सख्या के आधार पर थी । इसमे मात्रा (quantity) और लघु-गुरु अक्षरो की स्थिति के क्रम की ओर कोई ध्यान नही दिया गया । परन्तु यह स्पष्ट है कि केवल अक्षरो के सख्या-साम्य मात्र से अपेक्षित लय पैदा नही होती और लय की उत्पत्ति के बिना 'ध्वनिसामजस्य' या छन्द नही बनता । लयप्राप्ति के लिए वेद मे तो उदात्त आदि स्वरो से काम निकाल लिया जाता था ।* स्वर ह्रस्व है या दीर्घ इससे कोई विशेष अन्तर नही पडता । कारण कि उदात्त हो जाने से ह्रस्व ही दीर्घ का काम दे जाता था और दीर्घ भी अनुदात्त होने से लय मे बाधा नही कर सकता था । ब्राह्मण ग्रन्थो मे जो कतिपय छन्द प्रयुक्त हुए है, उनमे भी ध्वनिसतुलन का आधार अक्षरसख्या है और लय की उत्पत्ति वहा 'तालसगीत' के द्वारा पूरी की जाती थी । सस्कृत के छन्दो मे ध्वनिसन्तुलन की व्यवस्था का प्रधान आधार तो अक्षरसख्या ही रही, परन्तु लय की उत्पत्ति के लिए लघु और गुरु अक्षरो की स्थिति का क्रम नियत कर दिया गया । इस लघु-गुरु वर्णों के क्रम के स्थिरीकरण के लिए पिंगल ने तीन-तीन अक्षरो के त्रिक या गण बनाने की योजना प्रस्तुत की । ये गण—तीन अक्षरो की इकाई—वस्तुत सर्वग्राह्य हुए, कारण कि य क्रम की तीनो स्थितियो—आदि, मध्य और अवसान—को स्पष्टता से प्रकट कर देते है । तब से अब तक (एकाध अपवाद को छोड कर) सस्कृत और हिन्दी छन्दो का लक्षण केवल वर्ण सख्या के आधार पर नही अपितु इन्ही गणो के द्वारा बताया जाता है ।

सस्कृत काल मे छन्दो की सख्या मे भी यथेष्ट वृद्धि हुई । प्रयोग की दृष्टि से तो सम्पूर्ण साहित्य मे कुल १०० के लगभग छन्द मिलते हैं ।

---

*यही कारण है कि वैदिक स्वरो को 'गीतिस्वर' (pitch accent) माना जाता है । इतर भाषाओ के समान इसे आघात स्वर, (musical accent) नहीं माना गया ।

इनमे भी बार-बार दोहराये जाने वाले छन्द केवल २५ के लगभग है ।*
परन्तु लक्षण-आचार्यों ने एक पाद में अक्षरो की सख्या के आधार पर
उनके लघु-गुरु क्रम के वैविध्य से अनेक नये छन्दो के नाम गिनाये है ।
इन लोगो ने प्रत्येक सम्भव या सम्भाव्य क्रम के आधार पर प्रस्तार की
रीति से छन्दो की सख्या लाखो तक पहुँचा दी है । यह वस्तुत कोरी
कल्पना और थ्यूरी मे ही है, प्रयोग मे इन छन्दो का कही अस्तित्व नही
मिलता ।

इसके साथ ही वेद के किन्ही अनियमित छन्दो—'विच्छन्दो' और
'अतिछन्दो' (उष्णिक्, सतोवृहती आदि)—के आधार पर सस्कृत मे अर्धसम
और विषम छन्दो के अनेक भेद किये गये । इनका उल्लेख ऊपर हो
चुका है ।

सख्यावृद्धि के साथ सस्कृत मे छन्दो की लम्बाई मे भी क्रमश
वृद्धि होती गई । वेद और ब्राह्मण ग्रन्थो मे बडे-से-वडा पाद १२–१३
अक्षर का है, पिगल ने २६/७ अक्षर तक के पाद वाले छन्दो का वर्णन
किया है । जयकीर्ति, केदार भट्ट और हेमचन्द्र ने इससे भी अधिक अक्षरो
वाले छन्दो (दण्डको) का निरूपण किया है ।†

इधर सस्कृत के साथ-साथ देश मे प्राकृत साहित्य भी पनप रहा था ।
प्राकृत छन्द अपनी स्वतत्र पद्धति पर विकसित हो रहे थे । सस्कृत के
समान इन्हे लघु-गुरु के स्थिति क्रम (या गण योजना) के नियमो मे नही
बाँधा गया । ये वेदकालीन सरलता और प्रचुर स्वतन्त्रता से चल रहे थे ।
प्राकृत छन्दो की एक उल्लेखनीय विशेषता यह है कि इनमे पादव्यवस्था
का आधार अक्षरसख्या नही, अपितु मात्रासख्या थी । इनमे ध्वनि की
लघुतम इकाई वर्ण या अक्षर न होकर 'मात्रा' मानी गई । नि सन्देह

* देखो वेलकर J B B R A S ,1948

† सस्कृत के लक्षणकारो ने लगभग ३० दडको का निरूपण किया
है, यद्यपि प्रयोग में ४–५ से अधिक दृष्टिगोचर नही होते ।

ध्वनि-विश्लेषण की दिशा मे यह बात विकसित प्रगति की द्योतक है। इस मात्रा का आधार ध्वनि की ह्रस्वता या दीर्घता नही, अपितु वह 'समय' है, जो किसी ध्वनि के उच्चारण मे लगता है, इसीलिए इन्हे 'कालमात्रा' कहते है।

प्राकृत के अधिकाश छन्द मात्राओ की गिनती पर ही अवलबित है। कही-कहीं लय की प्राप्ति के लिए पादान्त या अन्य वर्णों में लघु-गुरु की स्थिति का स्थिरीकरण कर दिया गया है। ये मात्राप्रधान छन्द वस्तुत प्राकृतो की ही देन है। सस्कृत मे इनका प्रवेश प्राकृत प्रभाव के कारण से है। जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है, सस्कृत मे मात्रा छन्द बहुत ही कम प्रयुक्त हुए है। अपभ्र श मे भी मात्राछन्दो का ही अधिक प्रयोग उपलब्ध होता है।

हिन्दी मे अधिकाश छन्द प्राकृतो से आए है। इसी से ये मात्रा-प्रधान छन्द है। इनमे पादव्यवस्था मात्राओ की सख्या के आधार पर है और प्राकृत के समान ही कहीं-कही लय प्राप्ति के लिए पादान्त वर्णों मे लघु-गुरु का नियतीकरण कर दिया गया है। (जैसे चौपाई के अन्त मे गुरु-लघु ऽ। रखने का निषेध है।) यह ठीक है कि सस्कृत के वर्णप्रधान छन्द भी हिन्दी मे आए है, परन्तु उनका प्रयोग किन्ही लम्बे छन्दो—सवैया, कवित्त आदि—मे ही हुआ है। छोटे छन्दो का प्रयोग केशव आदि कई पुराने कवियो ने किया है सही, परन्तु उनका नाम और लक्षण सस्कृत से ही मागा हुआ है। आज भी मैथिलीशरण गुप्त, अयोध्यासिह उपाध्याय, रामनरेश त्रिपाठी और उनके सुपुत्र श्री आनन्दकुमार ('अगराज' कर्ता) आदि लब्धप्रतिष्ठ महाकवियो ने वार्णिक छन्दो का प्रयोग किया है, परन्तु यह भी सस्कृत के अनुकरण पर ही हुआ है। हाँ, कही-कही हिन्दी के कलाकारो ने कुछ स्वतन्त्रता लेकर किन्ही भुजग-प्रयात आदि वर्णवृत्तो के चार से अधिक पाद भी रख दिए है। यह स्तुत्य प्रगति अभी अधिक प्रचलित नहीं हुई।

हिन्दी के वर्तमान नए छन्दो पर अग्रेज़ी का प्रभाव भी पड रहा है। अग्रेजी के छन्द अधिकाश 'बलप्रधान' या स्वरप्रधान है। परन्तु अग्रेजी का स्वरसचार वैदिक स्वरो की भान्ति गीत्यात्मक न होकर बलप्रधान (Pitch accent) है। हिन्दी के अनेक नए लेखक अब ऐसे ही छन्दो का प्रयोग करने लगे है जिनमे ध्वनिसतुलन स्वरलहरी के आधार पर होता है। इनमे न अक्षरो की गिनती अपेक्षित है, न लघु-गुरु वर्णो का क्रम और नाही मात्राओ की सख्या से कुछ प्रयोजन है। ये एक प्रकार से लयात्मक रचना के निदर्शन है। कई लोग इन्हे 'स्वच्छन्द छन्द' कहते है और कई तो इन्हे छन्द-परिधि मे शामिल करने को ही तैयार नही। हमारे अपने विचार मे अभी इनकी स्थिति द्रवावस्था मे है और यह नई छन्द-पद्धति अभी प्रयोगावस्था मे ही चल रही है। प्रयोग बाहुल्य के द्वारा परिपक्वावस्था के आ जाने पर ही इन नए छन्दो का वैज्ञानिक रीति पर अध्ययन सम्भव हो सकेगा।

इस प्रकार छन्दो के विकास की परम्परा प्रकृति के दिव्य सगीत से प्रारम्भ होकर आज की दशा तक पहुँच पाई है। कौन कह सकता है कि यह परिपूर्ण हो गई है। निश्चय ही भविष्य मे यह अनेक अभिनव रूप धारण करेगी।

कहना न होगा कि भारतीय छन्दोविज्ञान ग्रीस, अरब, फारस और योरुप के छन्दोविज्ञान से कही अधिक प्रफुल्लित, अधिक व्यापक और अधिक सूक्ष्म है। इसमें ध्वनि का विश्लेषण इतना वैज्ञानिक है कि मात्रा और अर्धमात्रा तक का इसमे निरीक्षण विद्यमान है। इस सम्बन्ध मे श्री आर्नल्ड महोदय ने ठीक ही लिखा है—

"ऋग्वेद के छन्द वर्तमान योरुप के छन्दो से उद्देश्य के वैविध्य और रचना के औदार्य में बहुत उन्नत है। इनका उनसे वस्तुत वही सम्बन्ध

है जो साधारण देहाती गीतो का समृद्ध और अति सुन्दर पक्के रागो से होता है।"*

४. छन्दःसाहित्य की रूपरेखा

शास्त्रकार सदा कलाकार के पीछे आते है। कला का निर्माण वस्तुत कलाकार का काम है, और कलाकार की कला का सागोपाग विवेचन और वैज्ञानिक अध्ययन शास्त्रकार का ध्येय होता है। फिर जो कला जितनी अधिक उपयोगी होती है, उसका शास्त्रीय अध्ययन भी उतना ही पहले प्रारम्भ हो जाता है।

वेद की सहिताओ मे छन्दो के शास्त्रीय अध्ययन का कोई स्पष्ट उल्लेख नही मिलता। गायत्री और शक्वरी आदि एक दो छन्दो का नाम अवश्य मिलता है। इन छन्दो के नाम से अनुमान है कि इनका कोई विशेष लक्षण भी अवश्य ही स्थिर किया गया होगा, कारण कि लक्षण के आधार पर ही नाम रखा जाता है। लक्षण के बिना नाम का कोई अर्थ ही नही। इससे प्रतीत होता है कि सहिताकाल मे ही छन्दो के लक्षण और नामकरण की प्रक्रिया प्रारम्भ हो चुकी थी। ब्राह्मण ग्रन्थो मे लक्षण शास्त्र के सम्बन्ध मे स्पष्ट सकेत मिलते है।† इनमे अनेक छन्दो की निरुक्ति और लक्षणो के सम्बन्ध मे पर्याप्त ऊहापोह है। ब्राह्मण ग्रन्थो के बाद के साहित्य मे छन्दो के विवेचन के लिए नियम-पूर्वक अलग स्वतन्त्र अध्याय लिखे गए है। शाखायन श्रौतसूत्र, निदानसूत्र

---

* Arnold Vedic Metre—"The metres of the Rigveda stand high above those of modern Europe in variety of motive and in flexibility of form They seem, indeed, to bear the same relation to them as the rich harmonies of Classical Music to the simple melodies of the peasant"

† देखो वेबर (Weber) १५७।

और ऋक्-प्रातिशाख्य मे इस प्रकार के स्वतन्त्र अध्याय है। इस काल के लगभग ही छन्द भी व्याकरण आदि के समान अलग 'स्वतन्त्र शास्त्र' की पदवी ग्रहण कर चुका था और वेद के छ अगो मे इसकी गणना भी होने लग पडी थी।

छन्दो का विधिपूर्वक निरूपण हमे सबसे पहले पिगल के प्रसिद्ध वेदाङ्ग 'छन्द सूत्र' या छन्द शास्त्र मे मिलता है। जैसे व्याकरण मे पाणिनि को प्रथम आचार्य माना जाता है, वैसे ही छन्द मे आदि आचार्य की पदवी पिगल को दी जाती है। पिगल ने भी पाणिनि के समान ही वैदिक छन्दो का उल्लेख साधारण विधि से ही किया है, उसमे अधिक विस्तृत विवेचन सस्कृत के छन्दो का ही हुआ है।

जैसा कि ऊपर कहा गया है, पिगल ने छ अक्षरपादी छन्द 'तनुमध्या' से प्रारम्भ करके २६ अक्षरपादी तक के छन्दो का वर्णन किया है। एकाध को छोडकर दण्डको का विशेष उल्लेख पिगल मे नही मिलता। पाणिनि के प्रत्याहारो के समान पिगल ने लक्षणो की सुगमता के लिए लघु-गुरु अक्षरो की गिनती और क्रम को बताने के लिए दस चिह्न अक्षरो का प्रयोग किया है। इनमे 'ल' का अर्थ है 'लघु' और 'ग' का अर्थ है गुरु। शेष आठ अक्षरो को गण कहते है। प्रत्येक गण एक त्रिक प्रकट करता है, जिसमे लघु-गुरु वर्णों के आदि, मध्य, अवसान-सम्बन्धी क्रम की तीनो स्थितियो का बोध सुगमता से हो जाता है। उदाहरण के रूप मे 'म' का अर्थ है तीनो गुरु वर्ण (जैसे—जाते है) और 'न' का अर्थ है तीनो लघु वर्ण (यथा—पवन)। 'भ' का अर्थ है आदि गुरु और मध्य तथा अन्त मे लघु (यथा—आगम)। (इनका विशेष विवरण आगे देखिए।) पिगल की यह प्रक्रिया एकाध अपवाद को छोडकर प्राय सभी ग्रन्थकारो ने स्वीकार की है और आज तक बराबर व्यवहृत होती आ रही है। पिगल के नाम पर एक और ग्रन्थ 'प्राकृत पिगल' नाम से प्रचलित है। परन्तु यह स्पष्टत पिगल का नही है। यह बहुत पीछे की रचना है। विद्वानो ने इसे १४वी सदी की रचना माना है।

किया गया है। पीछे के हिन्दी के छन्दोग्रन्थो का प्रधान आधार प्राय यही ग्रन्थ हैं।

गगादास की 'छन्दोमजरी' भी इस विषय का प्रसिद्ध ग्रन्थ है। इनके अतिरिक्त भट्ट हलायुध की आचार्य पिंगल के 'छन्द शास्त्र' पर लिखी हुई विस्तृत एव प्रामाणिक टीका वस्तुत स्वतत्र ग्रन्थ का दरजा रखती है। पूना की भडारकर सस्था ने अपनी पत्रिका मे एक और अज्ञात लेखक का 'कवि दर्पण' प्रकाशित किया था[१] जिसमे आचार्य हेमचन्द्र को उद्धृत किया गया है। इनके साथ ही 'वृत्तदीपिका,' 'छन्द सार' आदि अन्य ग्रन्था का भी उल्लेख मिलता है।

हिन्दी मे भी अनेक छन्दोग्रन्थ लिखे गए है। ये प्राय प्राकृत पिगल, 'वृत्तरत्नाकर' और हेमचन्द्र के 'छन्दोऽनुशासन' से ही अपनी सामग्री लेते है। किसी विशेष मौलिकता के दर्शन इनमे नही होते।

हिन्दी मे महाकवि केशव के एक छन्दोग्रन्थ लिखने का उल्लेख मिलता है। परन्तु वह अभी प्रकाश मे नही आया।[२] चिन्तामणि त्रिपाठी का 'छन्दविचार', मतिराम का 'छन्दसार', भिखारीदास का

---

१ An B O R I, 1935-6

२ अनेक विद्वानो ने केशव की 'रामचद्रिका' को ही उसका 'छन्दोग्रन्थ' मान लने का सुझाव दिया है। परन्तु यह ग्राह्य नहीं हो सकता। 'रामचद्रिका' में विविध छन्दो के प्रयोग की बहुलता अवश्य है, परन्तु इसे 'लक्षण ग्रन्थ' नहीं माना जा सकता। केशव के एक छन्दोग्रन्थ लिखने के अनुमान की पुष्टि इस बात से भी होती है कि 'रामचद्रिका' में प्रयुक्त अनेक छन्दो के नाम ऐसे है जिनका उल्लेख अन्यत्र नहीं मिलता। 'तंत्री' मोहन और 'विजय' (सवैया) आदि नाम केशव क अपने हैं। ऐसे अनेक छन्दो का उल्लेख ला० भगवानदीन ने अपनी टीका में किया है। शायद ये नाम केशव के उल्लिखित (परन्तु अप्राप्य) छन्दोग्रन्थ में से हो।

'छन्दोऽर्णव', पद्माकर की 'छन्दोमजरी', गदाधर की 'वृत्तचद्रिका' और सुखदेव मिश्र का वृत्तविचार' आदि हिन्दी मे विशेष प्रसिद्ध छन्दो-ग्रन्थ है ।

इन पुराने ग्रन्थो के आधार पर आधुनिक काल मे भी कतिपय छन्दोग्रन्थ लिखे गए है । उनमे से विशेष उल्लेखनीय ये है —

श्री ज्वालास्वरूप का 'रुद्रपिगल', श्री बलवान् सिह की 'चित्रचद्रिका' और श्रीधर का 'पिगल'—ये तीन ग्रन्थ सन् १८६९ मे प्रकाशित हुए । सन् १८७५ मे कन्हैयालाल शर्मा ने 'छन्दप्रदीप' लिखा । हृषिकेश भट्टाचार्य का 'छन्दोबोध' (१८७७), उमरावसिंह का 'छन्दोमहोदधि' (१८७८), रामप्रसाद का 'छन्दप्रकाश' (१८९१) इस विषय की अन्य रचनाएँ है । ये सब प्राय साधारण कोटि के ग्रन्थ है । छन्दो का विधि-पूर्वक विस्तृत निरूपण हमे श्री जगन्नाथ प्रसाद 'भानु' के 'छन्द प्रभाकर' (१८९४) में मिलता है । इसके बाद रामकिशोर का 'छन्दभास्कर' (१८९५), गदाधर की 'छन्दोमजरी' (१९०३ द्वितीयावृत्ति) और गिरिवरस्वरूप का 'गिरीश पिगल' (१९०५) प्रकाश मे आए । हरदेवदास का 'पिगल' (१९०६) भी इस विषय की उल्लेखनीय रचना है । इनके अतिरिक्त श्री जगन्नाथदास 'रत्नाकर' ने 'घनाक्षरी नियम रत्नाकर' (१८९७) नाम से केवल घनाक्षरी छन्दो का विवेचन किया है जो अपने-आप मे पूर्ण और प्रामाणिक होने पर भी लक्षणग्रन्थ के रूप मे वस्तुत अपूर्ण है । इसके बाद केवलराम शर्मा का 'छन्दसार-पिगल' (१९१६) और नारायणप्रसाद का 'पिगलसार' (१९२२) प्रकाशित हुए । साथ ही विजावर (बुन्देलखड)-नरेश के राज-कवि श्री बिहारीलाल ब्रह्मभट्ट ने अपने 'साहित्यसागर' (१९३५[?]) के प्रथम भाग मे छन्द के विषय पर भी तीन तरग (२,३,४) लिखे है, जिनमे मौलिकता का अभाव और प्रथा-पालन की मनोवृत्ति की ही प्रधानता

दीखती है ।[1] सन् १९३३ मे श्री रघुबरदयाल का 'पिगलप्रकाश' नाम से एक और ग्रन्थ प्रकाशित हुआ, जो विशेष रूप से उल्लेखनीय है । इसमे छन्दो के निरूपण मे कुछ-कुछ नवीन शैली के दर्शन होते है । श्री रामनरेश त्रिपाठी की 'पद्यरचना' भी इस विषय की अच्छी पुस्तक है ।

इन सबमे से जगन्नाथ प्रसाद 'भानु' का 'छन्द प्रभाकर' ही वस्तुत उपादेय और विस्तृत छन्दोग्रन्थ है, जो अपनी अनेक विशेषताओ के कारण पिछले ६० वर्ष से खूब सर्वप्रिय हो रहा है । वस्तुत यह समाहार ग्रन्थ है और प्राचीन ग्रन्थो के आधार पर लिखा गया है । हिन्दी मे प्रयुक्त प्राय सभी छन्दो का इसमे समावेश है ।

वर्तमान मे और किसी विशेष उल्लेखनीय छन्दोग्रन्थ की रचना नही हुई । हाँ, कतिपय पाठ्य पुस्तको के रूप मे लघु पुस्तिकाएँ अवश्य लिखी गई है, जो वस्तुत उक्त 'छन्द प्रभाकर' की ही ऋणी है ।

कहना न होगा कि हिन्दी के प्राय सभी ग्रन्थ 'निरूपण ग्रन्थ' है, जो प्राय सस्कृत की पुरानी शैली के अनुकरण पर ही लिखे गए है । इनके निरूपण मे न कोई मौलिकता है और न प्रतिपादन मे कोई नवीनता । छन्द शास्त्र के पारिभाषिक काठिन्य को दूर करने की भी किसी चेष्टा के इनमे दर्शन नही होते । ऐतिहासिक विकास की दृष्टि से छन्दो का आलोचनात्मक विवेचन और वैज्ञानिक पद्धति पर इनका अध्ययन अभी हिन्दी मे नही हो पाया है ।

५. छन्दो की उपादेयता

छन्द प्रकृति की वाणी है और शायद आदि मानव की आदि अभिव्यक्ति का आदिम माध्यम है । छन्द का अद्भुत आकर्षण सबके अनुभव

---

१ आधुनिक काल के छन्दोग्रन्थो की उक्त सूचना के लिए लेखक डॉ० माताप्रसाद गुप्त की प्रसिद्ध पुस्तक 'हिन्दी-पुस्तक-साहित्य' का विशेष ऋणी है ।

की वस्तु है । मानव ही क्या, पशु-पक्षी और साँप तक भी इसकी लय पर मुग्ध हो जाते है । छन्द ही सगीत की योनि है और छन्द ही काव्य की जान है । छन्द के कलेवर मे गुम्फित भाव सहस्रो श्रोताओ को मत्रमुग्ध-सा बना देते है । छन्द का यह हृदयग्राही प्रभाव आज से नही, अति प्राचीन काल से बराबर चला आ रहा है ।

छन्द का प्रभाव हृदय तक ही सीमित हो, यह बात नही । मानव के मस्तिष्क के विकास की पूर्णता मे भी छन्दो का उपयोग विज्ञान-सम्मत है । बचपन मे जो बच्चे अधिक छन्द कण्ठस्थ करने का अभ्यास कर लेते है, उनकी बुद्धि अधिक तीखी और पैनी हो जाती है । छन्द अनायास ही—खेल-कूद मे ही—याद हो जाते है और चिरकाल तक याद रहते है । इससे स्मरण करने और स्मरण रखने की शक्तियो को अद्भुत पुष्टि मिलती है । मस्तिष्क को तेज करने के लिए छन्द वस्तुत एक प्रकार से शारण का काम देते है ।

साहित्य की दृष्टि से छन्दोबद्ध साहित्य जहाँ अधिक रुचिर और चमत्कारपूर्ण होता है, वहाँ वह अधिक दीर्घजीवी भी हो जाता है । विद्वानो का अनुमान है कि इसी कारण से वैदिक काल की कोई भी गद्य-रचना हम तक नही पहुँच पाई और छन्दोबद्ध होने के कारण ही वेद इतने दीर्घ-जीवी रह सके है ।[1] इसी दृष्टि से प्राय सभी प्राचीन भारतीय साहित्य-कारो और शास्त्रकारो ने छन्दो का आश्रय लिया है । धर्मशास्त्र, फिला-सफी, व्याकरण, कोश, अलकार, कथा-साहित्य, पुराण, महाभारत, रामायण, इतिहास, अर्थशास्त्र आदि सभी विषयो को छन्दो मे ही लिखा गया है । ऐसा प्रतीत होता है कि छन्दो की इस क्रियात्मक उपयोगिता

१ देखो श्री घाटे—On Vedic Metre, P 182 "The credit of preserving without serious corruption the Vedic texts may be largely due to the fact that they are in a fixed metrical form."

का भान भारतीयो को बहुत पहले से था । 'छान्दोग्य उपनिषद्' मे एक रूपक के द्वारा इस भाव को यो प्रकट किया गया है[1]—"देवताओ ने मौत से डरकर अपने-आपको (अपनी कृतियो को) छन्दो मे ढाप लिया । मौत से आच्छादन के कारण ही छन्दो को 'छन्द' (छद्=आच्छादने) कहते है ।" छन्द की इसी प्रकार की एक और व्युत्पत्ति भी दी गई है—'अपमृत्यु वारयितुमाच्छादयतीति छन्द' (सायरण)—कलाकार और कलाकृति को छन्द अपमृत्यु (शीघ्र मृत्यु) से बचा लेते है ।

स्थिरजीविता के साथ ही छन्दोबद्ध साहित्य का मूल पाठ भी गद्य की अपेक्षा अधिक शुद्ध रहता है । उसमे प्रक्षेप या मिलावट की कम गुन्जाइश है । यदि कही कुछ प्रक्षेप की आशका हो भी जाय तो नियत और निश्चित अक्षरो मे बँधा होने के कारण छन्द को गद्य की अपेक्षा अधिक प्रामाणिकता और विश्वसनीयता के साथ शुद्ध किया जा सकता है । छन्दो की इस उपयोगिता का उल्लेख भी प्राचीन भारतीयो ने किया है । आरण्य काड मे लिखा है[2]—"छन्द मूल पाठ को पाप-कर्म (मिलावट) से बचा लेते है ।" किसी पुस्तक के पाठ मे मिलावट करके उसे भ्रष्ट करना नि सन्देह पाप-कर्म है और छन्द विशेष सीमा तक पाठ को इस दोष से बचाये रखते हैं ।

आज के कलाकार के लिए भी छन्दो का ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है । आज के युग मे स्वत प्रसृति के अभाव मे भावुक कवि के लिए छन्द शास्त्र ही एक-मात्र अवलम्ब है । जैसे भाषा-सम्बन्धी शुद्धाशुद्ध विवेक व्याकरण के बिना नही हो सकता, वैसे ही छन्द-सम्बन्धी शुद्धाशुद्ध विवेक छन्द शास्त्र के बिना सम्भव नही ।

---

१ छा० उप० १ ४ २ "देवा वै मृत्योर्बिभ्यतस्त्रयीं विद्या प्राविशन् । ते छन्दोभिरात्मानमाच्छादयन् । यदेभिराच्छादयँस्तच्छन्दसा छन्दस्त्वम्" ।

२ छादयन्ति ह वा एन छन्दासि पापात्कर्मण.'—ऋग्वेद १ १ १ के भाष्य में सायण द्वारा उद्धृत ।

आज के समालोचको और सम्पादको के लिए भी इस शास्त्र का परिज्ञान अनिवार्य रूप से आवश्यक है। हिन्दी का पुराना साहित्य प्राय सारा-का-सारा छन्दो मे ही लिपिबद्ध हुआ है। आठवी सदी से लेकर उन्नीसवी सदी तक के हमारे साहित्य की विपुल राशि छन्दो मे ही मिलती है। इनके मूल पाठो के विश्वसनीय सस्करण अभी योग्य सम्पादको की प्रतीक्षा मे है। सम्पादन-कला के आधुनिक सिद्धान्तो के अनुसार इन पुराने ग्रन्थो का सम्पादन और इनके मूल पाठ का पुनर्निर्माण छन्दोज्ञान के बिना नितान्त असम्भव है।[1] छन्दो के ज्ञान के बिना न तो हम इन महान् कलाकारो

---

१ हिन्दी के सम्पादकीय वैदुष्य के लिए यह कोई गौरव की बात नहीं कि आजकल हिन्दी में प्रकाशित प्राय सभी काव्य-ग्रथ और छोटे-मोटे कविता-सग्रह भ्रष्ट पाठो से भरे पडे है और किन्ही भी दो प्रतियो का पाठ आपस में नहीं मिलता। निश्चय ही यह सपादकीय उत्तरदायित्व की अवहेलना है, जिसका एक आधार छन्दोज्ञान की ऊनता भी है। आधुनिक कवि या कलाकार का छन्द शास्त्र से अनभिज्ञ होना क्षम्य हो सकता है, परन्तु आधुनिक सम्पादक का इस ज्ञान से वचित रहना बुरी तरह खलता है। पुराने पाठो के 'स्थिरीकरण' में 'छन्द का अनुरोध' सर्वप्रथम आधार है। हस्तलिपियो के 'बहुपाठ' की साक्षी भी इसके आगे अनादरणीय है। यह स्मरण रखना चाहिए कि मध्ययुगीन लिपिकरो ने हमारे साहित्य की रक्षा में बहुत बडी सहायता की है। उनका परिश्रम, त्याग और तपस्या भी सराहनीय है। उनकी इन अनुपम सेवाओ के लिए हमें अवश्य ही उनका कृतज्ञ और आभारी होना चाहिए। परन्तु इसके साथ हमें यह भी न भूलना चाहिए कि ये लोग कोई बडे विद्वान् या आलोचक नहीं थे। इन पुराने अर्धशिक्षित लिपिकरो पर आवश्यकता से अधिक विश्वास करके कवि के असल मूल पाठ की हत्या नहीं होनी चाहिए। कवि का सिद्धान्त तो यह होता है—भाषा भले ही बिगड़ जाय, पर छन्द की लय न बिगड़ने पाय—कवियो ने सहस्रो

की क्षमता का मूल्याकन कर सकते है और न इनके पाठ का ठीक सशोधन और सम्पादन कर सकते हैं ।

उपसंहार

कहना न होगा कि हिन्दी में छन्द शास्त्र का अध्ययन और विवेचन अभी तक विद्वानो की उपेक्षा का भाजन बना हुआ है । शायद हिन्दी के समालोचक और सम्पादक छन्दोज्ञान को अपनी शिक्षा और सज्जा का आवश्यक अङ्ग नही गिनते । कदाचित् इसका कारण छन्द शास्त्र की पारिभाषिकता और कुछ कठिनता भी हो । परन्तु कारण चाहे कुछ भी हो, इस शास्त्र की उपेक्षा हिन्दी वैदुष्य का प्रौढता और गम्भीरता के मार्ग मे एक बुरी तरह से खटकने वाली बाधा है, जिसे दूर किये बिना गम्भीर विद्वत्ता सम्भव नही ।

मै आशा करता हूँ कि मेरी यह विनम्र प्रार्थना और हिन्दी-छन्दो का यह सक्षिप्त अध्ययन उदीयमान हिन्दी वैदुष्य को इस उपेक्षित किन्तु अत्यन्त अपेक्षित एव उपादेय विषय का और अधिक गहरा निरीक्षण करने मे अवश्य कुछ न कुछ सहायता प्रदान कर सकेगा ।

—रघुनन्दन

स्थलो पर छन्द की रक्षा के लिए भाषा को बिगाडा है । फिर उन्हीं कवियो के असल मूल पाठ के स्थिरीकरण में छन्द की अवहेलना करना नि.सन्देह आधुनिक सम्पादन-कला के सिद्धान्तो के विरुद्ध जाना है ।

हिन्दी छन्दःप्रकाश

प्रथम अध्याय

१. छन्दःशास्त्र की परिभाषाएँ

छोटी-बडी ध्वनियो का तोल-माप मे बराबर होना छान्दस रचना का मूल आधार है। ध्वनियो को बराबर करने के विशेष नियम है। इन नियमो मे बँधी हुई ध्वनियाँ ही लय उत्पन्न कर सकती है और इन्ही नियमो मे आबद्ध रचना को छन्द कहते है। ध्वनि-सन्तुलन-व्यवस्था के इन्ही विशेष नियमो को छन्द शास्त्र की परिभाषाएँ कहते है। इस शास्त्र को समझने के लिए इनका परिज्ञान अत्यन्त उपयोगी है। इन्हे जाने बिना छन्द शास्त्र मे न प्रवेश हो सकता है, न गति। छन्द के जिज्ञासु को इन्हे भली प्रकार बुद्धिस्थ कर लेना चाहिए।

प्रारम्भ से ही मानव अपने मनोभावो की अभिव्यक्ति के लिए प्रधानतया तीन शैलियो का प्रयोग करता आया है—गद्य, पद्य और गीत। सीधी और खुली भाषा को गद्य कहते है। नियमित एव सन्तुलित पादबद्ध रचना को पद्य तथा गाई जाने वाली भाषा को गीत कहते है। पद्य या पादबद्ध को ही छन्द कहा जाता है। अत छन्द के ज्ञान के लिए सबसे पहले 'पाद' को समझ लेना बहुत आवश्यक है।

पाद का लक्षण—पाद छन्द की उस इकाई का नाम है जिसमे अनेक छोटी-बडी ध्वनियो का सन्तुलन किया जाता है। यह एक प्रकार से छन्द का 'सन्तुलित खण्ड' है, जिसके आधार पर शेष खण्डो का निर्माण किया जाता है। पाद ही वस्तुत छन्द की योनि है जिसमे छन्द का लक्षण चरितार्थ होता है। पाद मे चरितार्थ लक्षण ही प्राय छन्द का लक्षण

होता है । पाद के लक्षण की भिन्नता के कारण ही छन्द की भिन्नता मानी जाती है । जिस प्रकार साँचे मे ढली हुई ईटे एक आकार-प्रकार की बन जाती है, उसी प्रकार पाद भी एक साँचा है जिसमे सन्तुलित हुई ध्वनियाँ एक आकार-प्रकार और एक तोल-माप की बन जाती है । इस आधार पर छन्द शास्त्र मे पाद एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण इकाई है, जिसकी बनावट को समझने-समझाने के लिए ही शेष छान्दस्-परिभाषाओ की सृष्टि हुई है ।

साधारणतया छन्द के चार पाद होते है । कही-कही एक, दो, तीन, पाच, छ या इससे भी अधिक पाद हो जाते है । किसी छन्द के चाहे जितने भी पाद हो, इसका योनिभूत खड ही पाद कहलाता है । खडे होने के आधार को ही पाद या पाँव कहते ह—फिर चाहे किसी के दो पैर हो (यथा मनुष्य) या चार (जैसे गौ आदि) या छ (यथा भ्रमर आदि) इत्यादि । इसी प्रकार छन्द की स्थिति के आधारभूत अश को ही पाद कहा जाता है । पद और चरण आदि पाद के ही नामान्तर है ।

ध्वनि का स्वरूप—विशेष प्रकार से सन्तुलित ध्वनि-समूह को ही पाद कहते है—यह ऊपर बताया गया है । अब ध्वनि के स्वरूप को भी समझ लेना चाहिए । जैसे छन्द के तोल की सबसे छोटी इकाई 'पाद' है, वैसे ही पाद की सबसे छोटी इकाई को 'ध्वनि' कहते है। ध्वनि, आम तौर पर, 'आवाज' (या Sound) को कहा जाता है । छन्द शास्त्र मे 'एक काल मे उच्चरित स्वर' को ध्वनि माना जाता है । छन्दो की व्यवस्था के लिए ध्वनि के दो रूप माने गए है—अक्षर या वर्ण (Syllables) और मात्रा (Quantity) । ध्वनि के इन दो रूपो के आधार पर ही ध्वनि-सतुलन-व्यवस्था के भी दो रूप हो गए है । कही वर्णों के अनुसार और कही मात्राओ के अनुसार पाद बनाये जाते है । अत वर्णों और मात्राओ की परिभाषा को भी समझ लेना चाहिए ।

वर्ण का लक्षण—एक स्वर वाली ध्वनि को वर्ण कहते है, फिर

चाहे वह स्वर ह्रस्व हो या दीर्घ। इस हिसाब से 'अ' और 'आ' छन्द-शास्त्र मे एक-एक वर्ण माने जाते है। यद्यपि 'अ' के उच्चारण से 'आ' के उच्चारण मे काल और लम्बाई की मात्रा दुगुनी है, तथापि वर्ण-सख्या मे ये दोनो ही एक-एक वर्ण माने जाते है। साथ ही वर्ण-सख्या मे स्वर के साथ मिले हुए व्यजनो पर भी विचार नही किया जाता।[1] इसके अनुसार 'क', ऋ', 'का', 'क्या', 'क्यो', 'ऋया' आदि सभी एक-एक वर्ण गिने जाते है, यद्यपि इनके साथ एक से अधिक व्यजन भी मिले हुए है। इस प्रकार वर्ण की परिभाषा यही है कि ह्रस्व-दीर्घ आदि मात्राओ और साथ जुडे हुए व्यजनो के विचार के बिना एक स्वर वाली ध्वनि को वर्ण कहते है।

मात्रा का लक्षण—किसी ध्वनि के उच्चारण मे जो काल लगता है उसकी सबसे छोटी इकाई को मात्रा कहते है। जैसे 'अ' के उच्चारण की अपेक्षा 'आ' के उच्चारण मे दुगुना समय लगता है। इससे समय के आधार पर 'अ' मात्रा है, परन्तु 'आ' को हम दो मात्राएँ गिनते है। इस हिसाब मे सारे ही ह्रस्व स्वरो की एक मात्रा होती है और दीर्घ स्वरो की दो-दो मात्राएँ मानी जाती है। मात्राओ की गिनती मे भी व्यञ्जनो को नही गिनते, स्वरो की ही मात्राएँ गिनी जाती है। जैसे अ, क, ऋ, ऋच आदि सभी एक-एक मात्राएँ है। आ, का, क्या, प्या, आदि सभी की दो-दो मात्राए है। 'राजा' मे चार और 'ज्ञान' मे तीन मात्राएँ है।

---

१ इसका कारण यह है कि व्यजन की अपनी कोई ध्वनि नही होती। वह केवल किसी स्वर के साथ मिलकर ही ध्वनि की 'व्यक्ति' मात्र करता है। उसे व्यजन कहते ही इसलिए है कि वह ध्वनि का व्यजक है, स्वय ध्वनि नहीं। बिना स्वर के मेल के व्यजन का उच्चारण हो ही नहीं सकता। अत स्वर को ही ध्वनि माना गया है कारण कि ध्वनि-विज्ञान मे स्वर की (स्व+र=स्वय राजते) ही स्वतन्त्र सत्ता है।

वर्णों और मात्राओ की गिनती मे स्थूल भेद यही है कि वर्ण सस्वर अक्षर को और मात्रा केवल ह्रस्व स्वर को कहते हैं । हल् व्यञ्जनो की गिनती न वर्णों मे की जाती है और न मात्राओ मे ही । 'श्रीमान्' और 'महान्' मे वर्ण तो दो-दो है, पर मात्राएँ क्रमश चार और तीन है । इसी प्रकार

'अनुजबधू भगिनी सुतनारी'

इस पाद मे वर्ण तो १२ है परन्तु मात्राएँ १६ है । छन्द के विद्यार्थियो को वर्ण और मात्रा गिनने का विशेष अभ्यास कर लेना चाहिए ।

लघु और गुरु का विचार—वर्णो और मात्राओ का आधार स्वर है । स्वर दो प्रकार के है—ह्रस्व या लघु और दीर्घ या गुरु । इससे वर्णो और मात्राओ की गिनती के लिए पहले इन स्वरो की परिभाषा को भी समझ लेना चाहिए । छन्द शास्त्र मे ह्रस्व को लघु और दीर्घ को गुरु कहते है । छन्द शास्त्र मे प्लुत को भी गुरु ही गिनते है । इनकी विशेष परिभाषा इस प्रकार है —

लघु—(१) ह्रस्व स्वर और उन से मिले हुए व्यञ्जन (चाहे जितने भी हो) लघु कहे जाते है । अ, इ, उ, ऋ, ये ह्रस्व स्वर हैं । यथा क, त्य, त्र्य, स्थ्य आदि सब लघु वर्ण है । 'क्रय' और कृषि मे दोनो अक्षर लघु है । इसी प्रकार 'विकच कमल नयन' मे के सभी वर्ण लघु है ।

(२) हिन्दी-छन्दो मे अर्ध बिन्दु (ँ) वाले ह्रस्व स्वर भी लघु माने जाते है । जैसे 'विहँसि' मे 'हँ' लघु है । इसी प्रकार 'सँग' मे 'सँ' लघु है ।

(यदि 'विहसि' और 'सग' हो तो 'ह' और 'स' गुरु माने जायँगे)

गुरु—(१) दीर्घ स्वर और उनसे मिले हुए व्यञ्जनो को भी गुरु कहते है । आ, ई, ऊ, ॠ, ये दीर्घ स्वर है । राजा, क्या, दीदी, कूकू स्थ्या आदि सभी गुरु वर्ण है ।

(२) सयुक्त स्वरएव तत्सम्बद्ध व्यञ्जनो को भी गुरु मानते है ।

ए, ऐ, ओ, औ—ये सयुक्त स्वर है। जेते, तेते, को, कौ, धौ आदि सभी गुरु है।[1]

---

१ सस्कृत के वैयाकरणो और छन्द-आचार्यों ने ए ऐ ओ औ इन सयुक्त स्वरो को गुरु ही माना है। (एचा ह्रस्वाभावात्)। सस्कृत के अन्धानुकरण पर हिन्दी के छन्द-लेखक भी इन्हे गुरु ही कह देते है। परन्तु हिन्दी के महाकवियो के छन्दो का अनुशीलन करने पर यह बात भली भाँति स्पष्ट हो जाती है कि उन लोगो ने एचो के ह्रस्व रूप भी माने है। हिन्दी-छन्दो में लघु-गुरु का निर्धारण वस्तुत उच्चारण-काल के आधार पर होता है। यदि उच्चारणकाल निर्बल होकर एक मात्रिक हो तो 'एच्' अवश्य लघु गिने जायँगे। सस्कृत के छान्दसो ने इतना सूक्ष्म पर्यवेक्षण नहीं किया। उन्होने 'ध्वनि-तत्त्व' को प्रधानता दी है और 'काल-तत्त्व' की उपेक्षा की है। परन्तु हिन्दी के छन्दो में सर्वत्र 'काल-तत्त्व' का ही आधार लिया गया है। हिन्दी साहित्य मे इस प्रकार के दो-चार नहीं सैकडो और सहस्रो उदाहरण मिलते है जिनमें ए ऐ ओ औ का एकमात्रिक ह्रस्व प्रयोग हुआ है—

'अवधेस के बालक चारि सदा, तुलसी मन-मदिर में बिहरै' (तुलसी)

आठ सगण के इस दुर्मिल सवैये में रेखाकित 'के' ह्रस्व है। इसे एक-मात्रिक ह्रस्व की तरह पढने से ही लय और लक्षण ठीक बैठते है। इसी प्रकार रसखान के

'मानुष हौं तो वही रसखानि बसौं ब्रज गोकुल गाँव के ग्वारन'

इस आठ भगणो के सवैये में रेखाकित 'तो' और 'के' ह्रस्व है। इनके अतिरिक्त शेष जितने एच् प्रयुक्त हुए है, वे सब गुरु है। इस आधार पर यह मानना पडता है कि हिन्दी के छन्दो में एचो के ह्रस्व और दीर्घ दोनो रूप प्रचलित है। और यह बात हिन्दी में प्राकृत छन्दो से आई है सस्कृत से नहीं। आचार्य हेमचन्द्र ने (१६) में 'एदोतौ पदान्ते प्राकृते ह्रस्वौ वा' लिखकर इसका समर्थन किया है।

(३) अनुस्वार वाले सभी स्वर और तत्सयुक्त व्यजन भी गुरु होते है। चद्र मे 'च', 'चाद' मे 'चा', 'इदु' मे 'इ' और 'स्यो' आदि सब गुरु वर्ण है। अर्ध विदु वाले दीर्घ और सयुक्त स्वर भी गुरु ही माने जाते है।

(४) विसर्गान्त सभी वर्ण गुरु होते है। दु ख मे 'दु' और अत तथ' 'विशेपत' मे 'त' गुरु है।

(५) एक शब्द मे किसी द्वित्व या सयुक्त अक्षर से पहले का लघु अक्षर भी—यदि उस पर अधिक बल या भार पडे तो—गुरु मान लिया जाता है। यथा 'कुत्ता' मे 'कु' गुरु है। इसी प्रकार 'दुष्ट' मे 'दु' और 'सत्य' मे 'स' गुरु अक्षर हैं।

(क) इस सम्बन्ध मे यह बात विशेष रूप से ध्यान मे रखने योग्य है कि सस्कृत के समान हिन्दी मे यह नियम 'पादव्यापी' नही

यह अलग बात है कि देवनागरी लिपि में एचो के अलग ह्रस्व चिह्न न होने के कारण इनके ह्रस्व रूपों को भी एक समान ही लिख दिया जाता है, परन्तु यह याद रखना चाहिए कि छन्द का आधार 'ध्वनि' है लिपि-चिह्न नही। जैसे सानुस्वार लघुरूप के लिए अर्धविन्दु (ँ) की कल्पना कर ली गई है वैसे हीं एचों के लघुरूप के लिए भी विशेष चिह्न स्थिर कर लेने होगे।

देवनागरी वर्णमाला में ध्वनियो की वैज्ञानिक सूक्ष्मता को प्रगट करने की यह असमर्थता विद्वानों को बुरी तरह खल रही है। इसकी पूर्ति किए बिना हिन्दी के मध्ययुगीन साहित्य का वैज्ञानिक पाठ और अध्ययन सुदु साध्य हैं। इस सम्बन्ध में डॉ० धीरेन्द्र वर्मा ने अपने 'हिन्दी भाषा का इतिहास' (१९३३ पृ० ६४—१०४) में एचों के लघु चिह्नो की कल्पना की है। श्री डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल ने अपने एक लेख मे इन्हे स्वीकार करने की भी अनुमति दी थी। परन्तु अभी तक इस ओर हिन्दी के विद्वानो का ध्यान नहीं गया है और इस समस्या पर पूरा विचार नहीं हो पाया है।

है। हिन्दी मे केवल 'एक शब्द' मे ही सयुक्त पूर्व अक्षर गुरु माना जाता है। **'जब ते राम ब्याहि घर आए'** (तुलसी) मे सस्कृत की परिभाषा के अनुसार 'राम' का 'म' गुरु माना जायगा, परन्तु हिन्दी मे 'म' लघु ही गिना जाता है। इसी प्रकार 'अथ प्रजा' मे 'थ' सस्कृत मे गुरु है, परन्तु हिन्दी मे वह लघु है।

(ख) समस्त पदो मे भी विशेष बल के अभाव मे सयुक्तादि वर्ण लघु ही रहता है। 'दुखप्रद उभय बीच कुछ बरना' (तुलसी) मे 'दुख' का 'ख' लघु ही है। हाँ, जहाँ कही पढने मे बल दिया जाय, वहाँ वह गुरु भी हो सकता है। 'अगप्रभा' मे 'ग' आवश्यकता के अनुसार 'लघु' और 'गुरु' दोनो ही माना जा सकता है। परन्तु साधारणतया हिन्दी के महाकवियो की रचना मे समस्त पदो मे 'सयुक्ताद्य' गुरु का नियम लागू नही होता।

(६) कही-कही आवश्यकता के अनुरोध से पाद के अन्तिम लघु वर्ण को भी गुरु मान लिया जाता है। जैसे 'लीला तुम्हारी अति ही विचित्र'—इस पाद का अन्तिम लघु अक्षर 'त्र' गुर है। इस 'त्र' को लयपूर्ति के लिए द्विगुणित काल से गुरु के समान करके पढते है।

अपवाद या लघूच्चारण—उक्त लघु-गुरु के विवेचन मे यह स्मरण रखना चाहिए कि लघु-गुरु को मानने का अन्तिम आधार कालमान या बलभार है। जिस अक्षर के उच्चारण मे अधिक काल लगा दिया जाय या अधिक भार दे दिया जाय वह लघु भी गुरु हो जाता है। जैसे उक्त उदाहरण मे 'त्र' को गुरु मान लिया जाता है। इसी प्रकार यदि काल कम लगाया जाय या भार कम दिया जाय तो गुरु वर्ण भी लघु गिना जाता है। सस्कृत के छन्दो मे इस प्रकार की ढील नही है, परन्तु हिन्दी मे यह सूक्ष्म भेद स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। 'तुम्हारी' मे 'तु' उक्त नियम ५ के

अनुसार गुरु होना चाहिए और यदि यह कही सस्कृत छन्द मे आ जाय तो अवश्य गुरु ही माना जाय। परन्तु हिन्दी मे इसके उच्चारण मे बल नही दिया जाता, इसमे यह सदा लघु ही माना जाता है। इसी प्रकार 'कन्हैया' मे 'क' भी वलाभाव के कारण लघु ही रहता है। इसी प्रकार 'जामवत के बचन सोहाये' मे 'सो' को कम काल मे पढते है इससे यह लघु है । 'अवधेस के बालक चारि सदा तुलसी मन-मदिर मे बिहर' मे 'के' भी लघु है। इस प्रकार के 'नियमानुसार गुरु' परन्तु वस्तुत लघु वर्णों का लघूच्चारण किया जाता है।

साथ ही कवियो को यह स्वतन्त्रता है कि वे छन्द-शुद्धि के लिए शब्दो मे अपेक्षित कॉट-छॉट कर ले। जहॉ उन्हे लघु की आवश्यकता है वहॉ वे 'की' आदि गुरु वर्णो को 'कि' 'आनद' को 'आनँद' और 'जो' को 'जु', 'सो' को 'सु', 'ते' को 'ति' आदि करके लिख देते है। जहॉ गुरु की आवश्यकता हो वहॉ लघु को भी गुरु बना लेते है—'दशरथ' को 'दशरत्थ' 'भरत' को 'भरत्थ' के आम प्रयोग तुलसी और केशव आदि महाकवियो की कृतियो मे उपलब्ध होते है । 'दान' को 'दाना', 'रघुराय' को 'रघु-राया', 'विज्ञान' को 'विज्ञानू' आदि के प्रयोग रामायण के पाठको से अपरिचित नही है। इसी प्रकार 'विघ्न' को 'विघन', 'महान्' को 'महान' 'सूर्य' को 'सूरज' आदि सब-कुछ छन्द के अनुरोध से कर लिया जाता है। कवियो का सिद्धान्त यह है कि भाषा भले ही बिगड जाय, परन्तु छन्द की लय न बिगडने पाय।

संख्या और क्रम—मात्राओ और वर्णों की गिनती को सख्या कहते है और कहाँ लघु वर्ण हो और कहॉ गुरु वर्ण हो—वर्णों के इस स्थिति-क्रम (Order of short and long syllables) को क्रम कहते हैं। सक्षेपत किस छन्द मे कितनी मात्राएँ या वर्ण हैं। यह उनकी 'सख्या' है और कहॉ लघु और कहॉ गुरु वर्ण है यह उनका क्रम है।

लघु-गुरु वर्णो की ठीक पहचान हो जाने पर और थोडे से अभ्यास

से उनकी गिनती मे अशुद्धि की कोई सम्भावना नही रह सकती। लघु की एक मात्रा और गुरु की दो मात्राएँ गिनी जाती है। वर्णों की गिनती इससे भी सुगम है। इसमे स्वर सहित अक्षर का एक वर्ण गिना जाता है—अक्षर का स्वर चाहे ह्रस्व हो या दीर्घ, वह एक ही वर्ण रहेगा।

वदौं सत असज्जन चरणा

इसमे मात्राएँ १६ है, पर वर्ण ११ ही है। इस प्रकार थोडा सा अभ्यास कर लेने से छन्द के जिज्ञासु को अपेक्षित दक्षता प्राप्त हो जाती है।

गण या चिह्न अक्षर—वर्णों के उक्त क्रम की प्रक्रिया को समझाने के लिए पिगल आदि छन्द-आचार्यों ने गणो या चिह्न-अक्षरो की कल्पना की है। ये चिह्न-अक्षर एक प्रकार से बीजगणित के सकेत-अक्षरो के समान है, जहाँ प्रत्येक अक्षर एक विशेष परिमाण को प्रकट करता है। छन्द-शास्त्र का प्रत्येक गण क्रम की तीनो अवस्थाओ—आदि, मध्य और अन्त—को समझाने के लिए तीन-तीन अक्षरो की एक इकाई है। इससे पाद के सभी लघु-गुरु वर्णों का स्थान नियत हो जाता है और लक्षण बताने मे भी सुगमता रहती है।[1]

---

१ तीन-तीन अक्षरो के इन आठ त्रिको की योजना सिद्धान्त और सुगमता दोनो की दृष्टि से अत्यन्त उपादेय है। इसमें थोडी सी पारिभाषिकता अवश्य है, जिससे छन्द के प्रारम्भिक विद्यार्थी इसे कुछ कठिन समझते है। परन्तु क्रियात्मक उपयोगिता और सुगमता की दृष्टि से पारिभाषिक कठिनता वस्तुत. नगण्य है। इसमें सन्देह नही कि लघु-गुरु वर्णों के क्रम को और भी कई प्रकार से बताया जा सकता है—जैसे इन्द्रवज्रा का लक्षण यो भी किया जा सकता है—जिसके पाद के प्रथम द्वितीय, चतुर्थ, पचम, अष्टम, दशम तथा ग्यारहवें वर्ण गुरु हो और तृतीय, षष्ठ, सप्तम और नवम लघु हो वह इन्द्रवज्रा है—अथवा ऽऽ।ऽऽ ।। ऽ।ऽऽ, गुरु, गुरु, लघु, गुरु, गुरु, लघु, लघु, गुरु, लघु, गुरु, गुरु। लक्षण बताने का यह ढग सभव तो है, परन्तु यह शैली कितनी अनुपयोगी है, यह हर

ये गण सख्या मे आठ हैं—म न भ य ज र स त । इनके साथ ल (लघु) और ग (गुरु) मिलाने से कुल चिह्न-अक्षर दस बन जाते है । इन गणो के लक्षण और स्वरूप भली प्रकार बुद्धिस्थ कर लेने चाहिएँ।

कोई समझ सकता है । अधिक लम्बे छन्दो का लक्षण इससे भी लम्बा और जटिल होगा । इससे बिना किसी विशेष लाभ के 'लघुता' और 'सक्षिप्तता' की हत्या होती है । दूसरे इस प्रकार के लक्षण को स्मरण रखना भी एक समस्या है । इसमें सन्देह नहीं कि यह शैली भी प्राचीन ग्रन्थो में प्रयुक्त हुई है । भरत मुनि ने अपने 'नाट्य-शास्त्र' के छन्द-सम्बन्धी अध्यायो में इसी का प्रयोग किया है । विरहाङ्क ने अपने 'वृत्त-जातिसमुच्चय' के अध्याय ५ में इसी शैली के लक्षण किये है (देखो वेलकर जयदामन् १९४९ पृ० १७) । परन्तु अधिक जटिल और अग्राह्य होने से पीछे के आचार्यों ने इसे छोड दिया ।

इस शैली से कुछ अधिक अच्छी शैली रत्नमजूषाकार ने अपनाई है । इसने पिंगल के तीन अक्षरो के स्थान में दो अक्षरो के गण बनाए है और उनके द्वारा लघु-गुरु के क्रम को समझाया है । स्पष्ट है कि दो अक्षरो की इकाई के स्वभावत चार ही भेद हो सकते हैं—SS, IS, SI, II यह चार गणो की योजना भी अधिक लबे छन्दो में वही दोष उत्पन्न करती है जो ऊपर भरत की शैली में है। दूसरे इन द्वयक्षरी गणो से क्रम की दो ही स्थितियाँ प्रगट हो सकती हैं—आदि और अन्त, मध्य की स्थिति को बताने में यह बिलब पैदा करती है । इसलिए द्वयक्षरी गण भी सर्वप्रिय न हो सके । पिंगल के यह त्र्यक्षरी गण जहाँ क्रम की तीनों अवस्थाओ को स्पष्टतया प्रगट कर देते है, वहाँ अधिक लम्बे छन्दों में भी इनका प्रयोग सुगमता से हो सकता है । प्रस्तार की रीति से इनके भेद भी आठ हो जाते हैं—SSS, ISS, SIS, SSI, SSI, SII, ISI, IIS, III, यह सख्या न अति न्यून है और न अति अधिक ।

तीन अक्षरो का गण बनाने में एक कारण यह भी है कि 'बहुत्व'

सुगमता के लिए नीचे एक तालिका के द्वारा इनके लक्षण और स्वरूप बताए जाते है—

(पिंगल के दशाक्षर)

चिह्न-अक्षर	गण का नाम	स्वरूप	लक्षण	उदाहरण
म	मगण	SSS	तीनो गुरुवर्ण	माता का, सावित्री, जाते है
न	नगण	।।।	तीनो लघुवर्ण	कमल, न कर

या 'बहु वचन' की सख्या से ही प्रारम्भ होता है। स्थान, काल, सख्या ध्वनि आदि की नानारूपता और अनेकता को तीन की सख्या से ही प्रकट किया गया है—तीन लोक, तीन काल, तीन वचन, तीन स्वर, तीन गुण इत्यादि में सर्वत्र तीन के द्वारा ही सर्वत्व और बहुत्व को प्रकट किया गया है। इसलिए न्याय, वैशेषिक, साख्य और व्याकरण आदि के समान छन्द-आचार्यों ने भी क्रम को तीन स्थितियो के आधार पर तीन ही अक्षरो के गण बनाए है। इस प्रकार सिद्धान्त और क्रियात्मक उपयोग की दृष्टि से त्र्यक्षरी गण ही सर्वथा उपादेय हुए।

इन चिह्न अक्षरो के नामकरण के सम्बन्ध मे अभी विशेष चिन्तन की अपेक्षा है। क्या म, न, भ, ज, आदि सज्ञाएँ स्वच्छन्द और कपोल-कल्पित है या इनका कोई आधार है इस विषय पर अभी विद्वानो ने कोई विवेचन नहीं किया। ल, और ग, तो 'लघु' और 'गुरु' के सक्षिप्त चिह्न है इनमें किसी को सशय नही हो सकता। एकाक्षरी कोश के अनुसार 'ज' कुवेर का नाम है। 'कुवेर' शब्द मध्य गुरु होने से 'ज' मध्यगुरु का चिह्न मान लिया गया हो तो कोई आश्चर्य नहीं। हमारा विचार है कि म, न, आदि अन्य सज्ञाओ का भी शायद कोई इसी प्रकार का ही आधार होगा। योग्य विद्वानो को इस रहस्य का उद्घाटन अवश्य करना चाहिए।

भ	भगण	ऽ।।	आदि वर्ण गुरु, पिछले दोनो लघु	बालक, आकर
य	यगण	।ऽऽ	आदि लघु, पिछले दोनो गुरु	पुराना, नही तो
ज	जगण	।ऽ।	मध्य गुरु, आदि-अन्त लघु	समाज, अभी न
र	रगण	ऽ।ऽ	मध्य लघु, आदि-अन्त गुरु	बालिका देख लो
स	सगण	।।ऽ	अन्त गुरु, आदि-मध्य लघु	सरला, सबसे
त	तगण	ऽऽ।	अन्त लघु, आदि-मध्य गुरु	आकाश, ले जाय

ल' लघु ।

ग गुरु ऽ

इन गणो के नाम और लक्षण स्मरण रखने के लिए यह दोहा बहुत उपयोगी है—

आदि मध्य अवसान मे भ ज स सदा गुरु मान ।
क्रम से होते य, र, त लघु म, न गुरु लघु जय जान ।।

अर्थात् भ ज स क्रम से आदि गुरु, मध्य गुरु और अन्त गुरु है— भगण = आदि गुरु ऽ।।, जगण = मध्य गुरु ।ऽ।, और सगण = अन्त गुरु ।।ऽ है । इसी प्रकार य, र, त क्रम से आदि लघु, मध्य लघु और अन्त लघु है—यगण, आदि लघु ।ऽऽ, रगण = मध्य लघु, ऽ।ऽ और तगण = अन्त लघु ऽऽ। है ।[1] म और न क्रमश. सर्वगुरु और सर्वलघु है अर्थात् मगण = सर्व गुरु ऽऽऽ और नगण = सर्वलघु ।।। है ।

---

* संस्कृत के अनुकरण पर कई लेखको ने हिन्दी में भी मात्रागणो की कल्पना की है । परन्तु यह अनावश्यक है । गणो की योजना का

यति—विराम या तनिक ठहरने (Pause) को यति कहते हैं। छोटे छन्दो मे आम तौर पर यति पाद के अन्त मे होती है। परन्तु बडे छन्दो मे, जहाँ एक पाद मे इतने अधिक अक्षर हो कि एक साँस मे उनका उच्चारण सुकर न हो, तो उनकी लय को ठीक रखने के लिए और

मुख्य उद्देश्य है गुरु-लघु वर्णों के क्रम का नियतीकरण। हिन्दी-मात्रा-छन्दो मे गुरु-लघु नियत होते ही नही, तब फिर गण कल्पना अनावश्यक है। जहाँ कहीं मात्रा-छन्दो मे लय की प्राप्ति के लिए किसी गुरु वर्ण या लघु वर्ण की स्थिति का विधि-निषेध करना होता है वहाँ लक्षणकारो ने वर्णगणो से ही काम लिया है—यथा 'ज, त अन्त न दी जै' इत्यादि में 'ज, त' वर्णगण ही हैं। कहीं भी मात्रा-छन्दो के लक्षण मात्रागणो में नहीं दिये गए। मात्रा-छन्दो में तो मात्राओ की सख्या ही प्रधान आधार है। 'क्रम-हत मत्ता' मात्रा-छन्दो का लक्षण है। जगन्नाथप्रसाद भानु ने इस बात को अनुभव किया है। वे लिखते है कि इन मात्रिक गणो का काम बहुत कम पडता है। कविजन साकेतिक तथा सख्यावाची शब्दो में ही काम निकाल लेते है" एक और स्थान पर वे लिखते है—"प्राचीन ग्रन्थो में कही-कहीं मात्रिक छन्दो का लक्षण मात्रिक गणो द्वारा भी मिलता है। परन्तु अब कविजन सख्या का सख्या-सूचक शब्दो से ही काम निकाल लेते है" भानु जी के आधार पर दो-एक और छन्द-लेखको ने भी प्राचीन 'छन्द शास्त्रियो' का उल्लेख करते हुए मात्रागणो का वर्णन किया है। निश्चय ही ये 'प्राचीन ग्रन्थ' और 'प्राचीन छन्द शास्त्री' सस्कृत से सम्बन्ध रखते है। सस्कृत में मात्रा-छन्दो के तीन वर्गों का वर्णन है—द्विपदी (आर्या वर्ग), चतुष्पदी (मात्रासमक वर्ग) और अर्धसम चतुष्पदी (वैतालीय वर्ग)। इनमें से द्विपदी और चतुष्पदी छन्दो के लिए पिंगल, जयदेव, जयकीर्ति और केदार ने चार-चार मात्राओ के पाँच गणो का प्रयोग किया है—ऽऽ, ॥ऽ, ।ऽ।, ऽ॥, ॥॥ इनमें से द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ तो वर्णगणो—सगण, जगण और भगण के अन्दर ही आ जाते है।

उच्चारण की सुगमता के लिए एक पाद मे ही एक, दो या तीन तक विराम रखे जाते है। जितना लबा छन्दपाद होगा, उतने ही अधिक विराम अपेक्षित होते है। प्रारम्भ मे 'सुकरता' के अनुरोध मे किया गया यह यति-विधान शनै-शनै छन्द के लक्षण का आवश्यक अग बन गया। अनेक छन्द ऐसे है जिनमे यति-भेद छन्द-भेद का कारण माना गया है।

वैतालीय वर्ग मे लक्षण मात्राओ की सख्या के आधार पर ही दिये गए है, यद्यपि गुरु लघु की स्थिति के सम्बन्ध मे कुछ नियम साथ दे दिए है। पिंगल ने अध्याय ४०—१२, १३ मे इनका लक्षण दिया है। कहना न होगा इस चातुर्मात्रिक गण का काम हिन्दी के लेखको ने 'चतुष्कल' या चौकल से ले लिया है। इस प्रकार मात्रागणो का पृथक् प्रतिपादन अनावश्यक हो गया है।

हेमचन्द्र ने अपने 'छन्दोऽनुशासन' अध्याय १ १—२ मे वर्णगणो और मात्रागणो का उल्लेख इस प्रकार किया है—'सर्वादिमध्यान्त ग्लौ त्रिकौ म्नौ भ्यौ ज्रौ स्तौ वर्णगणा। द्वित्रिचतुष्पञ्चषट् कला दृतचपषा द्वित्रिपञ्चाष्टत्रयोदश भेदा मात्रागणा ॥' इसके अनुसार वर्णगण तो वही है जिनका ऊपर उल्लेख हो चुका है। परन्तु मात्रागण पिंगल आदि के मात्रागणो से भिन्न है। हेमचन्द्र के अनुसार मात्रागण पॉच है। (१) द्विमात्रिक, (२) त्रिमात्रिक, (३) चतुर्मात्रिक, (४) पञ्चमात्रिक और (५) षट्मात्रिक। (इस प्रकार हेमचन्द्र केवल चतुर्मात्रिक गण को ही नहीं मानता)। इनके क्रम से दगण, तगण, चगण, पगण और षगण नाम है। दगण (द्विमात्रिक) के दो भेद है (S, ॥), तगण के तीन भेद है (IS, SI, III), चगण के पाँच भेद है (SS, IIS, ISI, SII, IIII), पगण के आठ भेद है (ISS, SIS, IIIS, SSI, IISI, ISII, SIII, IIIII) और षगण के १३ भेद है (SSS, IISS, ISIS, SIIS, IIIIS, ISSI, SISI, IIISI, SSII, IISII, ISIII, SIIII, IIIIII)। इन गणों के नाम भी मात्राओ की सख्या के प्रथम अक्षर पर रखे गए है—द = द्वि, त = त्रि, च = चतुर्, प = पञ्च, ष = षट्।

पिगल और जयदेव के अनुसार यति छन्द-लक्षण का अनिवार्य अग है। परन्तु भरत ने इसे ऐच्छिक माना है। पीछे के आचार्यो ने यति के सम्बन्ध मे पिगल का ही अनुसरण किया है और यति को छन्द-लक्षण का आवश्यक अग माना है।

गति—गीति-प्रवाह को 'गति' (रवानगी) कहते ह। वर्णवृत्तो मे इसकी कोई विशेष अपेक्षा नही रहती, कारण कि गीति-प्रवाह लघु-गुरु वर्णों के स्थिति-क्रम के नियत कर देने से ही पैदा हो जाता है। परन्तु मात्रिक छन्दो में इसकी ओर विशेष ध्यान देना पडता है।

सस्कृत के ग्रन्थो मे इसका उल्लेख नही मिलता, कारण कि सस्कृत मे प्राय वर्णवृत्तो की ही प्रधानता है। परन्तु हिन्दी के छन्द अधिकाशत मात्रा-छन्द है, जो प्राकृतो और अपभ्र श से आए है। इनमे मात्राओ की सख्या ही छन्द का प्रधान लक्षण है। यह स्पष्ट है कि सख्या बराबर

भानुजी ने इनके कृत्रिम नाम टगण (षगण) ठगण (पगण) डगण (चगण) ढगण (तगण) और णगण (तगण) रखे हैं जिनका आधार विदित नहीं। हेमचन्द्र के इस मात्रागणो के वर्णन के सम्बन्ध में यह बात याद रखनी चाहिए कि द्विपदी (आर्या) और चतुष्पदी छन्दो के लक्षण में उसने भी 'चतुर्मात्रिक' या चतुष्कला वर्णों का प्रयोग किया है। और इन द त च प ष गणो को केवल प्राकृत और अपभ्र श के छन्दो में प्रयुक्त किया है। इससे स्पष्ट है मात्रागणो का उपयोग, सस्कृत, प्राकृत और अपभ्र श के छन्दो में ही होता रहा है। हिन्दी में इनकी कोई आवश्यकता नही। केवल विद्यार्थियो के काठिन्य और उलझन में वृद्धि करने के अतिरिक्त इनका कोई उपयोग नहीं दीखता।

इस विस्तृत टिप्पणी के लिखने से हमारा उद्देश्य यह सिद्ध करना है कि हिन्दी के छन्द-शास्त्र के अध्ययन में हमें सदा हिन्दी के छन्दो का ध्यान रखना चाहिए और अन्धाधुन्ध सस्कृत की नकल न करनी चाहिए।

होने-मात्र से ही गीति-प्रवाह नही चलता । जैसे चौपाई की १६ मात्राएँ होती है । अब सोलह मात्राएँ निम्न लिखित पाद मे भी मिल जाती है ।

जब सकोप लखन वचन बोले (१६ मात्राएँ)

परन्तु इस पाद मे 'रवानगी' नही है, इससे इसे चौपाई का पाद नही माना जा सकता । इसे ही यदि यो करके पढे तब गीति-प्रवाह ठीक रहता है ।

लखन सकोप वचन जब बोले (तुलसी)

हिन्दी के छन्द-लेखको ने इसके अभी कोई विशेष नियम निर्धारित नही किये । यह प्राय अभ्यास और नाद के नियमो पर ही निर्भर है । हिन्दी-छन्दो के अध्ययन मे इस ओर विशेष ध्यान अपेक्षित है ।

तुक—तुक का छन्द या ध्वनि-सतुलन से सीधा कोई सम्बन्ध नही । यह छन्द शास्त्र का विषय न होकर साहित्य-शास्त्र का विषय है । नि सन्देह 'ध्वनिसाम्य' के द्वारा यह छन्द मे विशेष स्वारस्य पैदा करता है । वैदिक और सस्कृत के छन्दो मे इसका प्रयोग नही मिलता । प्राकृत छन्दो मे यह प्रयुक्त होने लग पडा था । अपभ्र श छन्दो मे इसका प्रयोग निरन्तर मिलता है । शायद प्राकृत और अपभ्र श के अनुकरण पर ही जयदेव आदि एकाध कवि ने सस्कृत मे भी तुक का प्रयोग किया है, परन्तु अपने खालिस रूप मे यह अपभ्र श की देन है । हिन्दी मे तुक का प्रयोग आरम्भ से होता चला आ रहा है । पुराने सभी कवियो की वाणी मे यह निरपवाद रूप से मिलता है । हाँ, आज के कतिपय स्वच्छन्द कवि 'अतुकी' या 'बेतुकी' कविता करने लगे हैं । नि सन्देह भावो और छन्द की दृष्टि से 'तुक' अनावश्यक होते हुए भी माधुरी और स्वारस्य का घटक अवश्य है ।

हिन्दी के किसी लक्षणकार ने तुक को छन्द-लक्षण का भाग नही माना है । साहित्य-शास्त्र मे 'अन्त्यानुप्रास' के नास से इसकी गणना अलकारो मे की गई है ।

हिन्दी-साहित्य मे साधारणतया पॉच और चार मात्राओ का तुक मिलता है। कही-कही दो मात्राओ का भी प्रयुक्त हुआ है। तुक के मिलान मे भी कई भेद प्रतीत होते है। कही सभी पादो मे एक ही तुक चलता है। इसे 'सर्वान्त्य' कह सकते है। कही पहले और तीसरे पाद का तुक मिलता है (दूसरा और चौथा पाद 'अतुक' ही रहते है जैसे सोरठा आदि मे)। कही दूसरे और चौथे पाद का तुक मिलता है और पहला और तीसरा पाद 'अतुक' ही रहता है (जैसे दोहा आदि मे)। कही पहले और तीसरे का और तीसरे और चौथे का तुक मिलता है और कही पहले-तीसरे और दूसरे-चौथे पाद में तुक-साम्य होता है। इस प्रकार प्रयोग की दृष्टि से तुक अनेक प्रकार से व्यवहृत हुआ है। यह प्रधानतया कवि की इच्छा पर निर्भर है। इसे नियमो के बन्धन मे जकडना कवि-स्वातन्त्र्य मे अनावश्यक हस्ताक्षेप होगा।

२ हिन्दी के छन्दों की रूपरेखा

ऊपर इस बात का उल्लेख हो चुका है कि हिन्दी मे—विशेषकर उसके प्राचीन और मध्ययुगीन साहित्य मे—दो प्रकार के छन्द प्रयुक्त हुए है,—एक वे जो प्राकृत और अपभ्रंश से हिन्दी मे आए है और दूसरे वे जो प्रधानतया सस्कृत की देन है। इन्हे क्रमश: 'मात्रिक' और 'वर्णिक' कहते हैं।[1]

---

१ इनके अतिरिक्त वर्तमान में अंग्रेजी प्रभाव से भी हिन्दी में कुछ स्वछन्द छन्दो का प्रयोग होने लगा है। इन्हे हम अंग्रेजी परिभाषा के अनुसार ही लयात्मक रचना (Rhythmical construction) कह सकते हैं। इनकी स्थिति अभी तरलावस्था में है। इनका कोई निश्चित मार्ग या शैली अभी दृष्टिगोचर नहीं होती। इनके प्रयोग की बहुलता और नानारूपता के उपरान्त ही इनका विधिपूर्वक अध्ययन और विश्लेषण किया जा सकेगा। अत अभी हम इनके विषय में अधिक न लिखकर

मात्रिक छन्द—जिन छन्दो मे मात्राओ की सख्या के आधार पर पद रखे जाते है, उन्हे मात्रिक छन्द कहते है। इन्हे 'जाति' भी कहते है।

वर्णिक वृत्त—जिन छन्दो मे वर्णों की सख्या और क्रम (लघु-गुरु वर्णों के स्थान का स्थिरीकरण) के आधार पर पाद-रचना की जाती है, उन्हे वर्णिक छन्द कहते है। केवल 'वृत्त' कहने से भी वर्णिक छन्द का ही बोध होता है।

वर्णिक और मात्रिक छन्दो की मोटी पहचान यह है कि वर्णिक वृत्तो मे क्रम या लघु और गुरु वर्णों का स्थान नियत होता है। यदि एक पाद का पहला या तीसरा या कोई और अक्षर गुरु है तो सब पादो मे उस नम्बर के अक्षर गुरु ही होगे। परन्तु मात्रा-छन्दो मे क्रम नही होता। उनमे केवल मात्राओ की सख्या पूरी होती है। क्रम ही वर्णिक छन्दो का प्रधान लक्षण है और क्रम का न पाया जाना निश्चित तौर पर मात्रा-छन्दो का द्योतक है।[२] जैसे—

छन्द के सुयोग्य विद्वानो को यह सुझाव देना चाहते है कि वे इन्हे 'मात्रिक विषम' छन्दो की श्रेणी में स्थान दिये जाने पर गम्भीर विचार करे। आखिर ये मात्रिक छन्द है और 'विषम' भी है। परन्तु जब तक इनकी कोई निश्चित शैली स्थिर न हो जाय, इनका वैज्ञानिक विवेचन सम्भव नहीं।

२ कई लेखको ने मात्रिक का लक्षण करते हुए यह लिखा है—"यदि मात्राओं की सख्या चारो पादो में समान हो तो उसे मात्रिक छन्द समझिये।" यह लक्षण अपूर्ण और भ्रममूलक है। स्वभावत. ही वर्णिक वृत्तो में प्रत्येक पाद में मात्राओ की सख्या समान होती है कारण कि उनके अक्षर और लघु-गुरु नियत होते है। इससे एक पाद में मात्राएँ जितनी होगी उतनी ही शेष पादो में होगी। अत क्रमाभाव ही मात्रा-छन्दो का निश्चित लक्षण है। देखो भानु कवि—'क्रम हतमत्ता, क्रम-गत वृत्ता'।

	वर्ण-सख्या	मात्रा-सख्या
न जिसमे कुछ पौरुष हो यहाँ।	१२	१६
सफलता वह पा सकता कहाँ।	१२	१६
अपुरुषार्थ भयकर पाप है।	१२	१६
न उसमे यश है न प्रताप है॥	१२	१६

इस छन्द के प्रत्येक पाद मे वर्ण १२ और मात्राएँ १६ है। परन्तु इसमे लघु-गुरु वर्णों का क्रम नियत है। प्रत्येक पाद का चौथा, सातवाँ, दसवाँ और बारहवाँ अक्षर गुरु है और पहला, दूसरा, तीसरा, पाँचवाँ, छठा, आठवाँ, नवाँ और ग्यारहवाँ अक्षर लघु है। गण परिभाषा मे यहाँ न भ भ और र गण है। इससे यह वर्णिक वृत्त (द्रुतविलबित) है। परन्तु—

	मात्रा सख्या	वर्ण सख्या
बदौ सत असज्जन चरना।	१६	११
दुखप्रद उभय बीच कछु धरना।	१६	१४
बिछुरत एक प्राण हरि लेही।	१६	१२
मिलत एक दारुण दुख देही॥	१६	१२

इस छन्द के प्रत्येक पाद मे मात्राएँ १६ है, परन्तु वर्णों की सख्या एक समान नही है। लघु-गुरु क्रम भी नही मिला। पहले पाद के प्रथम दोनो अक्षर गुरु है, पर शेष पादो के नही है। इससे यह मात्रिक छन्द (चौपाई) है।

पादो की रचना के आधार पर छन्दो के तीन भेद और है—

१ सम

२ अर्धसम

३ विषम

सम—जिन छन्दो के चारो पादो मे एक ही लक्षण समान रूप से चरितार्थ हो वे 'सम' छन्द कहे जाते है। प्रयोग और सख्या की दृष्टि से

हिन्दी-साहित्य में इन्ही सम छन्दो की प्रचुरता है । मात्रिक सम छन्द १ से ३२ मात्राओ तक के पाद वाले साधारण या जाति छन्द माने जाते है और ३२ से अधिक मात्राओ के पाद वाले दडक या कवित्त कहे जाते है । इसी प्रकार वर्णिक वृत्तो मे प्रति पाद १ से २१ तक वाले छन्द साधारण या जाति छन्द माने जाते हे । २२ से २६ अक्षर वालो की गणना भी जाति छन्दो मे है, परन्तु इन्हे 'सवैया' कहते है और २६ से अधिक अक्षर वाले 'दण्डक' कहे जाते है । दण्डक भी दो प्रकार के है— साधारण और मुक्तक । साधारण दण्डको मे अक्षर-सख्या और क्रम नियत होते है । मुक्तको मे अक्षर-सख्या नियत होती है, **पर** क्रम का उनमे कोई नियम नही । क्रम के बन्धन से मुक्त होने के कारण ही इन्हे मुक्तक कहते है । दण्डको से भी लम्बे छन्दो को गाथा या गीति कहते हे । इनमे ताल-सगीत के द्वारा लय-प्राप्ति होती है—अक्षर-सख्या या क्रम का इनमे कोई नियम नही ।

अर्ध सम—जिन छन्दो का प्रथम पाद तृतीय पाद के समान हो और द्वितीय पाद चतुर्थ पाद के समान हो, उन्हे 'अर्ध सम' कहते है । ये छन्द सख्या मे बहुत कम है । हिन्दी मे दोहा, सोरठा आदि प्रसिद्ध छन्द इसी श्रेणी के है ।

विषम—जो न सम हो न अर्धसम, वे विषम कहाते है । वस्तुत अनियमित छन्दो को विषम कह दिया गया है जहाँ तीन पाद एक समान हो और एक पाद और प्रकार का हो या प्रथम, द्वितीय और तृतीय, चतुर्थ एक समान हो या चार के स्थान पर पाँच, छ, आठ पाद हो इत्यादि सब विषम ही माने जाते है ।

इस प्रकार छन्दो के विभाग की यह तालिका बनती है—

छन्द
वर्णिक
मात्रिक
सम
अर्धसम
विषम
सम
अर्धसम
विषम
जातिक
सवैया
दण्डक
सयुक्त
प्रवर्धित
जातिक
दण्डक
सयुक्त
प्रवर्धित
साधारण
मुक्तक
साधारण
मुक्तक
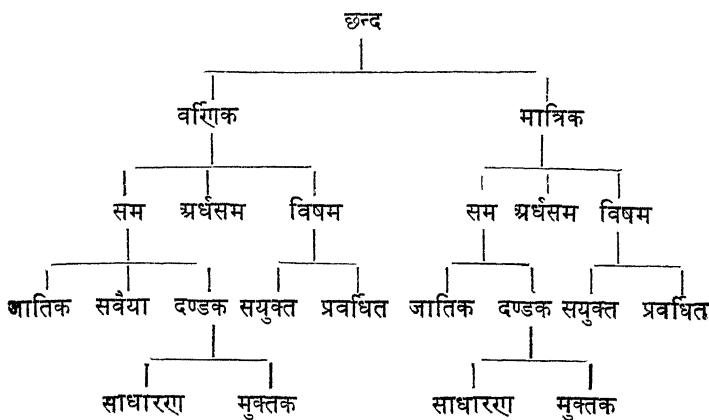
दूसरा अध्याय

मात्रिक प्रकरण

१. सम मात्रिक छन्द

(क) जातिक छन्द

ऊपर कह चुके है कि जिन छन्दो के चारो पादो मे लघु-गुर वर्णों का क्रम लक्षित न हो परन्तु मात्राओ की सख्या समान हो, उन्हे सममात्रिक छन्द कहते हैं। परन्तु यह स्मरण रखना चाहिए कि बहुधा मात्राओ की सख्या बराबर होने-मात्र से ही अपेक्षित लय पैदा नही होती। इसलिए इन मात्रा-छन्दो मे कही-कही किसी अन्त या तत्पूर्व के एक या दो वर्णों के लघु या गुरु होने के विधि-निषेध भी लक्षण मे सम्मिलित कर दिए गए हे। बहुधा इन्ही के भेद से छन्द-भेद भी मान लिया गया है।

आचार्यो ने एक मात्रा के पाद वाले छन्द से लेकर ३२ मात्राओ तक के पाद वाले छन्दो का वर्णन किया है। सुगमता के लिए इनकी जातियाँ बना दी गई है और प्रस्तार की रीति से प्रत्येक जाति के सम्भाव्य छन्दो की भी सख्या बता दी हैं।[1] मात्राओ की सख्या के आधार पर इन

---

१ लक्षण-आचार्यों ने पारिभाषिक पूर्णता की दृष्टि से प्रस्तार (permulation) **की रीति से एक-एक जाति के हजारों-लाखो तक भेद कर दिए है। प्रयोग में ये कहीं उपलब्ध नहीं होते। इसी प्रकार १ मात्रिक जाति का भी भला क्या छन्द बनेगा। एक मात्रिक तो शब्द भी नहीं होता। नि·सन्देह मध्ययुगीन सस्कृत के आचार्यों की एक प्रकार से यांत्रिक विश्लेषण की मनोवृत्ति ही हिन्दी में भी आई है, और प्रथा-पालन की प्रवृत्ति से यह आज तक चल रही है।**

जातियो के विविध नाम भी रख दिए है।[1] मात्रिक जातियो के नाम ये है।

१ चान्द्रिक जाति,	२ पाक्षिक जाति,	३ राम जाति,
४ वैदिक जाति,	५ याज्ञिक जाति,	६ रागी जाति,
७ लौकिक जाति,	८ वासव जाति,	९ आक जाति,
१० दैशिक जाति,	११ रौद्र जाति,	१२ आदित्य जाति,
१३ भागवत जाति,	१४ मानव जाति,	१५ तैथिक जाति,
१६ सस्कारी जाति,	१७, महासस्कारी जाति,	१८ पौराणिक जाति,
१९ महापौराणिक जाति,	२०, महादैशिक जाति,	२१ त्रैलोक जाति,
२२ महारौद्र जाति,	२३ रौद्रार्क जाति,	२४ अवतारी जाति,
२५ महावतारी जाति,	२६ महाभागवत जाति,	२७ नाक्षत्रिक जाति,

---

१ छन्द, ज्योतिष और गणितशास्त्र में विशेष सज्ञाओ द्वारा सख्या प्रकट करने की रीति बहुत प्राचीन काल से प्रयुक्त होती आ रही है। पिंगल, जयदेव, जयकीर्ति, केदार, हेमचन्द्र और अद्यतनीन सभी ग्रन्थकारो ने इसे अपनाया है। कुछ-एक सख्यावाचक सज्ञाएँ इस प्रकार है—आकाश, ख = ०, चन्द्र, शशि, पृथ्वी = १, नेत्र, यज्ञ, भुज = २, गुण, राम, काल, अग्नि, = ३, वेद, वर्ण = ४, भूत, यज्ञ, बाण = ५, ऋतु, राग, रस = ६, अश्व, लोक, मुनि, ऋषि = ७, वसु, सिद्धि, = ८, भक्ति, अक, निधि, = ९, दिशा, दोष = १०, रुद्र, शिव = ११, आदित्य, रवि, मास, राशि = १२, भागवत, नदी = १३; मनु, विद्या = १४, तिथि = १५, कला, सस्कार = १६, पुराण = १८, लक्षण, दल = ३२, आदि-आदि। इन्ही सख्या-वाचक सज्ञाओ के आधार पर इन जातियो के नाम रखे गए है।

२८ यौगिक जाति, २९ महायौगिक जाति, ३० महातैथिक जाति,

३१ अश्वावतारी जाति, ३२ लाक्षणिक जाति,

स्पष्ट है कि चान्द्रिक से लौकिक जाति तक के छोटे छन्दो मे कोई रुचिरता नही हो सकती। इनका प्रयोग भी कही देखने मे नही आया। इससे हम वासव जाति से ही प्रारम्भ करते है और उनमे भी प्राय उन्ही छन्दो का वर्णन करेगे जो मुख्यतया साहित्य मे प्रयुक्त हुए है।

८ मात्रिक वासव जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे आठ-आठ मात्राओ के चार पाद रखे जाते है। प्रस्तार की रीति से इसके ३४ छन्द बन सकते है। इस जाति का प्रसिद्ध छन्द 'छवि' है जिसका महाकवि केशव ने 'मधुमार' नाम से प्रयोग किया है—

छवि छन्द (८ मा, अन्त ज)

[वसुकल ज अत। होत छवि छन्द॥]

इसके प्रत्येक पाद मे आठ मात्राएँ होती है। लय-प्राप्ति के लिए अन्त मे जगण (।ऽ।) रखा जाता है। यथा—

दशरथ जगाई।
सभ्रम भगाई॥
चले राम राइ।
दुदुभि बजाइ॥ (**केशव**)

९ मात्रिक आंक जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे नौ-नौ मात्राओ के चार पाद रखे जाते है। प्रस्तार की रीति से इस जाति के ५५ छन्द बन सकते हैं। 'निधि' इस जाति का प्रसिद्ध छन्द है—

निधि छन्द (९ मा०, अन्त ।)

(नव कल लघु अन्त । तब हो निधि छन्द) ॥

इसके प्रत्येक पाद मे ९ मात्राएँ होती है । अन्तिम वर्ण लघु होना चाहिए । यथा—

तू कर उपकार ।
निज हित न विचार ॥
रह सदा उदार ।
जग मे यही है सार ॥ (**नन्दन**)

१० मात्रिक दैशिक जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे दस-दस मात्राओ के चार पाद रखे जाते है । प्रस्तार की रीति से इसके ८९ छन्द वन सकते है । दीप इस जाति का प्रसिद्ध छन्द है ।

दीप छन्द (१० मा०, अन्त न ग ल)

[होत दस कल दीप । अन्त जु न ग ल मीत ॥]

इस छन्द के प्रत्येक पाद मे दस मात्राएँ होती है, परन्तु अन्तिम पाँच अक्षर क्रमश नगण, गुरु, लघु (IIIऽI) होने चाहिएँ । यथा—

करो तनिक विचार ।
नर तनु न बहु बार ॥
तजो विषय विकार ।
मिलै तब फल चार ॥

११ मात्रिक रौद्र जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे ११-११ मात्राओ के चार पाद रखे जाते है । प्रस्तार की रीति से इसके १४४ छन्द बन सकते है । अहीर या

आभीर इस जाति का प्रसिद्ध छन्द है। महाकवि केशव ने इसका आम प्रयोग किया है।[1]

अहीर छन्द (११ मा०, ज अन्त)

[ग्यारह कला ज अन्त। रच लो अहीर छन्द]

इस छन्द के प्रत्येक पाद मे ११ मात्राएँ होती हैं। लय-प्राप्ति के लिए अन्तिम तीनो अक्षर जगण (।ऽ।) होने चाहिएँ। यथा—

सुरभित मन्द बयार।	अति सुन्दर अति साधु।
सरसे सुमन सुडार।	थिर न रहत पल आधु।
गूँज रहे मधुकार।	परम तपोमय मानि।
धन्य वसन्त बहार॥	दडधारिनी जानि॥

(केशव)

१२ मात्रिक आदित्य जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे १२–१२ मात्राओ के चार पाद रखे जाते है। प्रस्तार की रीति से इसके २३३ छन्द बन सकते है। इस जाति के प्रसिद्ध छन्द ये है।

तोमर छन्द

[वारह कला, ग ल अन्त। तोमर नाम यह छन्द॥]

इस छन्द के प्रत्येक पाद मे १२ मात्राएँ होती हैं, परन्तु अन्त मे एक गुरु और एक लघु (ऽ।) होना चाहिए। पुराने कवियो ने, विशेषतया तुलसी और केशव ने इसका आम प्रयोग किया है। सस्कृत मे इस नाम

---

१ केशव के प्रयोग में 'ज-अन्त' का नियम कोई बहुत आवश्यक नही दीखता। इसमें उक्त उदाहरण के चौथे पाद में 'ज-अन्त' नही घटता। अन्यत्र भी केशव के प्रयोग में केवल ऽ। अन्त का नियम चरितार्थ होता है।

का एक वर्णिक वृत्त भी है, हिन्दी मे तुलसी ने इसका मात्रिक प्रयोग किया है। केशव का प्रयोग एकाध स्थल को छोडकर प्राय वर्णिक ही है। (स ज न)

सुनु दान मानसहस।
रघुबस के अवतस।
मन मॉहि जो अति नेहु।
इकु वस्तु मॉगहि देहु॥ (केशव)

नित छन्द

[रविकल अन्त मे ल गा। कबहुक अन्त नगण भा॥]

इस छन्द के प्रत्येक पाद मे बारह मात्राएँ होती है। अन्त मे लघु-गुरु अथवा नगण (।) तीनो लघु अक्षर होते हैं।

सदा कृपा निधान है।
सुभक्त जनन प्रान है। } अन्त मे लघु-गुरु
नित नव राम सो लगन।
लगी रहे दुहूँ पगन। } अन्त मे नगण

(भानु कवि)

१३ मात्रिक भागवत जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे १३-१३ मात्राओ के चार पाद रहते है। प्रस्तार की रीति से इस जाति के ३७७ छन्द बन सकते है। चन्द्रमणि इस जाति का प्रसिद्ध छन्द है[1]—

---

१ कई लेखको ने इस छन्द का अन्य नाम 'उल्लाला' भी कहा है। परन्तु इस नाम का अर्धसम छन्द भी एक है जिसके मेल से 'छप्पय' बनता है। अत नाम साम्य से भ्रम की आशका की निवृत्ति के लिए इसे चन्द्रमणि ही कहना चाहिए।

चन्द्रमणि छन्द

[चन्द्रमणि तेरह कला । ग्यारहवी लघु हो सदा ।।]

इस छन्द के प्रत्येक पाद मे तेरह मात्राएँ होती है । ग्यारहवी मात्रा मे लघु अक्षर होना चाहिए। यथा—

काव्य कहा बिनु रुचिर मति ।
यति सु कहा बिनु ही विरति ।
विरति हु लाल गुपाल भल ।
चरननि होय जु रति अचल ।। **(भानु कवि)**

१४ मात्रिक मानव जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे १४-१४ मात्राओ के चार पाद होते है। प्रस्तार की रीति से इस जाति के ६१० छन्द बन सकते है । कुछ-एक प्रसिद्ध छन्द यहाँ दिये जाते है ।

विजात छन्द

[करो रचना विजाता की । कला चौदह लघू आदी ।]

इस छन्द के प्रत्येक पाद मे १४ मात्राएँ होती है । पहला अक्षर लघु होता है । यथा—

चरित है मूल्य जीवन का ।
वचन प्रतिबिम्ब है मन का ।
सुयश है आयु सज्जन की ।
सुजनता है प्रभा धन की ।। **(रामनरेश त्रिपाठी)**

हाकलि छन्द

[जै चौकल गुरु हाकलि है ।]

इस छन्द में १४ मात्राओ का पाद होता है । मात्राएँ ऐसे ढग से

रखी जाती है कि चार-चार मात्रा का चौकल बनकर पूरे तीन चौकल हो जायँ और उनके आगे एक गुरु अक्षर हो (४ × ३ + २ = १४) यथा—

परतिय मातु समान भजै ।
पर धन विष के तुल्य तजै ।
सतत हरि को नाम ररै ।
तासु कहा कलि काल करै ।। **(भानु कवि)**

मधुमालती छन्द

[सत-सत कला मधुमालती । र अन्त दिये रस घालती ।]

इस छन्द मे १४ मात्राओ का पाद होता है। मात्राओ का आयोजन इस ढग से हो कि सात मात्राओ पर विच्छेद-सा हो जाय, अर्थात् सातवी और आठवी मात्रा इकट्ठी न हो। इसके अन्त मे रगण (SIS) होना चाहिए । यथा—

जग मे बडा तहि मानिये ।
शुभ गुण उसी के[1] बखानिये ।
पर पीर जो हर लेत है ।
अवसर पडे कछु देत है ।।

मनमोहन छन्द

[चौदह कल अरु अत नगन । अठ-छ यति रचु, मोहन मन ।]

इसके प्रत्येक पाद मे १४ मात्राएँ होती है। आठ और छ पर यति होती है । अन्त मे नगण (तीन लघु अक्षर) होने चाहिएँ । यथा—

प्रभु से जिसकी लगी लगन ।
होता उसका चित्त मगन ।
कर लो अब तो कुच्छ जतन ।
आओ सब ही उसकि सरन ।।

---

१ 'के' का लघूच्चारण होने से एक मात्रा गिनी जायगी ।

१५ मात्रिक तैथिक जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे १५-१५ मात्राओ के चार-चार पाद रहते है। प्रस्तार से इस जाति के ९८७ छन्द बन सकते है। कुछ-एक प्रसिद्ध छन्द यहाँ दिये जाते हैं।

हसी छन्द

[वसु मुनि कल से हसी रचो। अन्तहि लघु-गुरु राखि धरो॥]

इस छन्द के प्रत्येक पाद मे १५ मात्राएँ होती है आठ और सात पर यति होती है। अन्त मे लघु और गुरु अक्षर होने चाहिएँ[1]। यथा—

मित्र सफल निज जीवन करो।
हृदय बीच सब शुभ गुण धरो।
गैल सदा उन्नति की गहो।
बन समाज मे नेता रहो॥ **(रामनरेश त्रिपाठी)**

१६ मात्रिक संस्कारी जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे १६-१६ मात्राओ के चार पाद होते है। प्रस्तार से इस जाति १५९७ छद बन सकते है। इस जाति के कुछ-एक प्रसिद्ध छन्द ये है—

पादाकुलक

[चारो चौकल पादाकुलका]

पादाकुलक मे १६ मात्राओ का पाद होता है। परन्तु मात्राओ का आयोजन ऐसे ढग से किया जाता है कि चार-चार मात्राओ के चार चतुष्कल बन जायँ (४×४=१६)। चतुष्कल या चौकुल का अर्थ है चार

---

१ **इसी को 'चौबोला' भी कहते है।**

मात्राओ का स्वतन्त्र वर्ग अर्थात् प्रति चौथी मात्रा किसी लघु या गुरु अक्षर पर पूरी पडे जैसे 'दासता' मे चौकल नही बनता कारण कि 'दास' मे तीन और 'ता' मे दो मिलकर पॉच मात्राएँ हो जाती है—चौथी और पॉचवी मात्रा मिली हुई है। परन्तु 'चार जहाँ पर' मे दो चौकल है—'चार ज' और 'हॉ पर'। ये चौकल पॉच प्रकार से बन सकते है—SS, IIS, ISI, SII, IIII, पादाकुलक का उदाहरण—

सुमति कुमति सब के उर रहही।
नाथ पुरान निगम अस कहही।
जहॉ सुमति तहँ सपति नाना।
जहॉ कुमति तहँ विपति निदाना ॥ **(तुलसी)**

केशव का ढग— सुभ सर सोभै मुनिमन लोभै।
सरसिज फूलै अलि रस भूलै।
जलचर डोलै बहु खग बोलै।
बरणि न जाही उर अरुझाही ॥ **(केशव)**

हिन्दी मे 'चौकल' के नियम वाले तीन-चार छन्द बहुत प्रसिद्ध है। इन्हे 'पादाकुलक वर्ग' मे ही गिना जाता है। केशव ने इनका आम प्रयोग किया है। इनमे से कुछ एक नीचे दिये जाते है।

पद्धरि छन्द

[चतुष्कल चार जगण शुभ अत। यति अठ-आठे पद्धरिक छन्द।]

पद्धरि मे चार चौकल होते है। अन्त मे जगण (ISI) और यति आठ-आठ मात्राओ पर पडती है। केशव ने इस छन्द का नाम 'पद्धरिका' लिखा है। यथा—

सुभ मोतिन की दुलरी सुदेस।
जनुवेदन के अच्छर सुवेस।
गज मोतिन की माला विसाल।
मन मानहुँ सतन के मराल ॥ **(केशव)**

अरिल्ल

[भान्त कि य अन्त यदि कल सोरह ।]

अरिल्ल मे चार चौकल और अन्त मे भगण (ऽ।।) अथवा यगण (।ऽऽ) रखा जाता है[१] यथा—

भ-अन्त— फूली फलि तरु फूल बढावत ।
मोह महा मोहत उपजावत ।
उडत पराग न चित्त उडावत ।
भ्रमर भ्रमत नहि जीव भ्रमावत ।। (केशव)

य-अन्त— कर कुछ काम सुमगलकारी ।
खुश हो जिससे सब नर नारी ।
कडुवा वचन न बोल दुखारी ।
मिट जाय व्याधि जग की सारी ।।

मात्रासमक छन्द

[सोरह कल गुरु अत हि देई । नवम कला जाकी लघु होई ।]

मात्रा समक मे चतुष्कल और अन्त मे गुरु अक्षर पडता है । नवमी मात्रा लघु अक्षर पर पडनी चाहिए । यथा—

नित्य भजिय तजि मन कुटिलाई ।
राम भजे ते किहि गति न पाई ।
राम कहे ते सब दुख जाही ।
राम भजन ते सब सुख आही ।।

(पादाकुलक वर्ग समाप्त)

---

१ कई लेखको ने अरिल्ल के भ-अत रूप को डिल्ल या डिल्ला नाम से अलग छन्द माना है । वस्तुत उनका 'दो लघु अत' वाला रूप भ अन्त का ही रूप है । केशव ने अनेक स्थलो पर अरिल्ल प्रयोग किया है । प्राय उसने सर्वत्र ही भ-अन्त रूप को ही 'अरिल्ल' कहा है ।

चौपाई छन्द

[सोरह कल ज त अन्त न दीजै । चौपाइ शुभ छन्द रचि लीजै ।]

चौपाई के प्रत्येक पाद मे १६ मात्राएँ होती है। अन्त मे जगण (ISI) अथवा तगण (SSI) रखने का निषेध है। इसमे चतुष्कल का भी कोई नियम नही। लय की रुचिरता के लिए समकल (द्विकल-चतुष्कल) के बाद समकल और विषमकल (त्रिकल आदि) के बाद विषम कल आना चाहिए।

प्रयोग की दृष्टि से चौपाई हिन्दी-साहित्य मे सबसे अधिक सर्वप्रिय है। उदाहरण—

जब ते राम ब्याहि घर आए।
नित नव मगल मोद बढाए।
भुवन चारि दस भूधर भारी।
सुकृत मेघ बरषहि सुख-बारी ॥ **(तुलसी)**

१७ मात्रिक महासस्कारी जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे १७–१७ मात्राओ के चार पाद रखे जाते है । प्रस्तार से इसके कुल २५८४ छन्द बन सकते है। साहित्य मे शायद ही इस जाति का कोई छन्द प्रयुक्त हुआ हो। तथापि प्रथा-पालन की मनोवृत्ति से लक्षण-ग्रन्थो मे इसके एकाध छन्द का उल्लेख अवश्य मिलता है ।

राम छन्द

[नव–अठ कला धरि राम य अन्ता ।]

राम छन्द के प्रत्येक पाद मे १७ मात्राएँ होती है। अन्त मे य (ISS) पडता है और यति नौ और आठ पर होती है। यथा—

मनु राम गाये, सुभक्ति सिद्धी ।
विमुख रहै सोइ, लई असिद्धी ।
श्रीराम मेरो शोक निवारो ।
आयो शरण प्रभु, शीघ्र उबारो ॥　　(भानु कवि)

१८ मात्रिक पौराणिक जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे १८-१८ मात्राओ के चार पाद रखे जाते है। प्रस्तार की रीति से इस जाति के कुल ४१८१ छन्द बन सकते हैं। शक्ति इस जाति का प्रसिद्ध छन्द है ।

शक्ति छन्द

[अठारह कला, अन्त शक्ती स र न ।]

शक्ति छन्द के पाद मे १८ मात्राएँ होती है। अन्त मे सगण (IIS) या रगण (SIS) या नगण (III) पडना चाहिए। यदि पहले दो त्रिकल, फिर चतुष्कल, फिर त्रिकल और उसके बाद पचकल हो तो लय बहुत अच्छी चलती है। यथा—

रगण अन्त—　पढो भाइ विद्या भला कर्म है।
करो देश-सेवा यही धर्म है।
अगर काम ऐसा न कुछ भी किया।
वृथा जन्म दुनिया मे[1] तुमने लिया ॥

(बिहारीलाल भट्ट)

नगण अन्त—　बहुत दूर करना तुम्हे है सफर ।
(पूर्वार्घ)　नही जानते राह घर की किधर ।
चले जाइए आप उस ही तरफ ।
भले आदमी जाते[2] है जिस तरफ ॥

---

१. 'में' का लघूच्चारण होने से एक मात्रा गिनी जायगी।
२ 'ते' का लघूच्चारण होने से एक मात्रा गिनी जायगी।

१६ मात्रिक महापौराणिक जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे १६-१६ मात्राओ के चार पाद रखे जाते है। प्रस्तार से इसके कुल ६७६५ छन्द बन सकते है। इस जाति के कुछ एक प्रसिद्ध छन्द ये हैं—

पीयूषवर्षक छन्द

[पीयूष दस-नवहि, रचौ अत लगा।]

पीयूषवर्षक छन्द के पाद मे १६ मात्राएँ होती है। १०-६ पर यति और अन्त मे लघु-गुरु पडे। यथा—

ब्रह्म की है चार जैसी पूर्तियाँ।
ठीक वैसी चार माया मूर्तियाँ।
धन्य दशरथ जनक पुण्योत्कर्ष है।
धन्य भगवद् भूमि भारतवर्ष है।। **(मैथिलीशरण गुप्त)**

सुमेरु छन्द

[कल उन्नीस य-अत रचौ सुमेरू।]

सुमेरु छन्द के पाद मे १६ मात्राएँ होती है। अन्त मे यगरण (।ऽऽ) पडे तो रुचिरता बढ जाती है। यति साधारणतया १०-६, १२-७ आदि पर होती है। प्रथम अक्षर प्राय लघु होता है। यथा—

तुम्हे कर जोर के विनती सुनाऊँ।
तुम्हे तज पास काके और जाऊँ।
निहारौ जू निहारौ जू निहारौ।
बिहारी जू भरोसौ है तुम्हारौ।।

(बिहारीलाल ब्रह्म भट्ट)

ग्रन्थि छन्द

[द्वादश-दश कला का रच लो ग्रन्थि।]

ग्रन्थि छन्द के पाद मे १९ मात्राएँ होती है। यति प्राय १२, ७ या ९, १० पर पडती है। अन्त मे लघु-गुरु पडने चाहिएँ। यथा—

आजकल के छोकरे सुनते नही।
हम बहुत कुछ कह चुके अब क्या कहे।
मानते ही वे नही मेरी कही।
कब तलक हम मारते माथा रहे॥
(अयोध्यासिंह उपाध्याय)

९-१० यति कौन दोषी है यही तो न्याय है।
वह मधुप बिधकर तडपता है उधर।
दग्ध चातक है तरसता विश्व का।
नियम है यह, रो, अभागे हृदय रो। **(पन्त)**

२० मात्रिक महादैशिक जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे २०-२० मात्राओ के चार पाद रखे जाते है। प्रस्तार की रीति से इस जाति के कुल १०९४६ छन्द बन सकते है। हसगति इस जाति का प्रसिद्ध छन्द है।

हसगति छन्द

[मत्त ग्यारह नौ यति रच लो हसगति।]

हसगति के पाद मे २० मात्राएँ होती है ११, ९ पर यति होती है। यथा—

फूल वाटिका बीच आज हम आली।
निरखे राजकिशोर रुचिर रसजाली।
वह मनमोहनि मूर्ति निरख भई चेरी।
सुधि-बुधि हू गइ भूल, थकी मति मेरी॥
(बिहारीलाल ब्रह्मभट्ट)

२१ मात्रिक त्रैलोक जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे २१-२१ मात्राओ के चार पाद रखे जाते है। प्रस्तार की रीति से इस जाति के कुल १७७११ छन्द बन सकते है। प्लवगम इस जाति का प्रसिद्ध छन्द है।

प्लवंगम छन्द

[इक्कीस मत्त, ग आदि बने प्लवगमा।]

प्लवगम छन्द के पाद मे २१ मात्राएँ होती है। आदि मे गुरु अक्षर होना चाहिए। यति प्राय ८, १३ पर होती है। यथा—

साहब सच्चा, राम रमा दिल बीच है।
ढूँढ रहा क्यो, यहाँ वहाँ मति नीच है।
जा बिहार गुरु पास छोड जग का विभू।
तेरे ही मे मिले तुझे तेरा प्रभू॥

(बिहारीलाल ब्रह्मभट्ट)

२२ मात्रिक महारौद्र जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे २२-२२ मात्राओ के चार पद होते है। प्रस्तार की रीति से इसके कुल २८६५० छन्द बन सकते है। इस जाति मे प्रसिद्ध छन्द ये है—

राधिका छन्द

[तेरह नौ पर पडे तो राधिका है।]

राधिका छन्द के पाद मे २२ मात्राएँ होती है। १३-९ पर यति होनी चाहिए। यथा—

बैठी है वसन मलीन, पहन इक बाला।
पुरइन पत्रो के बीच, कमल की माला।
उस मलिन बसन मे अग प्रभा दमकीली।
ज्यो धूसर नभ मे चन्द्र कला चमकीली।

(जयशकर प्रसाद)

कुण्डिल छन्द

[बारह दस पै यदि यति, कुण्डिला य-अता ।]

कुण्डिल छन्द के पाद मे २२ मात्राएँ होती है । यति १२-१० पर और अत मे यगरण (।ऽऽ) होता है। यथा—

जय कृपालु कृष्ण चन्द्र फन्द को कटैया ।
बिन्द्रावन कुज कुज खोर के खिलैया ।
मोर मुकुट हाथ लकुट बैनु के बजैया ।
कवि बिहार कृपा करहु नन्द के कन्हैया ।

(बिहारीलाल भट्ट)

सुखदा छन्द

सुखदा के पाद मे २२ मात्राएँ होती है। यति १२, १० पर पडती है। अत मे दो लघु पडने चाहिएँ । यथा—

ज्यो अति प्यासो पावै
मग ने गगा जलु ।
प्यास न एकहु बुझाइ,
बुझै जै ताप बलु ।
त्यो तुम ते हमको कछु,
न भयो एकहु सुख ।
पूरे सकल मन काम,
जु देख्यो राम मुख । **(केशव)**

२३ मात्रिक रौद्रार्क जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे २३-२३ मात्राओ के चार पाद होते है। प्रस्तार की रीति मे इसके ४६३६८ छन्द बन सकते है। हीरक इस जाति का प्रसिद्ध छन्द है। केशव ने इसका आम प्रयोग किया है।

हरीक छन्द

हरीक छन्द के पाद मे २३ मात्राएँ होती है। आदि अक्षर गुरु और अन्त मे तगण (ऽऽ।) पडना चाहिए। यति ६, ६, ११ पर पडती है। यथा—

पण्डित गण, मडित गुण, दडित मति देखिए।
क्षत्रिय वर, धर्म प्रवर, क्रुद्ध समर लेखिए॥
वैश्य सहित सत्य रहित, पाप प्रकट मानिये।
शूद्र सकति, विप्र भगति, जीव जगति जानिए॥ **(केशव)**

२४ मात्रिक अवतारी जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे २४, २४ मात्राओ के चार पद रखे जाते हैं। प्रस्तार की रीति मे इसके ७५०२५ छन्द बन सकते है। इसके कुछ-एक प्रसिद्ध छन्द ये है—

रोला छन्द

ग्यारह तेरह यती, कल चौबीस कहु रोला

रोला के पाद मे २४ मात्राएँ होती है। यति ११, १३ पर पडती है। अत मे दो गुरु या दो लघु पडते है।[1] यथा—

---

१ रोला छन्द बहुत सर्वप्रिय है और साहित्य में खूब प्रयुक्त हुआ है। 'कुण्डलिया' और छप्पय आदि में भी इसे बरता गया है, लक्षण आचार्यों ने यति और विशेष मात्रा के लघु गुरु भेद से इसके अनेक नाम बताए है। परन्तु यह स्मरण रखना चाहिए कि बहुधा कवियो ने इन सूक्ष्म भेदो को नही माना है। १२, १२ यति, ११ वी मात्रा लघु ११ वी मात्रा गुरु आदि सब भेदो को वे रोला ही मानते है। हिन्दी लक्षणकारो मे बाबा भिखारीदास ने २४ मात्राएँ ही इसका लक्षण किया है और कोई यति का नियन्त्रण आदि इस पर नही लगाया। प्रयोग की दृष्टि से यही लक्षण अधिक चरितार्थ है।

सुभ सूरज कुल कलस, नृपति दसरथ भै भूपति ।
तिनके सुत भै चारि चतुर चित-चारु चारुमति ।।
रामचन्द्र भुवचन्द्र, भरत भारत-भुव-भूषण ।
लक्ष्मण और शत्रुघ्न, दीह दानव-दल दूषण ।। **(शकेव)**

दो गुरु अन्त—ससि बिनु सूनी रैन, ज्ञान बिन हिरदै सूनौ ।
कुल सूनो बिन पुत्र, पत्र बिन तरुवर सूनौ ।। इत्यादि

दिगपाल छन्द

कल भानु-भानु भावै । दिगपाल छन्द गावै ।।

दिगपाल के प्रत्येक पाद मे २४ मात्राएँ होती है । १२, १२ पर यति पडती है । पाँचवी और सत्रहवी मात्रा पर लघु पडे तो लय मे विशेष रुचिरता आ जाती है । यथा—

मै ढूँढता तुझे था, जब कुञ्ज और वन मे ।
तू खोजता मुझे था, तब दीन के वतन मे ।।
तू आह बन किसी की, मुझको पुकारता था ।
मै था तुझे बुलाता, सगीत मे भजन मे ।।
(रामनरेश त्रिपाठी)

यह छन्द प्राय गजल की तरज पर ठेका कव्वाली मे गाया जा सकता है । यथा—

सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्ताँ हमारा ।
अथवा
पीछे कदम जरा भी हक से न डालते है ।
यद्वा
क्या क्या मची है यारो, बरसात की बहारे ।
अथच
मुरली मुकुन्द जी की, बैरिन भई हमारी । इत्यादि ।

सुगीत छन्द

सुगीत छन्द के प्रत्येक पाद मे २५ मात्राएँ होती है । यति १५, १० पर या १३, १२ पर होती है । अन्त मे गुरु-लघु अक्षर पडने चाहिएँ । महाकवि केशव ने अपना वश-परिचय इसी छन्द मे दिया है । यथा—

सनाढ्य जाति गुनाढ्य है जग सिद्ध सुद्ध स्वभाव ।
कृष्णदत्त प्रसिद्ध हैं महि मिश्र पण्डित राव ।।
गनेस सो सुत पाइयो, बुध काशिनाथ अगाध ।
अशेष शस्त्र विचारि कै, जिन जानियो मत साध ।। **(केशव)**

मुक्तामणि

सगीत के ही छन्द मे यदि लघु के स्थान पर गुरु पड जाय और यति १३, १२ पर हो तो उसे मुक्तामणि कहते है । वस्तुत ये दोनो छन्द दोहे मे एक मात्रा की वृद्धि करके अन्य इसके सम चतुष्पादी रूप है । अन्त मे ऽ। पडे तो सुगीत और यदि ऽऽ पडे तो मुक्तामणि । यथा—

कुण्डल ललित कपोल पर, सुछवि देत है ऐसे ।
घन मे चपला दमकि अति, लग नीकी दुति जैसे ।।
चन्दन खौर विराज शुचि, मनु लछमी अति राजै ।
सब आभा तिहुँ लोक की, मुख के आगे लाजै ।।

(नायक)

२६ मात्रिक महाभागवत जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे २६, २६ मात्राओ के चार पाद रहते है । प्रस्तार की रीति से इसके १९६४१८ छन्द बन सकते है । इस जाति के कतिपय प्रसिद्ध छन्द नीचे दिये जाते है—

झूलना छन्द

झूलना छन्द के प्रत्येक पाद मे २६ मात्राएँ होती है। प्राय १४, १२ या ७, ७, ७, ५ पर यति और अन्त मे गुरु-लघु अक्षर पडते है। मध्ययुगीन कवियो ने इसका आम प्रयोग किया है।[1] यथा—

तब लोकनाथ विलोकि कै रघुनाथ को निज हाथ।
सविशेष सो अभिषेक की पुनि उच्चरी शुभ गाथ॥
ऋषिराज इष्ट वसिष्ठ सो मिलि गाधिनदन आइ।
पुनि वालमीकि वियास आदि जिते हुते मुनि राइ॥ (**केशव**)

गीतिका

रत्न-रविकल धारि कै लग अन्त रचिये गीतिका।

इस छन्द के प्रत्येक पाद मे २६ मात्राएँ होती है। यति १४-१२ पर और अन्त मे लघु गुरु (।ऽ) वर्ण होते है। पुराने और नए कवि इस छन्द का आम प्रयोग करते है।[2] यथा—

साधु भक्तो मे सुयोगी, सयमी बढने लगे।
सभ्यता की सीढियो पै, सूरमा चढने लगे॥
वेद-मत्रो को विवेकी, प्रेम से पढने लगे।
वचको की छातियो मे, शूल-से गढने लगे॥ (**कवि शकर**)

विष्णुपदी

सोलह दस कल अत गुरू करि रचिये विष्णुपदी।

---

१ यद्यपि लक्षण आचार्यों ने ७, ७, ७, ५ पर इसकी यति बताई है, तथापि केशव के बीसियों 'झूलना' छन्दो को देखकर १४, १२ की यति ही ठीक बैठती है। लक्ष्य को देखकर ही लक्षण किया जाना चाहिए।

२ केशव का गीतिका छन्द २८ मात्रा का है। उसके हरिगीत और गीतिका में यति के भेद के अतिरिक्त और कोई अन्तर उपलब्ध नहीं होता।

इस छन्द के प्रत्येक पाद मे २६ मात्राए होती है। यति १६-१० पर और अन्त मे गुरुवर्ण पडना चाहिए। पुराने कवियो ने इसका आम प्रयोग किया है। सन्त और भक्त कवियो की वाणी मे इसके परिवर्धित रूप (चार पाद से अधिक पाद वाले) मिलते है। उदाहरण—

बैठे साधु समाधि ज्ञान की सुन्दर सोध धरी।
गगन पथ सगुन सुमरि कै निरगुन गैल धरी॥
मारग चलत समय ने झगरो शका चित्त परी।
तब गुरु सन्मुख आय दरस दै सिगरी व्याधि हरी॥ (ब्रह्मभट्ट)

हरिपदी

यदि विष्णुपदी के अन्त मे ।ऽ के स्थान पर ऽऽ हो तब हरिपदी नाम का छन्द मानते है। यथा—

झूठा है ससार इसे सच मत समझो भाई।
जैसे कोइ बादिगिर अपनी रचना बगराई॥
देख देख चक्कृत भइ दुनिया, हाय न कछु आई।
लख हिरनी सूरज की किरनी, जल का भ्रम खाई॥ (ब्रह्मभट्ट)

२७ मात्रिक नाक्षत्रिक जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे २७--२७ मात्राओ के चार पाद रखे जाते है। प्रस्तार की रीति से इसके ३१७८११ छन्द बन सकते है। सरसी इस जाति का प्रसिद्ध छन्द है।

सरसी छन्द

सोलह-ग्यारह अन्त गा-ल रचि, सरसी छन्द सुजान।

सरसी के प्रत्येक पाद मे २७ मात्राएँ होती है। यति १६-११ पर और अन्त मे गुरु-लघु (ऽ।) पडने चाहिएँ। यथा—

काम क्रोध मद लोभ मोह की, पँचरगी कर दूर।
एक रग तन मन वाणी मे, भर ले तू भरपूर।
प्रेम पसार न भूल भलाई, वैर विरोध बिसार।
भक्ति भाव से भज शकर को, भक्ति दया उर धार॥

(कवि शंकर)

विशेष—पजाब मे जैसे कोरडा छन्द प्रसिद्ध है वैसे ही यू० पी० मे होली के दिनो मे इस छन्द के पलटे आम गाए जाते है। यथा—

कोई नचावे रडी मुडी, कथक भाँड धन खोय।
आप नचाइय विद्या देवी, मुलक-मुलक जस होय॥
आपस मे ना करै मुकदमा, घूस हजारो देय।
डिगरी पावै खरचा जोडै, लबी सासे लेय॥
बहू बेटियाँ मात-पिता की, कही न मानै बात।
पढे गुने बिन यही फजीहत, दाऊ जी अकुलात॥ इत्यादि

(भानु से उद्धृत)

इस छन्द को 'कबीर' और 'समुदर' भी कहते है।

२८मात्रिक यौगिक जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे २८-२८ मात्राओ के चार पाद रहते है। प्रस्तार की रीति से इस जाति के ५१४२२९ छन्द बन सकते हैं। इस जाति के अनेक छन्द बहुत प्रसिद्ध और साहित्य मे बहुत प्रयुक्त है। इनमे से कुछ-एक ये है—

हरिगीतिका

षोडश-द्वादश अत ल-ग करि, गाइए हरिगीतिका।

हरिगीतिका पाद मे २८ मात्राएँ होती है। यति प्राय १६-१२ पर पडती है। अन्त मे लघु-गुरु होने चाहिएँ। प्रयोग की दृष्टि से यह छन्द बहुत ही सर्व-प्रिय है। पुराने और आजकल के लब्धप्रतिष्ठ कवियो ने इसे

अपनाया है। श्री मैथिलीशरण गुप्त का तो यह बहुत ही प्यारा छन्द है। इसी का परिवर्धित रूप हमे सन्त और भक्त कवियो की गीतिकाओ मे मिलता है। तुलसी, सूर, केशव और भूषण ने भी इसका यथेष्ट प्रयोग किया है। उदाहरण—

पुर से निकल जब प्रान्त के पथ पर चला वह शीघ्र ही।
तब अगपति से कृष्ण ने यह युक्ति-युक्त गिरा कही॥
हे जीव! भीषण युद्ध होना हो गया अनिवार्य है।
अब धर्मंत सबके लिए कर्तव्य-प्रश्न विचार्य है॥

(आनन्दकुमार)

विधाता छन्द

विधाता के पाद मे २८ मात्राएँ होती है। यति १४-१४ पर होती है। पहली, आठवी और पन्द्रहवी मात्रा सदा लघु पर पडनी चाहिए। पुराने साहित्य मे इसका प्रयोग भी यथेष्ट मिलता है। आजकल तो यह आम गजल की तर्ज़ पर चलता है। यथा—

खलक सब रैन का सपना, समझ मन कोई नहि अपना।
कठिन है मोह की धारा, बहा सब जात ससारा॥
घडा ज्यो नीर का फूटा, पतर ज्यो डार से टूटा।
ऐसे नर जात जिदगानी, अजहुँ तौ चेत अभिमानी॥ **(कबीर)**

जती ले जाति के सारे, प्रबन्धो को टटोलेगे।
जनो को सत्य सत्ता की, तुला से ठीक तोलेगे॥
बनेगे न्याय के नेगी, खलो की पोल खोलेगे।
करेगे प्रेम की पूजा, रसीले बोल बोलेगे॥ **(कवि शकर)**

यद्वा

भलाई को न भूलेगे, सुशिक्षा को न छोडेगे।
हठीले प्राण खो देंगे, प्रतिज्ञा को न तोडेगे॥ इत्यादि

अथवा

न छोडा साथ लछमन ने, बिरादर हो तो ऐसा हो। इत्यादि सब विधाता की ही तर्जे है।

सार छन्द

सार के पाद मे २८ मात्राएँ होती है। यति प्राय १६-१२ पर पडती है। अन्त मे दो गुरु होने चाहिएँ। यथा—

पैदा कर जिस देश जाति ने, तुमको पाला-पोसा।
किये हुए है वे निज हित का, तुमसे बडा भरोसा॥
उससे होना उऋण प्रथम है, सत्कर्तव्य तुम्हारा।
फिर दे सकते हो वसुधा को, शेष स्वजीवन सारा॥

(रामनरेश त्रिपाठी)

२९ मात्रिक महायौगिक जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे २९-२९ मात्राओ के चार पाद रखे जाते है। प्रस्तार की रीति से इस जाति के ८३२०४० छन्द बन सकते है। मरहटा इस जाति का प्रसिद्ध छन्द है जिसका प्रयोग केशव आदि महाकवियो के ग्रन्थो मे प्रचुरता से मिलता है।

मरहटा छन्द

मरहटा छन्द के पाद मे २९ मात्राएँ होती है। यति १०, ८, ११ पर पडती है। अन्त मे गुरु-लघु होते हैं। यथा—

इक दिन रघुनायक, सीय सहायक, रतिनायक अनुहारि।
शुभ गोदावरि तट विमल पचवट, बैठे हुते मुरारि।
छवि देखत ही मदन मथ्यो तनु, शूर्पणखा तिहि काल।
अति सुदर तनु करि, कछु धीरज धरि, बोली वचन रसाल॥ **(केशव)**

३० मात्रिक महातैथिक जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे ३०-३० मात्राओ के चार पाद रखे

जाते हैं। इस जाति के १३४६२६९ छन्द बन सकते हैं। इस जाति के कतिपय प्रसिद्ध छन्द ये हैं—

चतुष्पदी (चवपैया) छन्द

चवपैया के पाद मे ३० मात्राएँ होती ह। यति १०, ८, १२ पर पडती है। अन्त मे दो या एक गुरु होना चाहिए। यथा—

भृगुनदन सुनिये, मन महँ गुनिये, रघुनदन निर्दोषी।
निजु ये अविकारी, सब सुखकारी सब ही विधि सतोषी॥
एकै तुम दोऊ, और न कोऊ एकै नाम कहायौ।
आयुर्बल खूटयो, धनुष जु टूटयो, पै तन-मन सुख पायौ॥ **(केशव)**

ताटंक छन्द

ताटक के पाद मे ३० मात्राएँ होती है। यति १६, १४ पर पडती है और अत मे तीन गुरु (मगण ऽऽऽ) होने चाहिएँ। यथा

देव तुम्हारे कई उपासक, कई ढग से आते है।
सेवा मे बहुमूल्य भेट, वे कई रग की लाते हैं॥
धूम-धाम से साज-बाज से वे मदिर मे आते है।
मुक्तामणि बहुमूल्य वस्तुएँ, लाकर तुम्हे चढाते है॥

(सुभद्राकुमारी चौहान)

[यदि अन्त मे तीन गुरु पडने का नियम ढीला कर दिया जाय तो यही छन्द ख्याल और लावनी की तर्जो पर चल सकता है] यथा—

सुनि-सुनि बतियाँ नदलाल की, प्रेम फद सब उरझानी।
मन हर लीनो नट नागर प्रभु, भूल उरहनो पछतानी॥
मातु लियो गर लाय लाल को, तपन हिये की सियरानी।
भानु निरखि तब बालकृष्ण छवि, गोपि गई घर हरषानी॥

(भानु कवि)

३१ मात्रिक अश्वावतारी

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे ३१, ३१ मात्राओ के चार पाद रखे जाते है। प्रस्तार की रीति से इसके २१७८३०९ छन्द बन सकते हैं। वीर या 'आल्हा' इस जाति का प्रसिद्ध छन्द है।

वीर (आल्हा) छन्द

वीर के पादो मे ३१ मात्राएँ होती है। यति ८, ८, १५ पर पडती है। अन्त मे ऽ। गुरु-लघु पडते हे। प्रसिद्ध आल्हा इसी मे गाया जाता है। जगनिक ने इसका आम प्रयोग किया है। यथा—

मुर्चा लौटो तब नाहर को, आगे बढे पिथोरा राय।
नौ सै हाथिन के हलका मा, इकले घिरे कनौजी राय।।
सात लाख से चढ्यो पिथौरा, नदी वेतवा के मैदान।
आठ कोस लौ चले सिरोही, नाही सूझै अपुन बिरान।।

(जगनिक)

वर्तमान मे श्री आनन्दकुमार ने अपने 'अगराज' मे इसका आम प्रयोग किया है। यथा—

दिया कृष्ण ने दुर्योधन को, निज सेना रूपी उपहार।
और निरायुध स्वय पार्थ का, रथ-सारथ्य किया स्वीकार।।
लौटे वे निज-निज देशो को, हरि-सत्कृति से परम प्रसन्न।
आये वहाँ ससैन्य अयुत थे नृपगण सेना-दल-सम्पन्न।।

(अंगराज)

३२ मात्रिक लाक्षणिक जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे ३२, ३२ मात्राओ के चार पाद रहते है। प्रस्तार की रीति से इसके ३५२४५७८ छन्द बन सकते है। इस जाति के कुछ-एक प्रसिद्ध छन्द ये है—

त्रिभंगी छन्द

त्रिभगी छन्द के प्रत्येक पाद में ३२ मात्राएँ होती है । यति १०, ८, ८, ६, पर पडती है । अन्त मे गुरु पडना चाहिए । तुलसी, केशव आदि पुराने कवियो ने इसका प्रयोग किया है । यथा—

मुनि साप जु दीन्हा, अति भल कीन्हा, परम अनुग्रह मै माना ।
देखिउँ भरि लोचन, हरि भव मोचन, इहै लाभ शकर जाना ।।
विनती प्रभु मोरी, मै मत भोरी, नाथ न माँगौ वर आना ।
पद कमल परागा, मै रस अनुरागा, मम मन मधुप करै पाना ।।

(तुलसी)

समान छन्द

समान के पाद मे ३२ मात्राएँ होती हैं । यति १६, १६ पर और अन्त मे प्राय भगरण ऽ।। होता है । यथा—

रे मन मूरख कहाँ फिरै तू, बीहड विषय विपिन महँ डोलत ।
श्री रघुनाथ चरण नहिं सेवत, नीरस दारा मुत सुख जोहत ।।
जब लग शरणागत ना प्रभु की, तब लगि भगि बाधा तुहि बाधत ।
पाप पु ज हो छार छनक मे, जब राम नाम मन आराधन ।

(छन्द शिक्षा)

तंत्री छन्द

इसके प्रत्येक पाद मे ३२ मात्राएँ होती है । यति ८, ८, ६, १० पर रखने का नियम है । अन्त मे दो गुरु अक्षर होने चाहिएँ यथा—

बोलत कैसे रघुपति सुनिये,
सो कहिये तन मन बनि आवौ ।
आदि बडे हौ, बडपन राखौ,
जाते तुम सब जग जस पावौ ।।

चन्दन हू मे अति तन घसिये,
आगि उठै यह गुनि सब लीजौ ।
हृदय मारे नृपति सँहारे,
सो जस लै किन जुग-जुग जीवौ ॥ (केशव)

पद्मावती छन्द

इसके प्रत्येक पाद मे ३२ मात्राएँ होती है । यति १०, ८, १४ पर और अन्त मे दो गुरु पडने चाहिएँ । यथा—

यद्यपि जग कर्ता पालक हर्ता,
परिपूरण बेदन गाए ।
अति तदपि कृपा करि मानुष वपु धरि,
थल पूछन हम सौ आये ॥
सुनु सुरवर नायक, राक्षस घायक,
रक्षहु मुनि जन जस कीजै ।
शुभ गोदावरी तट विखद पचवट,
परण कुटी तहँ प्रभु कीजै ॥ (केशव)

एक प्रकार से यह छन्द चौपाई का द्विगुण रूप है । इससे पूर्व एक दोहा लगाकर विमल ध्वनि नामक षट्पदी छन्द बन जाता है । इसी प्रकार से पादाकुलक का भी एक द्विगुणित रूप है । जिसे मत्त सवैया कहते है ।

इति मात्रिक जातिक छन्द प्रकरण

[ख] मात्रिक दण्डक

बत्तिस कल ते अधिक पद मत्तर दडक जान (भानु)

ऊपर लिखे आए है कि ३२ मात्राओ तक के छन्द भिन्न-भिन्न जातियो मे बँटे हुए है । इनका निर्देश ऊपर हो चुका है । ३२ से अधिक मात्राओ के पाद वाले छन्दो को दण्डक कहते है । दण्डको के भी चार

पाद होते है और प्रत्येक पाद मे मात्रा-सख्या बराबर होती है। हिदी के लम्बे छन्दो मे प्राय दण्डको का प्रयोग हुआ है। तुलसी, केशव, पद्माकर आदि की रचना मे मात्रा दण्डक प्राय मिलते हे। कुछ एक विशेष प्रसिद्ध दण्डको का वर्णन नीचे दिया जाता है।

४० मात्रिक मदनहर दण्डक

इसके पाद मे ४० मात्राएँ रखी जाती है। यति १०, ८, १४, ८ पर पडती है। लक्षणकारो के अनुसार इसके आदि के दो अक्षर लघु और अन्त मे एक गुरु होना चाहिए। परन्तु केशव के प्रयोग मे आदि के लघुद्वय का नियम नही माना गया। यथा—

संग सीता लक्ष्मण, श्री रघुनन्दन,
मातन के शुभ पाँय परे, सब दु ख हरे।
आँसुन अन्वाहे, भागनि आये,
जीवन पाये अक भरे अरु अक धरे॥
ते वदन निहारै, सरवसु वारै,
देहि सबै सबहीन धनो, अरु लेहि धनो।
तन मन न सँभारै, यहै विचारै,
भाग बडो यह है अपनो, किधौ है सपनो॥ (केशव)

४० मात्रिक विजया दण्डक[1]

इस दण्डक के प्रत्येक पाद मे ४० मात्राएँ होती है। यति १० १०

---

१ केशव ने अपनी 'रामचन्द्रिका' ६ ३५ में एक मत्त मातग लीला करण दण्डक का प्रयोग किया है जो विजया दण्डक के समान ४० मात्राओ और १० १० १० १० यति का दण्डक है। उसकी लय नि सन्देह विजया से भिन्न है। लक्षण-आचार्यों के अनुसार मत्त मातग लीलाकरण वर्णिक दण्डक है जिसमें ९ रगण रखे जाते है। परन्तु केशव

१० १० पर पडती है। अन्त मे रगण (ऽ।ऽ) पडता है। पुराने साहित्य मे इस दण्डक का यथेष्ट प्रयोग हुआ है। यथा—

प्रथम टकोर झुकि, झारि ससार मद,
चड कोदड रह्यो, मडि नव खड को।
चालि अचला अचल, मालि दिगपाल बल,
पालि ऋषिराज के, वचन परचड को॥
सोधु दै ईश को, बोधु जगदीश को,
क्रोधु उपजाइ भृगुनद बरिवड को।
बाधि वर स्वर्ग को, साधि अपवर्ग धनु-,
भग को शब्द गयो, भेदि ब्रह्माड को॥ **(केशव)**

४० मात्रिक सुभग दण्डक

यदि विजया दण्डक के अन्त मे रगण (ऽ।ऽ) के स्थान पर तगण

के इस दण्डक में ८ ही रगण है। वर्णिक वृत्त के लक्षण-अनुसार यह 'गगोदक सवैया' है, परन्तु केशव ने उसका नाम 'मत्त मातग लीलाकरण दण्डक' लिखा है। इससे प्रतीत होता है कि सम्भवत केशव के अनुसार मत्तमातग लीलाकरण मात्रिक दण्डक भी है। इस नाम के वर्णिक दण्डक को आगे देखिये। केशव का उक्त दण्डक यह है—

मेघ मदाकिनी चारु सौदामिनी,
रूप रूरै लसै देह धारी मनौ।
भूरि भागीरथी भारती हसजा,
अश के है मनो भाग मारे मनौ॥
देवराजा लिये देवरानी भनौ,
पुत्र सयुक्त भूलोक में सोहिये।
पक्ष दू-सधि सध्या सधी है मनौ,
लक्षि ये स्वरूप प्रत्यक्ष ही मोहिये॥ (केशव)

(ऽऽ।) या जगण (।ऽ।) पडे तो वही सुभग दण्डक माना जाता है। यथा—

अवधेस सुत बक, कर क्रोध धनु टक,
सुन कप गढ लक, खल जूथ विचलत।
सनमुक्ख अरि आहि, ते तार तन खाहि,
लुट भूमि भहराहि, झट स्वास सरकत ॥
चहुँ ओर उदभट्ट, कवि भट्ट सम धट्ट,
अरि कट्ट जय शब्द, सु 'विहार' भाषत।
सर छोड अति चड, दस सीस सिर खड,
रघुबीर बलवड, रनजीत राजत ॥

(बिहारीलाल ब्रह्मभट्ट)

४४ मात्रिक विनय दण्डक

इनके प्रत्येक पाद मे ४४ मात्राएँ होती है। यति प्राय १२ १२, १२ ८ अथवा १२ १२, १० १० पर पडती है। अन्त मे प्राय रगण (ऽ।ऽ) होता है। तुलसी की 'विनय पत्रिका' मे इसका विशेष प्रयोग मिलता है। यथा—

जय जय जग जननि देवि, सुर-नर-मुनि-असुर सेवि,
भुक्ति मुक्ति दायिनि, भय हरनि कालिका।
मगल मुद सिद्धि सदनि, पर्व-सर्वरीस बदनि,
ताप - तिमिर - तरुन, - तरनि - किरन - मालिका ॥
वर्म चर्म कर कृपान, सूल सेल धनुषबान,
धटनि दलनि दानव दल, रन करालिका।
पूतना पिशाच प्रेत, डार्किनि साकिनि समेत,
भूत ग्रह वेताल, खग मृगालि जालिका ॥

(तुलसी)

४६ मात्रिक चंचरीक दण्डक

इसके प्रत्येक पाद मे ४६ मात्राएँ होती है । यति प्राय १२ १२ १२. १० पर पडती है। अन्त मे एक गुरु अक्षर होता है। यथा—

जाको नहिं आदि अत, जननि जनक देव कत
रूप रग रेख रहित, व्यापक जग जोई ।
मच्छ, कच्छ, कोल रूप, वामन, नर हरि, अनूप,
परसुराम, रामकृष्ण, बुद्ध, कल्कि सोई ॥
मधु रिपु, माधव मुरारि, करुनामय कैटभारि,
रामादिक नाम जासु, जाहिर बहुतेरो ।
कोमल सुभ वास मजु, सुषमा सुख सील गजु,
ता को पद-कज चित्त, चचरीक मेरो ॥

(दास)

इसी का दूसरा नाम 'हरिप्रिया' है ।

२. अर्धसम मात्रिक छन्द

अर्धसम मात्रिक छन्द भी प्राय चतुष्पादी छद है। परन्तु इनके चारो पाद एक समान नही होते—पहला और तीसरा एक समान होते है और दूसरा और चौथा आपस मे मिलते हैं । (विषम विषम, सम सम चरण तुल्य अर्धसम छंद) ये प्राय छोटे-छोटे छन्द ही है। बडे और लबे छन्दो में 'अर्धसम' कही नही मिलते। छोटे होने के कारण ही इनको दो ही पक्तियो में लिखते हैं (चार में नही) । पहला और दूसरा पाद एक पक्ति मे और तीसरा और चौथा पाद दूसरी पक्ति में । इन 'द्विपादी' पक्तियो को 'दल' या 'अर्धं' कहते है । इस प्रकार अर्धसम छन्द प्राय सभी 'द्विदलीय' छन्द है। लघुछद होने के कारण ही इनकी यति प्राय पाद के अत में पडती है ।

हिन्दी के विशेष प्रसिद्ध अर्धसम मात्रिक छद ये है—

नवीन छन्द

इसके विषम—प्रथम, तृतीय पादो मे नौ-नौ, और सम—द्वितीय, चतुर्थ पादो मे आठ-आठ मात्राएँ होती है। प्रत्येक पाद के अंत मे प्राय दो गुरु पडते है।

यथा—सजन सुखदाई। स्याम कन्हाई।
ललो सग राजो, रूप जुन्हाई॥ (**बिहारीलाल भट्ट**)

बरवै छन्द

इस छन्द के विषम (१,३) पादो मे १२-१२ और सम (२,४) पादो मे ७-७ मात्राएँ होती है। सम पादो के अंत मे प्राय जगण (।ऽ।) या तगण (ऽऽ।) पडता है। यथा—

अवधि-शिला का उर पर। था गुरु भार।
तिल-तिल काट रही थी। दृग जल धार॥ (**साकेत**)

तथा च—

सबसे मिलकर रह मन। वैर विसार।
दुर्लभ नर तनु पाकर। कर उपकार॥

दोहा

विषम चरण तेरह कला, सम ग्यारह निरधार।
प्रथम तृतिय वर्जित जगण, दोहा विविध प्रकार॥

दोहा छन्द के प्रथम तथा तृतीय पाद मे १३, १३ और द्वितीय तथा चतुर्थ पाद मे ११, ११ मात्राएँ होती है। यति पाद के अन्त मे ही होती है। विषम पादो के आदि मे जगण (।ऽ।) नही आना चाहिए। सम पादो के अन्त मे लघु पडता है। तुक प्रायः सम पादो की मिलती है, विषमो की नही। यथा—

रण मह विह्वल वाहिनी, करती जय-जय कार।
बढी वेग से यो यथा, नदी पूर की धार॥

(**अगराज**)

प्रयोग की दृष्टि से यह छन्द बहुत सर्वप्रिय है। कबीर, सूर, तुलसी, केशव, बिहारी, रहीम, वृन्द आदि प्राय सभी प्राचीन तथा वियोगी हरि आदि अनेक अर्वाचीन कवियो ने इसका अत्यधिक प्रयोग किया है। प्रयोग की प्रचुरता के कारण ही इसके रूप-भेद भी अनेक हो गए है। प्रत्येक कवि का अपना-अपना रूप (Pattin) है। लक्षणकारो ने दोहे के लगभग २३ भेद बताए है, परन्तु वे सब अनावश्यक विश्लेषण-प्रवृति के परिणाम दीखते है। उनमे विशेष सार वस्तु उपलब्ध नही होती।

सोरठा

[दोहा उलटे सोरठा]

दोहे का उलटा रूप सोरठा है, अर्थात् इसके विषम पादो मे ११, ११ और सम पादो मे १३, १३ मात्राएँ होती है। साहित्य में इसका प्रयोग भी प्रचुरता से मिलता है। यथा—

मूक होई वाचाल, पगु चढै गिरिवर गहन।
जासु कृपा सु दयाल, द्रवौ सकल कलिमल दहन ॥

उल्लाला

इसके विषम पादो मे १५ और सम पादो मे १३ मात्राएँ होती है।

उदाहरण

हे शरण दायिनी देवि तू, करती सबका त्राण है।
हे मातृ भूमि ! सतान हम, तू जननी तू प्राण है ॥

(मैथिलीशरण गुप्त)

छप्पय आदि के निर्माण मे इसके पाद रखे जाते है। इसका स्वतत्र प्रयोग भी मिलता है।

३. विषम मात्रिक छन्द

[ना सम, ना पुनि अर्धसम, विषम जानिये छन्द] (भानु)

जो छन्द चतुष्पादी सम मात्रिक न हो, और जिनमे अर्धसम मात्रिक छन्दो का लक्षण भी न मिलता हो, ऐसे अनियमित और मिश्रित छन्दो को विषम छन्द कहते है।

हिन्दी मे विषमपादी छन्द दो प्रकार के है। एक सयुक्त छद, जो किन्ही दो छन्दो के सयोग से बने होते है। अतएव इनके पाद भी चार से अधिक ही होते है। दूसरे वे जो एक ही छन्द के चार से अधिक पादी रूप होते है—जैसे किसी नियमित चार पादी छन्द के पाँच या छ या आठ पाद रच दिए जायँ, तो उसकी भी विषम वृत्तो मे ही गणना की जाती है। कबीर, सूर, तुलसी आदि की गीतियाँ भी यही प्रवर्धित पादी विषम छन्द है। आजकल के अनियमित पादी छन्दो को भी इन्ही मे गिन सकते है।

हिन्दी के पुराने साहित्य में प्रयुक्त प्रधान विषम मात्रिक छन्द ये है—

(क) संयुक्त छन्द

कुण्डलिया

[दोहा+रोला]

यदि पूर्वोक्त रोला छन्द (११+१३=२४ मात्राएँ) से पहले एक दोहा (१३+११=२४ मात्राएँ) रख लिया जाय तो यह कुण्डलिया छन्द बन जाता है। दोहे के चार पाद इसमें दो ही गिने जाते हैं—दोहे का पूर्वदल और उत्तरदल कुण्डलिया के क्रमश प्रथम और द्वितीय पाद गिने जाते है। इस प्रकार इसके छ पाद हो जाते है। प्रत्येक पाद मे २४-२४ मात्राएँ होती हैं।

इसकी रचना-विधि में यह नियम रखा जाता है कि दोहे के चौथे पाद (११ मात्रा) को रोला के प्रथम पाद (११ मात्रा) मे दोहराया

जाता है। दोहे का प्रथम पाद जिस अक्षर से प्रारम्भ किया जायगा, वही अक्षर रोला के चतुर्थ पाद के अन्त मे भी रखा जाता है। यति के नियम भी दोहा और रोला के ही हैं (१३-११ दोहे मे और ११-१३ रोला मे)।

हिन्दी मे कुण्डलियो का आम चलन है। गिरिधर कविराय की कुण्डलियाँ विशेष प्रसिद्ध हैं। वैसे तुलसी, केशव आदि सबने कुण्डलियाँ लिखी है। आजकल के कवि भी इनका प्रयोग आम करते है। गिरिधर कविराय की एक कुण्डली देखिए—

दौलत पाय न कीजिये, सपने मे अभिमान।
चचल जल दिन चारि को, ठाँउ न रहत निदान॥
ठाँउ न रहत निदान, जियत जग मे जस लीजै।
मीठे वचन सुनाय, विनय सब ही की कीजै॥
कह गिरिधर कविराय, अरे यह सब घर तौलत।
पाहुन निसि दिन चारि रहत सब ही के दौलत॥

केशव की कुण्डलिया का नमूना—

टूटै टूटनहार तरु, वायुहिं दीजत दोस।
त्यो अब हर के धनुख को, हम पर कीजत रोस॥
हम पर कीजत रोस, कालगति जानि न जाई।
होनहार ह्वै रहै, मिटै मेटी न मिटाई॥
होनहार ह्वै रहै, मोह मद सबको छूटै।
होइ तिनूका वज्र, वज्र तिनुका ह्वै टूटै॥ (केशव)

खडी बोली की कुण्डलिया—

बगला बैठा ध्यान में, प्रात जल के तीर।
मानो तपसी तप करे, मलकर भस्म शरीर॥
मलकर भस्म शरीर, तीर जब देखी मछली।
कहै 'मीर' ग्रसि चोच, समूची फौरन निगली॥

फिर भी आवे शरण, बैर जो तज के अगला।
उनके भी तू प्राण, हरे रे, छी! छी! बगला॥

(सैयद अमीरअली 'मीर')

छप्पय

[रोला (११+१३=२४×४) तथा उल्लाला
(१५+१३=२८×२)]

छप्पय छन्द रोला और उल्लाला को मिला कर बनता है—अर्थात् रोला छन्द के साथ ही यदि उल्लाला को भी रख दे तो यह षट्पदी छप्पय छद माना जाता है। उल्लाला अर्धसम छन्द है। इसके चारो पदो को छप्पय के दो पाद गिनते है। जैसे कुण्डलिया मे दोहे के चारो पादो को दो पाद गिनते है।

उल्लाला छन्द दो है। एक सममात्रिक १३ मात्राओ का है। इसे हम चद्रमणि नाम से ऊपर (पृष्ठ ५४) मे लिख आए है। दूसरा अर्धसम उल्लाला है जिसका निरूपण पहले पृष्ठ ८३ पर दिया गया है। इस आधार पर छप्पय के पचम और षष्ठ पाद मे भी कही २६-२६ और कही २८-२८ मात्राएँ होती हैं, प्रधानता २८ मात्राओ की है। परन्तु केशव आदि कई कवियो ने २६ मात्राएँ भी प्रयुक्त की है।

छप्पय को ही षट्पदी [छ पाय (पाद)] भी कहते हैं। यह छन्द प्रचुरतया प्रयुक्त हुआ है। इसी से चौपाई, दोहे आदि के समान इसके भी ७१ भेद माने जाते है। परन्तु इनमे 'विश्लेषण-मनोवृत्ति' के अतिरिक्त और कोई विशेष सत् नही है।

जैसे तुलसी की चौपाइयाँ, विहारी के दोहे, गिरिधर कविराय की कुण्डलियाँ, पद्माकर के कवित्त और रसखान के सवैये प्रसिद्ध है, इसी प्रकार नाभादास के छप्पय विशेष उल्लेखनीय है। वैसे छप्पय का प्रयोग सभी ने किया है और आज के खडी बोली के कलाकारो ने भी इसे अपनाया है।

२६ मात्रिक उल्लालापादी छप्पय

जल मे रक्षा करे वरुण इस दोष हीन की।
नभ मे रक्षा करे मित्र इस महा दीन की ॥
ग्राम-देवता हो रक्षक इसके पृथ्वी पर।
रक्षा इसकी करे सकल नभ-जल-भूतल चर ॥
मगल-ध्वनि सुनती हुई कर्ण-धारिणी वह चली।
चित्रलिखित सी बन गई पृथा आत्म धन से छली ॥ **(अगराज)**

२८ मात्रिकपादी

जिसकी रज मे लोट-लोटकर बडे हुए है।
घुटनो के बल सरक-सरककर खडे हुए है ॥
परमहस सम बाल्यकाल मे सब सुख पाये।
जिसके कारण धूल-भरे हीरे कहलाये ॥
हम खेले कूदे हर्षयुत, जिसकी प्यारी गोद मे।
हे ! मातृभूमि ! तुझको निरख मग्न क्यो न हो मोद मे ॥
(मैथिलीशरण गुप्त)

विशेष वक्तव्य—सस्कृत की परिपाटी का अनुकरण करते हुए अनेक लेखको ने आर्यावर्गीय और वैतालीयवर्गीय सस्कृत के छन्दो का हिन्दी मे भी निरूपण किया है। परन्तु हिन्दी मे ये छन्द प्रयुक्त नही होते। इससे हिन्दी के छन्दो मे इनकी गणना करना निराधार प्रतीत होता है। हिन्दी के छन्द अपनी स्वतत्र पद्धति पर विकसित हुए हैं और हो रहे है। इनमे सस्कृत के छन्दो को अनावश्यक रूप से थोपना युक्तिसगत नही। 'साहित्य-सागर' के कर्ता ने स्पष्ट लिखा है—

आर्या छन्द प्रबन्ध यह सुरवानी मे होत।
हिन्दी भाषा में अधिक याकौ नही उदोत ॥
सुरवानी बिच सोह ये भाषा विच नहिं सोहि।

इसी प्रकार की सम्मति छन्द प्रभाकरकार की भी है। फिर भी केवल प्रथा-पालन की दृष्टि से आर्यादि छन्दो का उन्होने निरूपण-मात्र कर दिया है। इससे विद्यार्थियो के व्यामोह और कठिनता के अतिरिक्त और कुछ सिद्धि प्रतीत नही होती। इनको हिन्दी छन्दो मे सम्मिलित न करना ही उचित है।

(ख) प्रवर्धितपादी छन्द

ये प्राय एक ही छन्द के चार से अधिक पाद वाले छन्द है। इन्हे मिलिन्दपादी छन्द भी कहते है। इनके तीन, पाँच, छ, आठ, नौ और इससे भी अधिक पाद हो सकते है। चतुष्पादी न होने के कारण से ही इन्हे विषम (वि+सम) छन्द कहा जाता है।

षट्पादी सार छन्द

सार का लक्षण पीछे (पृष्ट ७३) लिख आए है। उसमें १६, १२ की यति से २८ मात्राएँ होती है। अन्त मे दो गुरु अक्षर पडते है। परन्तु चार से अधिक पाद होने से प्रवर्धितपादी सार कहते हैं। यथा षट्पादी सार —

भावराशि के रूप राशि के, अभिनव साँचे ढाली।
नव रसमय यौवन तरग की, लेकर छटा निराली॥
मञ्जु अलकारो से सजकर, जगमग-जगमग करती।
कोमल कलित ललित छन्दो के, नूपुर पहन थिरकती॥
गजगामिनि अनुपम शोभा की, दिव्य विभा दरसाओ।
छम-छम करती हृदय कुञ्ज मे, आओ कविते! आओ॥

(श्यामसुन्दर)

इसी प्रकार हिन्दी के पुराने और वर्तमान अनेक कवीश्वरो ने 'विधाता', 'सरसी', 'प्रसाद' आदि अनेक छन्दो के प्रवर्धित पादी रूप प्रयुक्त किये है। वे सब विषम छन्द है।

गाथा छन्द

इसी प्रकार कबीर, सूर, तुलसी, मीरा आदि पुराने कवियो ने एकपाद पादाकुलक, चौपाई या श्रृङ्गार का टेक के रूप में रखकर पीछे रूपमाला सार, विधाता, सरसी, हरिगीतिका, दड आदि के अनेक पाद रखकर गीतियाँ बनाई है। सूर की एक गीतिका देखिए—

राग धनाश्री

हरि बिनु मीत नही कोउ तेरे।
सुनि मन, कहौ पुकारि तो सौ हौ, भजि गोपालहिं मेरे।
या ससार विषय विष सागर, रहत सदा सब घेरे।
सूर स्याम बिनु अतकाल मे, कोउ न आवत नेरे। (सूर)

इसमे एक पाद पादाकुलक का रखकर पीछे तीन पाद सार छन्द के है। इसी प्रकार सूर की प्रसिद्ध झिझौटी—"जा दिन मन पछी उडि जैहै", भी प्रवर्धितपादी सार छन्द मे है जिसकी टेक पादाकुलक के एक पाद में है। 'मैया मै नहिं माखन खायौ' वाला प्रसिद्ध पद भी सप्तपादी सार है जिसके प्रारम्भ मे एक पादाकुलक का पाद रखा गया है।

इसी छन्द मे कबीर की एक गीतिका भी देखिए—

अवधू कुदरत की गति न्यारी।
रक निवाज करै वह राजा, भूपति करै भिखारी ॥
जा से लौग गाछ फर लागै, चदन फूल न फूला।
मच्छ सिकारी रमै जँगल मे, सिह समुदर झूला ॥
रेंड रूख भयौ मलयागिरि, चहुँ दिसि फूटै बासा।
तीनि लोक ब्रह्मड खड मे, अँधरा देखि तमासा ॥
पँगुला मेरु सुमेरु उडावै, त्रिभुवन माही डोलै।
गूँगा ज्ञान विज्ञान प्रकासै, अनहद बानी बोलै ॥
पतालै बाँध अकासै पठवै, सेस स्वर्ग पर राजै।
कह कबीर समरथ है स्वामी, जो कछु करै सो छाजै ॥

यहाँ भी एक पाद पादाकुलक का टेक के रूप मे रखकर फिर नवपादी सार छद के है। इसी प्रकार कबीर का प्रसिद्ध शब्द—

सन्तो राह दोऊ हम दीठा,
हिन्दू तुरुक हटा नहिं मानै, स्वाद सबन को मीठा। (इत्यादि)

नवपदी सार छन्द में है।

खडी बोली में भी इस प्रकार की गीतियाँ रची गई है। यथा—

दो दिन खेल गया उपवन मे,
रूप अनोखा लेकर आया,
खेला कूदा हँसा हँसाया,
इससे बढकर भला और क्या रक्खा है जीवन मे॥
गुण सौन्दर्य देखकर प्यारा,
रीझ गया माली हत्यारा,
और किया डाली से न्यारा,
तोड ले चला दुष्ट बेचने दया न आई मन मे॥
जीवित सबने सीस चढाया,
मृत हो जाने पर ठुकराया,
घर से बहुत दूर फिकवाया,
लगी रही दुनिया सदैव ही अपने मन के धन मे॥
दो दिन खेल गया उपवन मे। (**बिहारीलाल भट्ट**)

इसमे तीन पाद पादाकुलक के और चौथा पाद २८ मात्राओ का १६-१२ की यति से सार छन्द का है। इस प्रकार के मिश्रित और बहु-पादी छन्द विषम छन्द ही गिने जाते है। गाए जाने के योग्य होने से इन्हे गाथा या गीति कहते हैं।

तीसरा अध्याय

वर्णिक प्रकरण

१. सम वर्णिक छन्द

ऊपर कह आए है कि जिन छन्दो में वर्णों की सख्या और उनके लघु-गुरु के स्थिति-क्रम के अनुसार पाद-व्यवस्था की जाती है, वे वर्णिक छन्द कहे जाते है । साथ ही जिन वर्णिक छन्दो के चारो पाद एक समान हो उन्हें समवृत्त या सम वर्णिक छन्द कहते हैं।

लक्षण-आचार्यों ने सुगमता के लिए इनके दो भेद किये है—

१ जातिक। २ दडक।

एक वर्ण से लेकर २६ वर्णों तक के पाद वाले छन्दो को जातिक कहते है, कारण कि इन्हें अनेक जातियो में विभक्त कर दिया गया है। प्रत्येक जाति के सभाव्य छन्दो की सख्या भी प्रस्तार की रीति से निकालकर बताई गई है। यह सख्या लाखो तक पहुँचती है। परन्तु प्रयोग मे इतने छद कही उपलब्ध नही होते।

हिन्दी के पुराने साहित्य मे वर्णिक छन्दो का प्रयोग प्राय सवैया, कवित्त आदि बडे छन्दो मे ही अधिक हुआ है। पुराने कवियो मे केवल केशव ही एक ऐसा कवि है जिसने वर्णिक छन्दो का सबसे अधिक प्रयोग किया है।

वर्णिक छन्दो की निम्न लिखित २६ जातियाँ है—

१ उक्ता	२ अत्युक्ता	३ मध्या
४ प्रतिष्ठा	५ सुप्रतिष्ठा	६ गायत्री
७ उष्णिक्	८ अनुष्टुप्	९ बृहती

१०	पक्ति	११	त्रिष्टुप्	१२	जगती
१३	अतिजगती	१४	शक्वरी	१५	अतिशक्वरी
१६	अष्टि	१७	अत्यष्टि	१८	धृति
१९	अतिधृति	२०.	कृति	२१	प्रकृति
२२	आकृति	२३	विकृति	२४	सस्कृति
२५	अतिकृति			२६	उत्कृति

इनमें से उक्ता से लेकर प्रकृति जाति (१-२१) तक के छन्द साधारण जातिक छन्द है। आकृति से लेकर उत्कृति (२२-२५) तक के छन्दो को 'सवैया' कहते है। २६ से ऊपर वाले दडक कहे जाते है।

(क) जातिक वर्ण छन्द[1]

६ अक्षरा गायत्री जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे ६-६ अक्षरो के चार पाद रखे जाते

---

१. उक्ता से लेकर सुप्रतिष्ठा तक की जातियो के (एक अक्षर से लेकर ५ अक्षर तक के पाद वाले) छन्दो में न लय बन सकती है और न कोई विशेष रुचिरता आ सकती है।' ये केवल पारिभाषिक पूर्णता की दृष्टि से प्रथा-पालन-मात्र है। पिंगल आदि पुराने आचार्यों ने भी इनका उल्लेख नहीं किया। इस सम्बन्ध मे यह बात उल्लेखनीय है कि हिन्दी में केशव ने अपनी 'रामचन्द्रिका' में एक वर्ण और दो वर्ण पादो तक के छन्दो का प्रयोग किया है। परन्तु यह केवल संस्कृत के अनुकरण पर हुआ है। वैसे इनमें कोई विशेष चमत्कार नही है।

एक वर्णपादी (श्री छन्द) छन्द का नमूना देखिए —

(१) धी।	अथवा (२) आ।	यद्वा (३) रो।
ह्री।	जा।	लो।
श्री।	खा।	धो।
है॥	जा॥	लो॥

है। गुरु-लघु वर्णों के क्रम के हेर-फेर से प्रस्तार की रीति से इस जाति मे ६४ छन्द बन सकते है। इनमे से कुछ एक प्रसिद्ध ये है—

विद्युल्लेखा छन्द (म म)

[दो मा विद्युल्लेखा]

इस छन्द मे ६ अक्षरो का पाद होता है और वे सभी गुरु वर्ण होते है। दो मगण ऽऽऽ ऽऽऽ ही इसका लक्षण है। यथा—

बोलो सीतारामा।
पूरे सारे कामा॥
माता सीता रानी।
ध्यावो सारे प्रानी॥

विद्युल्लेखा का दूसरा नाम शेषराज है।

सोमराजी छन्द (य य)

[य या सोमराजी]

इस छन्द के प्रत्येक पाद मे दो यगण (।ऽऽ ।ऽऽ) होते है। यथा—

करी अग्नि अर्चा।
मिटी प्रेत चर्चा॥

द्विवर्णपादी (श्री छन्द) छन्द का नमूना—

(१)	लल्ला।	अथवा (२)	हरि।
	आओ।	(मधु छन्द)	हर।
	लड्डू।		भलि।
	खाओ॥		कर।

स्पष्ट है कि ये बच्चो के तुक्के है। साहित्य में ऐसे छन्दो का कोई स्थान नही। इसलिए हम पिंगल का अनुसरण करते हुए षडक्षरा गायत्री जाति से ही प्रारम्भ करते है।

सबै राजधानी ।
भई दीन बानी ।। (**केशव**)

इसको शखनादी भी कहते हैं ।

तिलका (स स)

[दुइ सा तिलका]

इसके प्रत्येक पाद मे दो सगण (।।ऽ ।।ऽ) होते है । यथा—

नर नारि सबै ।
भय भीत तबै ।।
अचरज्जु यहै ।
सब देखि कहै ।। (**केशव**)

विमोहा (र. र)

[है विमोहा र रा]

इसके प्रत्येक पाद मे दो रगण (ऽ।ऽ ऽ।ऽ) होते है । यथा—

शभु कोदण्ड है ।
राजपुत्री कितै ।।
टूक द्वै तीन कै ।
जाहु लकाहि लै ।। (**केशव**)

मालती छन्द (ज ज)

[जजा शुभ माल]

इसके प्रत्येक पाद मे दो जगण (।ऽ। ।ऽ।) होते है । यथा—

जु पै जिय जोर ।
तजौ सब शोर ।।
सरासन तोरि ।
लहौ सख कोरि ।। (**केशव**)

शशिवदना (न य)

[शशिवदना या]

इसके प्रत्येक पाद मे छ अक्षर होते हैं जिनका क्रम यह है—

न य

।।। ।ऽऽ

दस सिर आओ।
धनुष उठाओ॥
कछु बल कीजै।
जग जस लीजै॥ (केशव)

मोहन छन्द (स ज)

इसके प्रत्येक पाद मे छ अक्षर होते है। इनका क्रम यह है—

स ज

।।ऽ ।ऽ।

धरि चित्त धीर।
गए गग तीर॥
शुचि ह्वै शरीर।
पितु तर्पि नीर॥ (केशव)

तनुमध्या (त य)

[ता या तनुमध्या]

इसके प्रत्येक पाद मे छ अक्षर रखे जाते है जिनका क्रम यह है—
यथा—

त य

ऽऽ। ।ऽऽ

आयो जु मुरारी।
शोभा अति भारी।
सोई जग सारी।
जानो नर नारी। (केशव)

७ अक्षरा उष्णिक् जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे ७-७ अक्षरो के चार पाद रखे जाते है। गुरु-लघु वर्णों के क्रम के हेर-फेर से प्रस्तार की रीति से इसके १२८ छन्द बन सकते है। कुछ एक प्रसिद्ध छन्द यहाँ दिये जाते है—

शिष्या छन्द (म म ग)

[मा मा गा से शिष्या है]

इस छन्द मे प्रत्येक पाद मे सात गुरु अक्षर होते है अर्थात्

म म ग
SSS SSS S

शुद्धात्मा था ज्ञानी था।
प्राणो का भी दानी था॥
ऊँचा हिन्दू पानी था।
राणा सच्चा मानी था॥ (मान)

मदलेखा छन्द (म. स. ग)

मदलेखा के पाद मे सात अक्षरो का क्रम यह है—

म स ग
SSS IIS S

मिथ्या बोल न बोलो।
सन्तो के सँग डोलो॥
विद्या मे मन जोडो।
दोषो से मुँह मोडो॥ (सुधा देवी)

समानिका (र ज ग)

[रा ज गा समानिका]

समानिका के प्रत्येक पाद में सात अक्षर रखे जाते है। उनका क्रम यह है। यथा—

र ज ग

SIS ISI S

यथा-- देखि देखि कै सभा।
विप्र मोहियो प्रभा॥
राज मडली लसै।
देवलोक को हँसै॥ (केशव)

मधुमती छन्द (न न. ग.)

[न न ग मधुमती]

मधमती के प्रत्येक पाद मे ७ अक्षरो का क्रम यह है—

न न ग

III III S

यथा— भव भय हरना।
असरन सरना॥
हरि गुरु चरना।
निसि दिन करना॥ (मान)

कुमारललिता छन्द (ज. स. ग.)

इसके प्रत्येक पाद में सात अक्षरो का क्रम यह है—

ज स ग

ISI IIS S

यथा— क्रिया भरत कीनी।
वियोग रस भीनी॥
सजी गति नवीनी।
मुकुद पद लीनी॥ (केशव)

लीला छन्द (भ त ग)

लीला के प्रत्येक पाद में सात अक्षरो का क्रम यह है—

भ त ग

SII SSI S

यथा— भाग्य नहीं मानिये ।
यत्न सदा ठानिये ।।
यत्न जबै ना फलै ।
भाग्य तबै है भलै ।। (बिहारीलाल ब्रह्मभट्ट)

८ अक्षरा अनुष्टुप् जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे ८, ८, अक्षरो के चार पाद रखे जाते है। क्रम व्यत्यय से प्रस्तार की रीति से इसके २५६ छन्द बन सकते है। इस जाति के कुछ प्रसिद्ध छन्द ये है—

विद्युन्माला (म म ग ग.)

[मा मा गा गा विद्युन्माला]

विद्युन्माला के प्रत्येक पाद मे आठो गुरु अक्षर रखे जाते है।

म म ग ग

SSS SSS S S

यथा— गगा माता तेरी धारा ।
काटै फन्दा मेरा सारा ।।
विद्युन्माला जैसी सोहै ।
बीची माला तेरी मोहै ।। (सुधादेवी)

प्रमाणिका छन्द (ज र ल ग)

[प्रमाणिका जरा लगा[१]]

प्रमाणिका के प्रत्येक पाद में आठ अक्षर रखे जाते है । उनका क्रम यह है।

---

१ केशव ने इसका नाम 'नगस्वरूपिणी' लिखा है। वस्तुत यह पञ्च चामर का अर्ध भाग है।

ज र ल ग

ISI SIS I S

यथा—

भलो बुरौ न तू गुनै।
वृथा कथा कहै मुनै॥
न राम देव गाइ है।
न देव लोक पाइ है॥ (केशव)

तुलसीदास की अत्रि द्वारा की गई राम की स्तुति इसी छन्द मे है।

नमामि भक्त वत्सलम्।
कृपालु शील कोमलम्॥
भजामि ते पदाम्बुजम्।
अकामिना स्वधामहम्॥

तुरंगम छन्द (न न ग ग)

तुरगम के प्रत्येक पाद मे आठ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

न न ग ग

III III S S

यथा—

बहुत वदन जा के।
विविध वचन ता के॥
बहु भुज युत जोई।
सबल कहिय सोई॥ (केशव)

अन्य लक्षणकारो ने इसका नाम 'तुङ्ग' लिखा है।

कमल (पत्र) छन्द (न स ल ग)

कमल छन्द के प्रत्येक पाद मे आठ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

न स ल ग

।।। ।।ऽ । ऽ

यथा— तुम प्रबल जो हुते ।
भुज बलनि सयुते ।।
पितुहिं भुव ल्यावते ।
जगत जस पावते ।। (केशव)

मल्लिका छन्द (र ज ग ल)

(मल्लिका सु रा, ज गा ल)

मल्लिका के प्रत्येक पाद मे आठ अक्षर होते हैं। इनका क्रम यह है

र ज ग ल

ऽ।ऽ ।ऽ। ऽ ।

यथा— देश देश के नरेश ।
शोभिजै सबै सुवेश ।।
जानिए न आदि अंत ।
कौन दास कौन संत ।। (केशव)

यह प्रमाणिका का उलटा है। प्रमाणिका मे एक लघु एक गुरु के क्रम से आठ अक्षर होते है। मल्लिका मे एक गुरु एक लघु के क्रम से आठ अक्षर रखे जाते है। केशव ने इसका नाम मदनमल्लिका लिखा है।

चित्रपदा छन्द (भ भ ग ग.)

(चित्रपदा भ भ गा गा)

चित्रपदा के प्रत्येक पाद मे इस क्रम से आठ अक्षर रखे जाते है—

भ भ ग ग

ऽ।। ऽ।। ऽ ऽ

यथा— सीय जही पहिराई ।
रामहि माल सुहाई ।।

दुन्दुभि देव बजाये।
फूल तही बरसाये ॥ (केशव)

अनुष्टुप् छन्द

वर्ण पचम छोटा हो, दीर्घ हो आठवाँ, छठा।
सातवाँ लघु युग्मो मे, तो अनुष्टुप जानिए ॥

इसके प्रत्येक पाद मे आठ अक्षर होते है जिनमे लघु-गुरु के क्रम का नियम इतना ही है कि प्रत्येक पाद का पाँचवाँ अक्षर लघु हो और छठा और आठवाँ गुरु होते है। सातवाँ अक्षर पहले और तीसरे पाद मे गुरु और दूसरे और चौथे पाद मे लघु होता है।[1]

यथा—

स्वस्तिवाद विरक्तो का,
और ही कुछ वस्तु है।
वाक्यो मे उनके होता,
ईश का एवमस्तु है॥ (रामनरेश त्रिपाठी)

---

१ सस्कृत काल से ही अनुष्टुप् की स्थिति ऐसी ही है। यह अपनी मौलिक वेदकालीन स्वच्छन्दता को स्थिर रख पाया है। लक्षणकार इसे गणो के धन में नही बाँध पाए है। प्रयोग की दृष्टि से सस्कृत में यह सबसे अधिक प्रयुक्त हुआ है। रामायण, महाभारत, पुराण, स्मृतियाँ, अनेक पारिभाषिक शास्त्र और अनेक महाकाव्य इसमें रचे गए है। यदि नियमो की कडी दृष्टि से देखा जाय तो यह जातिक वृत्त नहीं माना जाना चाहिए। कारण कि इसके चारो पाद क्रम की दृष्टि से एक समान नही होते। इसी कारण से भिखारीदास ने इसे जातिक वृत्त मानकर भी 'मुक्तक' छन्द माना है। हिन्दी में इसका प्रयोग बहुत कम हुआ है।

९ अक्षरा बृहती जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे ९, ९ अक्षरो के चार पाद रखे जाते है। क्रम व्यत्यय से प्रस्तार की रीनि से इसके ५१२ छन्द बन सकते है। इनमे से एक-दो प्रसिद्ध छन्द ये है—

मणिवध छन्द (भ म स)

मणिबध के पाद मे ९ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

भ म स

SII SSS IIS

यथा— यज्ञ करै औ' वेद पढै।
सत्य क्षमा और धीर पढे॥
दान दया औ' पुण्य मती।
आठहु है ये धर्मरती॥
(बिहारीलाल—परिवर्तित)

वर्ष छन्द (म त ज)

[छन्दा है सो वर्ष मुजान]

वर्ष छन्द के पाद मे ९ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

म त ज

SSS SSI ISI

यथा— माता जीवौ वर्ष हजार।
कीनो भारी मो उपकार॥
दीन्ही शिक्षा मोहि पवित्र।
गाऊँ तेरा नाम चरित्र॥ (भानु कवि-परिवर्तित)

१० अक्षरा पंक्ति जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे १०-१० अक्षरो के चार पाद रखे जा ते

है। लघु-गुरु वर्णों के क्रम भेद से इस जाति के १०२४ छन्द बन सकते है। इनमे से कुछ एक प्रसिद्ध छन्द ये हैं—

संयुता छन्द (स ज. ज ग)

[सजजाग होई सुसयुता]

सयुता के प्रत्येक पाद मे १० अक्षर इस क्रम से रहते हैं—

स ज ज ग
IIS ISI ISI S

यथा—

हनुमत लक लगाइ कै।
पुनि पूँछ सिंधु बुझाइ कै॥
शुभ देख सीतहि पाँ परै।
मनि पाय आनँद जी भरै॥ (**केशव**)

वामा छन्द (त य भ ग)

[ताया भग से वामा रच लो]

वामा के प्रत्येक पाद मे दस अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

त य भ ग
SSI ISS SII S

यथा—

सारी दुनिया से प्रेम करो।
निष्काम सभी की सेवा करो॥
गाँधी मुनि का आदेश यही।
वेदो-स्मृतियो का सार यही॥

मत्ता छन्द (म भ स ग)

[मत्ता छदा म भ स ग युक्ता]

मत्ता छन्द के प्रत्येक पाद मे दस अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

म भ स ग
SSS SII IIS S

यति प्राय ४, १० पर होती है।

यथा— राखौ शम्भो ! शरण तिहारी।
आई हूँ मै दुखमतवारी ॥
शम्भो शम्भो, निसिदिन गाऊँ।
ध्याऊँ तेरी, छवि सुख पाऊँ ॥ **(छन्द शिक्षा)**

चम्पकमाला (भ म स. ग.)

[चम्पकमाला, हो भ म सा गा]

चम्पकमाला के प्रत्येक पाद मे १० अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

भ म स ग
SII SSS IIS S

यथा—

चाह नही तो वैभव फीका।
खेल नही तो शैशव फीका ॥
मान नही तो जीवन फीका।
रूप नही तो यौवन फीका ॥ **(सुधा देवी)**

अमृतगति छन्द (न ज न ग,)

इस छन्द के प्रत्येक पाद मे दस अक्षर इस क्रम से रखे जाते हैं—

न ज न ग
III ISI III S

यथा—

निपट पतिव्रतधरणी।
जग गन के दुख हरणी ॥
निगम सदा गति सुनिये।
अगति महापति गुनिये ॥ **(केशव)**

सारवती (भ भ भ ग)

इस छन्द के प्रत्येक पाद में दस अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

त त ज ग ग
SSI SSI ISI S S

यथा— मै राज्य की चाह नही करूँगा।
है जो तुम्हे इष्ट वही करूँगा ॥
सतान जो सत्यवती जनेगी।
राज्याधिकारी वह ही बनेगी ॥ (गुप्त)

उपेन्द्रवज्रा छन्द (ज त ज ग ग)

[उपेन्द्रवज्रा जत जा गगा से]

उपेन्द्रवज्रा के प्रत्येक पाद मे ११ अक्षर इस क्रम से रहते है—

ज त ज ग ग
ISI SSI ISI S S

यथा— बडा कि छोटा कुछ काम कीजै।
परन्तु पूर्वापर सोच लीजै ॥
बिना विचारै यदि काम होगा।
कभी न अच्छा परिणाम होगा ॥ (गुप्त)

उपजाति छन्द

पूर्वोक्त इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा छन्दो मे केवल मात्र भेद यही है कि इन्द्रवज्रा का पहला अक्षर गुरु होता है और उपेन्द्रवज्रा का पहला अक्षर लघु होता है। शेष अक्षरो का क्रम दोनो मे एक समान है। स्मरण रखना चाहिए कि यह भेद लक्षणकारो की 'साम्य प्रवृति' का परिणाम है। वस्तुत यह एक ही छन्द है जिस का प्रयोग सस्कृत और हिन्दी के कवियो ने नि शक भाव से किया है। कही किसी पाद मे पहला अक्षर गुरु रख दिया है तो कही लघु कर दिया है।

इस कठिनाई से बचने के लिए लक्षणकारो ने ऐसे मिश्रित प्रयोग का नाम उपजाति रख दिया है और पीछे अन्य जातियो के इस प्रकार के

छन्दोमिश्रण को भी उपजाति नाम दे दिया है। वस्तुत उपजाति कोई स्वतन्त्र छन्द नही।

चार पादो के भेद और मेल से प्रस्तार की रीति से उपजाति के १६ भेद हो जाते है।

यथा— पाद १ इन्द्रवज्रा का, २, ३, ४ उपेन्द्रवज्रा का
पाद २ ,, ,, १, ३, ४ ,, ,,
पाद ३ ,, ,, १ २, ४ ,, ,,
पाद ४ ,, ,, १, २, ३ ,, ,,
पाद १, २ ,, ,, ३, ४ ,, ,,
पाद २, ३ ,, ,, १, ४ ,, ,,
इत्यादि इत्यादि

यथा—

परोपकारी बन वीर आओ।
नीचे पडे भारत को उठाओ॥
हे मित्र त्यागो मद मोह माया।
नही रहेगी यह नित्य काया॥
} १,४ पाद उपेन्द्रवज्रा
२,३ पाद इन्द्रवज्रा

विवाह भी मै न कभी करूँगा।
आजन्म आद्याश्रम मे रहूँगा॥
निश्चिन्त यो सत्यवती सुखी हो।
सन्तान से भी न कभी दुखी हो॥
} प्रथम पाद उपेन्द्रवज्रा
२, ३, ४ पाद इन्द्रवज्रा

(गुप्त)

इस प्रकार इसके शेष भेद भी समझने चाहिएँ।[1]

---

१ अनेक लेखको ने यह सुझाव दिया है कि उपजाति की गणना 'अर्धसम' या 'विषम' वृत्तो में करनी चाहिए। वस्तुत उपजाति कोई स्वतन्त्र छन्द नहीं। इसे हम कवि-प्रयोग की निरपेक्ष स्वतन्त्रता के

दोधक छन्द (भ भ भ ग ग.)

दोधक के प्रत्येक पाद मे ११ अक्षर इस क्रम से रखे जाते हैं—

भ भ भ ग ग

SII SII SII S S

यथा—

पांडव की प्रतिमा सम लेखौ।
अर्जुन भीम महामति, देखौ।
है सुभगा सम दीपति पूरी।
सिंदुर की तिलकावलि रूरी॥ (केशव)

इसका अन्य नाम बन्धु है। केशव ने इसे 'मधु' भी लिखा है।[1]

कली छन्द (भ भ भ ल ग).

कली के प्रत्येक पाद मे ११ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

परिणाम स्वरूप ही यह नाम देते है। वैसे भी 'अर्धसम' या 'विषम' की कोई शर्त इसमें उपलब्ध नहीं होती, कारण कि प्रयोक्ता पर इस प्रकार का कोई बन्धन नहीं है। कवि को खुली छुट्टी है कि वह नि शक भाव से किसी भी पाद का आदि का अक्षर गुरु रखे या लघु। जहाँ यह बन्धन होता है, वहाँ अवश्य अलग स्वतन्त्र छन्द माना जाता है। उदाहरणार्थ दोधक और कली छन्द में केवल १०वे अक्षर के गुरु या लघु होने का भेद है। शेष लक्षण दोनो का एक समान है। चूँकि कवियो ने इस भेद को स्वीकार कर लिया है और प्रयोग में एक ही छन्द के विभिन्न पादो मे इनका मिश्रण नही किया, इसी के ये दोनो स्वतन्त्र छन्द है। इनका 'उपजाति' छन्द कोई नही। अवश्य ही लक्षणकार को लक्ष्य के अनुसार चलना पडता है। वैसे लक्षणकार ने इसी आधार पर 'आख्यानिकी' और 'विपरीताख्यानिकी' नाम से इसके दो भेदो को अर्धसम में गिना है। परन्तु यह केवल दृष्ट प्रयोग का निर्देश है। उपजाति अर्धसमत्व नहीं।

१ देखो 'रामचन्द्रिका' ४ २० और ४ २ २।

भ भ भ ल ग

SII SII SII I S

यथा— शोभत दडक की रुचि बनी ।
भाँतिन भाँतिन सुन्दर घनी ॥
सेव बडे नृप की जनु लसै ।
श्रीफल भूरि भयौ जहँ बसै ॥ **(केशव)**

हरिणी छन्द (ज. ज ज ल ग.)

हरिणी छन्द के प्रत्येक पाद मे ११ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

ज ज ज ल ग

ISI ISI ISI I S

यथा— अराजकता कहुँ होन न दे ।
अनूपम साहस से विलसे ॥
असाधुजनो हित दड धरै ।
इते गुण हो तब राज करै ॥

स्वागता छन्द (र. न भ. ग. ग)

स्वागता के प्रत्येक पाद में ११ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

र न भ ग ग

SIS III SII S S

यथा— जोग जाग व्रत आदि जु कीजै ।
न्हान गान गुन दान जु दीजै ॥
धर्म कर्म सब निष्फल देवा ।
होहि एक फल कै पति सेवा ॥ **(केशव)**

रथोद्धता छन्द (र. न र. ल ग)

रथोद्धता के प्रत्येक पाद मे ११ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

र न र ल ग

SIS III SIS I S

यथा— चित्रकूट तब राम जू तज्यो।
जाइ यज्ञथल अत्रि को भज्यो ॥
राम लक्ष्मण समेत देखियो।
आपुनो सफल जन्म लेखियो ॥ (केशव)

सुमुखी छन्द (न ज. ज ल ग)

सुमुखी छन्द के प्रत्येक पाद मे ११ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

न ज ज ल ग

III ISI ISI I S

यथा— सब नगरी बहु सोभ-रये।
जहँ तहँ मगलचार ठये ॥
बरनत है कविराज बने।
तन मन बुद्धि विवेक सने ॥ (केशव)

मोटनक छन्द (त ज. ज. ल. ग.)

मोटनक के प्रत्येक पाद मे ११ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

त ज ज ल ग

SSI ISI ISI I S

यथा— जौ लौ नल नील न सिंधु तरै।
जौ लौ हनुमत न दृष्टि परै ॥
जौ लौ नहि अगद लक ढही।
तौ लौ प्रभ ! मानहु बात कही ॥ (केशव)

अनुकूला छन्द (भ त. न ग ग)

इस छन्द के प्रत्येक पाद में ११ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

भ त न ग ग

SII SSI III S S

यथा—

पावक पूज्यो समिध सुधारी ।
आहुति दीनी सब सुखकारी ॥
है तब कन्या बहुधन दीन्हो ।
भाँवरि पारी जग जस लीन्हो ॥ **(केशव)**

भुजंगी छन्द (य य य ल ग)

[य तीनो ल-गा से भुजगी बने]

भुजगी के प्रत्येक पाद मे ११ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

य य य ल ग

ISS ISS ISS I S

यथा—

नही लालसा है विभो वित्त की ।
हमे चेतना चाहिए चित्त की ॥
भले ही न हो एक भी सपदा ।
रहे आत्मविश्वास पूरा सदा ॥ **(गुप्त)**

शालिनी छन्द (म त त ग ग)

शालिनी के प्रत्येक पाद मे ११ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

म त त ग ग

SSS SSI SSI S S

यथा—

कैसी कैसी ठोकरे खा रहा है ।
तीखी पीडा चित्त मे पा रहा है ॥
तौ भी प्यारे हाल तेरा वही है ।
विद्या-सेवी की गती क्या यही है ॥ (**छन्द शिक्षा परिवर्तित**)

इन्दिरा छन्द (न र र ल ग)

इन्दिरा के प्रत्येक पाद मे ११ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

न र र ल ग

ııı sıs sıs ı s

यथा—

तब सुधामयी प्रेम जीवनी ।
अघ निवारिणी क्लेश हारिणी ॥
श्रवण सौख्यदा विश्व तारिणी ।
मुदित गा रहे धीर अग्रणी ॥ (**पाठक**)

भ्रमर विलसिता छन्द (म भ न ल ग)

भ्रमर-विलसिता के प्रत्येक पाद मे ११ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

म भ न ल ग

sss sıı ııı ı s

यथा—

तेरा-मेरा यह सब सपना ।
माया को तू समझ न अपना ।.
हो जी में जो भव-नद तरना ।
तो तू प्यारे हरि हर रटना ॥ (**मान**)

१२ अक्षरा जगती जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे १२-१२ अक्षर के चार पाद रखे जाते है। गुरु लघु वर्णों के क्रम भेद से प्रस्तार के द्वारा इस जाति के ४०९६ छन्द बन सकते है। इस जाति के विशेष प्रचलित छन्द ये है—

वंशस्थ छन्द (ज त ज र)

[सुजान वशस्थ कहे ज ता ज रा]

वशस्थ के प्रत्येक पाद मे १२ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

ज त ज र।

ISI SSI ISI SIS

यथा— सगर्व बोला तब कर्ण भूप से।
अमान्य है दुर्मति पूर्ण मन्त्रणा ॥
परास्त होना रण-पूर्व शत्रु मे।
विचार्य है केवल वृद्ध-बुद्धि से ॥ (**अगराज**)

इन्द्रवशा छन्द (त त ज र)

[है इद्रवशा ततजा रकार सो]

इन्द्रवशा के प्रत्येक पाद मे १२ अक्षरो का क्रम इस प्रकार होता है[1]

त त ज र

SSI SSI ISI SIS

यथा— यो ही बडा हेतु हुए बिना कही।
होते बडे लोग कठोर यो नही ॥
वे हेतु भी यो रहते सुगुप्त है।
ज्यो अद्रि अभोनिधि मे प्रलुप्त है ॥ (**चन्द्रहास**)

भुजंग प्रयात छंद (य य य य)

[भुजगप्रयाता रचौ चार या से]

भुजगप्रयात के प्रत्येक पाद मे १२ अक्षरो का क्रम यह है—

---

१ इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा के समान इन्द्रवशा और वशस्थ छन्द में भी केवल आदि के अक्षर के गुरु या लघु होने का भेद है। हिन्दी में इनका मिश्रित प्रयोग (उपजाति) कम ही देखने मे आता है। अत. इनके 'उपजाति छद' का उल्लेख लक्षण-आचार्यों ने नहीं किया।

य य य य

ISS ISS ISS ISS

यथा— अरी व्यर्थ है व्यजनो की बडाई।
हटा थाल तू क्यो इसे साथ लाई॥
वही पार है जो बिना भूख भावै।
बता किंतु तू ही उसे कौन खावै॥ (साकेत)

द्रुतविलबित छन्द (न भ भ र)

[द्रुतविलबित हो न भ भा र से]

द्रुतविलबित के प्रत्येक पाद मे १२ अक्षर रहते है जिनका क्रम है—

न भ भ र

III SII SII SIS

समर का जब निश्चय हो गया।
समिति भग हुई उस काल ही॥
सफल होकर गूढ प्रयास मे।
हरि उठे कुरुराज समाज से॥ (अगराज)

तोटक छन्द (स स स स)

[स स सा स कहै सब तोटक को]

इसके प्रत्येक पाद मे १२ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

स स स स

IIS IIS IIS IIS

यथा—

निज गौरव का, नित ज्ञान रहे।
'हम भी कुछ हैं', यह ध्यान रहे॥
सब जाय अभी, पर मान रहे।
मरणोत्तर गुञ्जित, गान रहे॥ (गुप्त)

मोदक छन्द (भ भ भ. भ.)

[मोदक छन्द रचो करि चार भ]

मोदक छन्द के प्रत्येक पाद मे १२ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

भ भ भ भ

SII SII SII SII

यथा— राजन मे तुम राज बडे अति ।
मै मुख माँगौ सु देह महामति ॥
देव सहायक हो नृप नायक ।
है यह कारज रामहि लायक ॥ (केशव)

केशव ने इस छन्द का नाम सुन्दरी लिखा है ।

मौक्तिक दाम छन्द (ज. ज ज ज)

[ज जा ज ज हो तब मौक्तिकदाम]

मौक्तिकदाम के प्रत्येक छन्द मे १२ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

ज ज ज ज

ISI ISI ISI ISI

यथा— गये तहँ राम जहाँ निज मातु ।
कही यह बात कि हौ बन जातु ॥
कछू जनि जी दु ख पावहु माइ ।
सो देहु असीस मिलौ फिरि आइ ॥ (केशव)

स्रग्विणी छन्द (र र र र)

[चार हो रेफ तो स्रग्विणी छन्द हो]

र र र र

SIS SIS SIS SIS

यथा—

राम आगे चले मध्य सीता चली ।
बन्धु पाछे भये सोभ सोभै भली ।।
देखि देही सबै कोटिधा कै भनौ ।
जीव जीवेश के बीच माया मनौ ।। (केशव)

प्रमिताक्षरा छन्द (स ज स स)

प्रमिताक्षरा के प्रत्येक पाद मे १२ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है।

स ज स स
IIS ISI IIS IIS

यथा—

उठि कै प्रहस्त सजि सैन चले ।
बहु भाँति जाइ कपि पुञ्ज दले ।।
तब दौरि नील उर मुष्टि हनै ।
असुहीन भूमि पर मुण्ड धुनै ।। (केशव)

मालती छन्द (न ज ज र)

[न ज ज र सयुत मालती बनै]

मालती के प्रत्येक पाद मे १२ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

न ज ज र
III ISI ISI SIS

यथा—

विपिन विराध बलिष्ठ देखियो ।
नृपतनया भयभीत लेखियो ।।
तब रघुनाथ जु बाण कै हयो ।
निज निरबाण सुपथ को ठयो ।। (केशव)

कुसुमविचित्रा छन्द (न य न य)

[न य न य होवे कुसुमविचित्रा]

इस छन्द के प्रत्येक पाद मे १२ अक्षरो का क्रम यह होता है—

न य न य

III ISS III ISS

यथा— तिहि अति रूरे रघुपति देख्यो ।
सब गुण पूरे तन मन लेख्यो ॥
यह वरु माँग्यो दियउ न काहू ।
तुम मन मोते कतहुँ न जाहू ॥ **(केशव)**

तामरस छन्द (न ज ज य)

तामरस के प्रत्येक पाद मे १२ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

न ज ज य

III ISI ISI ISS

यथा— इत उत शोभित सुन्दरि डोलै ।
अरथ अनेकनि बोलनि बोलै ॥
सुख मुखमण्डल चित्तनि मोहै ।
मनहुँ अनेक कलानिधि सोहै ॥ **(केशव)**

चन्द्रवर्त्म छन्द (र. न. भ स)

इस छन्द के प्रत्येक पाद मे १२ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

र न भ स

SIS III SII IIS

यथा— राजनीति मत तत्त्व समुझिए ।
देस काल गुनि युद्ध अरुझिए ॥
मत्रि मित्र अरि कौ गुन गहिए ।
लोक लोक अपलोक न लहिए ॥ **(केशव)**

जलोद्धतगति (ज स ज. स)

[जलोद्धतगती जसा जस रची]

इस छन्द के प्रत्येक पाद में १२ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

ज स ज स

ISI IIS ISI IIS

यथा— असार जग को ससार समझो।
प्रपच लख के उदास मत हो॥
डिगो न विचलो चलो सँभल के।
प्रसन्न मन से स्वधर्म पथ मे॥ (**मान**)

वारिधर छन्द (र न भ भ)

इसके प्रत्येक पाद मे १२ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

र न भ भ

SIS III SII SII

यथा— राजपुत्रि यक बात सुनौ पुनि।
रामचन्द्र मन माँह कही गुनि॥
राति दीह जयराज जनी जनु।
जातनानि तन जानत कै मनु॥ (**केशव**)

इस छन्द का प्रयोग केवल केशव ने किया है। अन्यत्र यह देखने मे नही आया। हिन्दी लक्षणकारो ने भी इसका उल्लेख नही किया। सस्कृत तथा प्राकृत और अपभ्रश के छन्द शास्त्रो मे भी यह कही नही मिला।

१३ अक्षरा अतिजगती जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे १३-१३ अक्षर के चार पाद रखे जाते है। गुरु-लघु वर्णो के क्रम भेद से प्रस्तार के द्वारा इस जाति के ८१९२ छन्द बन सकते है। इस जाति के छन्द प्राय जगती जाति के

छन्दो के परिवर्धित रूप है। जैसे तोटक, भुजगप्रयात, स्रग्विणी तथा प्रमिताक्षरा मे एक गुरु अक्षर और बढा देने से ताटक, कदुक, रमा विलास और कलहस छन्द बन जाते हैं। इस जाति के विशेष प्रसिद्ध छन्द ये हैं—

तारक छन्द (स स स स ग)

[स स सा स ग हो तब तारक होवे]

पूर्वोक्त तोटक छन्द मे एक गुरु अक्षर और बढा देने से तारक छन्द बन जाता है। इसके प्रत्येक चरण मे १३ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है —

स स स स ग
IIS IIS IIS IIS S

यथा— यह कीरति और नरेशन सोहै।
सुनि देव अदेवन कौ मन मोहै॥
हमको वपुरा, सुनिये ऋषिराई।
सब गाँउँ छ-सातक की ठकुराई॥ **(केशव)**

(पूर्वोक्त तोटक के उदाहरण मे यदि अन्त मे 'रे' और बढा दे तो वह तारक छन्द का उदाहरण हो जायगा।)

कंदुक छन्द (य य य य ग)

भुजग प्रयात के अत मे एक गुरु अक्षर और बढा देने से कदुक छन्द बन जाता है। इसके प्रत्येक पाद मे १३ अक्षरो का क्रम यह है—

य य य य ग
ISS ISS ISS ISS S

यथा— लगी स्यन्दनै बाजिराजी विराजै रे।
जिन्है देखि कै पौन को वेग लाजै रे॥
भले स्वर्ण की किंकिनी यूथ बाजै रे।
मिल्यौ दामिनी सौ मतौ मेघ गाजै रे॥ **(केशव परिवर्धित)**

रमाविलास छन्द (र र र र ग)

स्त्रग्विणी छन्द मे एक गुरु अक्षर और बढा देने से रमाविलास छन्द बन जाता है। इसके प्रत्येक पाद के १३ अक्षरो का क्रम यह है—

र र र र ग
SIS SIS SIS SIS S

यथा— राम आगे चले मध्य सीता चली रे।
बधु पाछे भये सोभ सोभै भली रे।
देखि देही सबै कोटिधा कै भनौ रे।।
जीव जीवेश के बीच माया मनौ रे।

(केशव परिवर्धित)

कलहस छन्द (भ ज स स ग)

कलहस प्रमिताक्षरा का परिवर्धित रूप है। इसके प्रत्येक पाद मे १३ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

स ज स स ग
IIS ISI IIS IIS S

यथा — 'अरिकाज लाज तजि कै उठि धायो।
धिक तोहि, मोहिं डरवावन आयो।।
तजु राम नाम' – यदि बोल उचारयो।
सिर माँझ लात पगलागत मारयो।। **(केशव)**

पंकजवाटिका छन्द (भ न ज ज ल)

इसे एकावली भी कहते है। इसके प्रत्येक पाद मे १३ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

भ न ज ज ल
SII III ISI ISI I

यथा— राम चलत नृप के युग लोचन।
वारि भरित भये वारिद रोचन॥
पायन परि ऋषि के सजि मौनहिँ।
केशव उठि गये भीतर भौनहिँ॥ (**केशव**)

मञ्जुभाषिणी छन्द (स ज स ज ग)

इसके प्रत्येक पाद मे १३ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

स ज स ज ग
IIS ISI IIS ISI S

यथा— चुप बैठि राम शुभ नाम लीजिए।
गुण मे अतीत गुण-गान कीजिए॥
मत वाम दाम पर चित्त दीजिए।
तजि मोह जाल हरि-भक्ति भीजिए॥ (**गिरीश**)

१४ अक्षरा शक्वरी जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे १४, १४ अक्षर के चार पाद रखे जाते है। गुरु-लघु वर्णो के क्रम भेद से प्रस्तार के अनुसार इस जाति के १६३८४ छन्द बन सकते है। इनमे विशेष प्रसिद्ध छन्द ये है

वसत तिलका छन्द (त भ ज ज ग ग)

[होवे वसत तिलका त भ जा ज गा गा]

इसके प्रत्येक पाद मे १४ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

त भ ज ज ग ग
SSI SII ISI ISI S S

यथा— रे क्रोध जो सतत अग्नि बिना जलावे।
भस्मावशेष नर के तनु को बनावे॥
ऐसा न और तुझ सा जग बीच पाया।
हारे विलोक हम किन्तु न दृष्टि आया॥ (**गुप्त**)

मनोरम छन्द (स स स स ल ल)

मनोरम के प्रत्येक पाद मे १४ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

स स स स ल ल
IIS IIS IIS IIS I I

यथा— हम है दशरत्थ महीपति के सुत ।
शुभ राम सुलक्ष्मण नामनि सयुत ॥
यहि शासन दै पठये नृप कानन ।
मुनि पालहु, मारहु राक्षस के गन ॥ **(केशव)**

हरिलीला छन्द (त भ ज ज ग ल)

इस छन्द के प्रत्येक पाद मे १४ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

त भ ज ज ग ल
SSI SII ISI ISI S I

यथा— हा राम हा रमण, हा रघुनाथ धीर ।
लकाधिनाथवश, जानहु मोहि वीर ॥
हा पुत्र लक्ष्मण, छुडावहु वेगि मोहिँ ।
मारतण्ड वश यश की सब लाज तोहिँ ॥ **(केशव)**

अनेक लक्षणकारो ने इसका नाम 'मुकुन्द' भी लिखा है ।

अनन्द छन्द (ज र ज र ल ग)

[जरा जरा लगा अनन्द छन्द गाइए]

इसके प्रत्येक पाद में १४ अक्षर ऐसे क्रम से रखे जाते है कि एक लघु एक गुरु बराबर सात बार आ जायँ । गणो के अनुसार इसमे ये गण होते हैं ।

ज र ज र ल ग
ISI SIS ISI SIS I S

यथा—

विहग कोस सौ हुते जु दृष्टि देत ँ ।
उतेक दूर सो सुभक्ष देख लेत है ।।
सुई समै प्रभाव से कुजोग पाइ कै ।
लखै न जाल बध आइ फन्द मे परै ।।
(**बिहारीलाल भट्ट सशोधित**)

प्रहरणकलिका छन्द (न न भ न ल ग)

[न न भ न ल ग से प्रहरणकलिका]

इसके प्रत्येक पाद मे १४ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

न न भ न ल ग
।।। ।।। ऽ।। ।।। । ऽ

यथा—

दशरथ सुत को सुमरिन करिये ।
बहु जप तप मे भटकि न मरिये ।।
विरद विदित है जिन चरनन को ।
प्रहरन कलि काटन दुख गण को ।। (**भिखारीदास**)

वासन्ती छन्द (म त न म ग ग)

इसके प्रत्येक पाद मे १४ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

म त न म ग ग
ऽऽऽ ऽऽ। ।।। ऽऽऽ ऽ ऽ

यथा—

वाणी द्वारा प्रेम-नियम की हाला पीते ।
वाणी द्वारा कोप अनल की ज्वाला पीते ।।
वाणी द्वारा शक्ति गठन को भी पाते है ।
वाणी द्वारा 'मान' परम मानी पाते है ।। (**मान**)

१५ अक्षरा अति शक्वरी जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द में १५-१५ अक्षर के चार पाद रखे जाते हैं। गुरु-लघु वर्णों के क्रम भेद से प्रस्तार के अनुसार इस जाति के ३२७६८ छन्द बन सकते है। इनमे से विशेष प्रसिद्ध ये है—

मालिनी छन्द (न न म य य)

[न न म य य मिलै तो मालिनी छन्द होवे]

मालिनी के प्रत्येक पाद मे १५ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

न न म य य

III III SSS ISS ISS

यथा— पल पल जिसके मै पथ को देखती थी।
निशिदिन जिसके ही ध्यान मे थी बिताती॥
उर पर जिसके है, सोहती मुक्त माला।
वह नव-नलिनी से नैन वाला कहाँ है॥

(अयोध्यासिंह उपाध्याय)

चामर छन्द (र ज र ज र)

चामर के प्रत्येक पाद मे १५ अक्षर ऐसे क्रम से रहते है कि एक गुरु एक लघु बराबर चलते जायँ। गणपरिभाषा के अनुसार इसका लक्षण यो हैं—

र ज र ज र

SIS ISI SIS ISI SIS

यथा— आइयो कुरंग एक चारु हेम हीर को।
जानकी समेत चित्त मोहि राम वीर को॥
राजपुत्रि को समीप साधु बंधु राखि कै।
हाथ चाप बाण लै गये गिरीश नाखि कै॥ **(केशव)**

निशिपाल छन्द (भ ज स न र)

निशिपाल के प्रत्येक चरण मे १५ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

भ ज स न र

SII ISI IIS III SIS

यथा— गान विनु, मान बिनु, हास बिनु जीवही ।
तप्त नहिँ खाहिँ जल शीतल न पीवही ॥
तेल तजि, खेल तजि, खाट तजि सोवही ।
शीत जल न्हाइ, नहिँ उष्ण जल जोवही ॥ (केशव)

मनहरण छन्द (न स र र र)

इसके प्रत्येक पाद मे १५ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है[1]—

न स र र र

III IIS SIS SIS SIS

यथा— अतिनिकट गोदावरी पापसहारिणी ।
चल तरँग तुङ्गावली चारु सचारिणी ॥
अलि कमल सौगध लीला मनोहारिणी ।
बहु नयन देवेश शोभा मनो धारिणी ॥ (केशव)

नलिनी छन्द (स स स स स)

नलिनी के प्रत्येक पाद मे १५ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

स स स स स

IIS IIS IIS IIS IIS

---

१ भानु कवि तथा उसके अनुकरण पर एक दो अन्य लेखको ने नलिनी या भ्रमरावली छन्द को ही 'मनहरण' माना है । किन्तु केशव के प्रयोग (रामचन्द्रिका ११, २३) के अनुसार मनहरण का लक्षण यही है जो हमने ऊपर दिया है ।

यथा— तब ही भहराइ भजे खग है सर सो ।
बहु सोरनि साजत है मिलिकै डरसो ॥
लगि मारुत चचल पकज सुन्दर सो ।
सर मानहु भूपति को बरजै कर सो ॥ (**नैषध**)

शशिकला छन्द (न न न न स)

शशिकला के प्रत्येक पाद मे १५ अक्षर होते है । इनमे १–१४ लघु और अन्त मे एक गुरु होता है । गण परिभाषा के अनुसार इनका क्रम यह है—

न न न न स
ııı ııı ııı ııı ııऽ

यथा— कहुँ द्विजगण मिली सुख श्रुति पढही ।
कहुँ हरिहर हरिहर रट रटही ॥
कहुँ मृगपति मृगशिशु पय पियही ।
कहुँ मुनिगण चितवत हरि हियही ॥ (**केशव**)

१६ अक्षरा अष्टि जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे १६–१६ अक्षरो के चार पाद रखे जाते है । गुरु-लघु वर्णों के क्रम-भेद से प्रस्तार के अनुसार इस जाति के ६५५३६ छन्द बन सकते है । इस जाति के विशेष प्रसिद्ध छन्द ये है—

पचचामर छन्द (ज र ज र ज ग)

[जरा जरा जगा कहे सुबुद्ध पचचामरम्]

पचचामर के प्रत्येक पाद मे १६ अक्षर ऐसे क्रम मे रखे जाते है कि क्रमश एक लघु एक गुरु बराबर आते जायँ । गण परिभाषा के अनुसार इनका क्रम यह है—

ज र ज र ज ग

ISI SIS ISI SIS ISI S

यति ८-८ पर पडती है—

यथा— अदम्य अगराज ने प्रयाण वेग से किया ।
अराति दड चक्र को स्व वाम पार्श्व मे लिया ॥
पुकार के कहा—'बढो, सशस्त्र सैनिको !
करो विनष्ट भूमि-भ्रष्ट, धृष्ट शत्रु-सैन्य को ॥' **(अगराज)**

इसे नाराच और नागराज भी कहते है ।

चचला छन्द (र ज र ज र ल)

इसके प्रत्येक पाद मे १६ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है[1]—

र ज र ज र ल

SIS ISI SIS ISI SIS I

यथा— पक्षिराज यक्षराज प्रेतराज यातुधान ।
देवता अदेवता नृदेवता जिते जहान ॥
पर्वतारि अर्ब-खर्ब सर्व सर्वथा बखानि ।
कोटि-कोटि सूर चन्द्र रामचन्द्र दास जानि ॥ **(केशव)**

नील छन्द (भ भ भ भ भ ग)

नील के प्रत्येक पाद मे १६ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

भ भ भ भ भ ग

SII SII SII SII SII S

---

१ यह पच चामर के उलट है । पच चामर में क्रम से लघु-गुरु, लघु-गुरु अक्षर रहते है इसमें गुरु-लघु गुरु-लघु के क्रम से अक्षर रखे जाते है । केशव ने इस छन्द का नाम ब्रह्म रूपक भी लिखा है ।

यथा— साधुकथा कथिए दिन केशवदास जहाँ।
निग्रह केवल है मन कौ दिन मान तहाँ॥
पावन वास सदा ऋषि कौ सुख को बरषै।
का बरणै कवि ताहि विलोकत जी हरषै॥ (केशव)

केशव ने इस छन्द का नाम 'विशेषक' लिखा है।

१७ अक्षरा अत्यष्टि जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे १७–१७ अक्षरो के चार पाद रखे जाते है। गुरु-लघु वर्णों के क्रम भेद से प्रस्तार के अनुसार इस जाति के १३१०७२ छन्द बन सकते है। विशेष प्रसिद्ध छन्द ये है—

मंदाक्रान्ता छन्द (म भ न त त ग ग)

[मदाक्रान्ता फल-रसयती मा भ ना ता त गा गा]

मदाक्रान्ता के प्रत्येक पाद मे १७ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है —

म भ न त त ग ग
SSS SII III SSI SSI S S

यति ४ ६ ७ पर पडती है।

यथा — दो वशो मे, प्रकट करके, पावनी लोक लीला,
सौ पुत्रो से, अधिक जिनकी, पुत्रियाँ पुण्यशीला।
त्यागी भी हे, शरण जिनके, जो अनासक्त गेही,
राजा योगी जय जनक वे, पुण्यदेही विदेही॥ (साकेत)

शिखरिणी छन्द (य म न स भ ल ग)

[यति छ ग्यारह पर, य म न स भ ला गा शिखरिणी]

शिखरिणी के प्रत्येक पाद मे १७ अक्षर इस क्रम से रखे जाते हे—

य म न स भ ल ग
ISS SSS III IIS SII I S

यति ६, ११ पर पडती है —

यथा — मनोभावो के है शतदल जहाँ शोभित सदा।
कला हंसश्रेणी, सरस रसक्रीडा निरत है।।
जहा हृत्तन्त्री की, स्वर लहरिका नित्य उठती।
पधारो हे वाणी, बनकर वहा मानसप्रिया।।

(आनन्दकुमार)

पृथ्वी छन्द (ज स ज स य . ल ग)

पृथ्वी छन्द के प्रत्येक पाद मे १७ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

ज स ज स य ल ग
ISI IIS ISI IIS ISS I S

यति प्राय ८,९ पर पडती है—

यथा — अगस्त्य ऋषिराज जु, बचन एक मेरो सुनौ।
प्रशस्त सब भाँति भूतल स्वदेश जी मे गुनौ।।
सनीर तरुखण्ड मडित समृद्ध शोभा धरै।
तहाँ हम निवास कौ विमल पर्णशाला करै।। (केशव)

भालचन्द्र छन्द (ज र ज र ज ग ल)

भालचन्द्र के प्रत्येक पाद मे १७ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

ज र ज र ज ग ल
ISI SIS ISI SIS ISI S I

यथा — अशेष पुण्य पाप के कलाप आपने बहाय।
विदेह राज ज्यो सदेह भक्त राम कौ कहाय।।
लहै सुभुक्ति लोक-लोक अत मुक्ति होहि ताहि।
कहै सुनै पढै गुनै जु रामचन्द्र चन्द्रिकाहि।। (केशव)

---

१ यह भी प्रमाणिका, चामर और पच चामर आदि के समान क्रमश. एक लघु एक गुरु का छन्द है।

सारिका छन्द (स स स स स ल ग)

सारिका छन्द के प्रत्येक पाद मे १७ अक्षर इस क्रम से रखे जाते हैं—

स स स स स ल ग
IIS IIS IIS IIS IIS I S

यथा— सुगती लगि रामहिं राम रटै नित सारिका।
करही जन-प्रेम अगाध मनो निज दारिका ॥
जपि जो हरि नाम उदार सदा गुण गावही।
तरि सो भवसागर पार महासुख पावही ॥ (भानु कवि)

१८ अक्षरा धृति जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे १८-१८ अक्षरो के चार पाद रखे जाते है। गुरु-लघु वर्णों के क्रम भेद से प्रस्तार के अनुसार इस जाति के २६२१४४ छन्द बन सकते है। इनमे विशेष प्रसिद्ध ये है—

हीर छन्द (भ स न ज न र)

हीर छन्द के प्रत्येक पाद मे १८ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है[1]—

भ स न ज न र
SII IIS III ISI III SIS

यति १०, ८ पर होती है।

यथा— सुन्दरि सब सुन्दर प्रति मन्दिर पर यो बनी।
मोहन गिरि-शृङ्गन पर मानहुँ महि मोहिनी ॥

---

१ रूपमाला, सुगीतिका आदि अनेक छन्दो की भाँति हीर या हीरक छन्द भी मात्रिक और वर्णिक भेद से दोनो प्रकार का है। मात्रिक में इसकी २३ मात्राएँ होती है। स्पष्ट भेद के लिए हमने यहाँ इसका नाम केवल 'हीर' लिखा है और मात्रा छन्द का 'हीरक'। केशव ने वर्ण-वृत्त को भी हीरक ही लिखा है।

भूषन गन भूपिन तन भूरि चित न चोरही।
देखनि जनु रेखति तनु बान नयन कोरही॥ (**केशव**)

चंचरी छन्द (र स ज ज भ र)

चचरी के प्रत्येक पाद मे १८ अक्षर निम्न क्रम से रखे जाते है। यति ८-१० या १०-१८ पर पडती है।[1]—

र स ज ज भ र
SIS IIS ISI ISI SII SIS

यथा— पुत्र श्री दशरत्थ के, वनराज शासन आइयो।
सीय सुन्दरि सग ही, बिछुरी सु सोधन पाइयो॥
राम लक्ष्मण नाम सयुत सूर वश बखानिये।
रावरे वन कौन हो ? किहि काज ? क्यो पहचानिये॥ (**केशव**)

तीव्र छन्द (भ भ भ भ भ स)

तीव्र के प्रत्येक पाद मे १८ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

भ भ भ भ भ स
SII SII SII SII SII IIS

यति ८-१० अथवा ११-७ पर पडती है।

यथा[2]— भू गति शोधत पडित जो बहु तीव्र गणित मे।
आदर योग्य वही पुनि जो कह राम भणित मे॥

---

१ हेमचन्द्र ने इस छन्द का नाम 'उज्ज्वल' लिखा है। अन्य आचार्यों ने इसे चर्चरी, मालिकोत्तरमालिका बिबुधप्रिया, हरनर्तन आदि नाम दिए है।

२. हेमचन्द्र और जयकीर्ति ने इस छन्द का नाम मणिमाला लिखा है। अनेक आचार्यों ने इसे अश्वगति भी कहा है। हेमचन्द्र के अनुसार मणिमाला की यति ११-१८ पर होती है।

जो मद मत्सर मोह असार तिन्हे सब दहिये।
मगल मोद निधान प्रभू शरणै नित रहिये ॥ (भानु कवि)

१६ अक्षरा अतिधृति जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे १६-१६ अक्षरो के चार पाद रखे जाते है। क्रम-भेद से प्रस्तार के अनुसार इस जाति के ५२४२८८ छन्द बन सकते है। इनमे से विशेष प्रसिद्ध ये है—

शार्दूलविक्रीडित छन्द (म स ज स त त ग)

[श्री सूर्यं स्वर मा स जा स त त गा शार्दूल विक्रीडिता]

शार्दूल विक्रीडित के प्रत्येक पाद मे १६ अक्षर निम्न क्रम से रखे जाते है। यति १२, ७ पर पडती है।

म स ज स त त ग
SSS ।।S ।S। ।।S SS। SS। S

यथा— सायकाल हवा समुद्र तट की, आरोग्यकारी यहाँ।
प्राय शिक्षित सभ्य लोग नित ही, जाते इसी से वहाँ ॥
बैठे हास्य विनोद मोद करते, सानन्द वे दो घडी।
सो शोभा उस दृश्य की हृदय को, है तृप्ति देती बडी ॥

(पोद्दार)

मणिमाल छन्द (स ज ज भ र स ल)

मणिमाल के प्रत्येक पाद मे १६ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है। यति प्राय १०, ६ पर पडती है—

स ज ज भ र स ल
।।S ।S। ।S। S।। S।S ।।S ।

यथा— हम क्या रहे कब क्या हुए, अब है नही कुछ भान।
किस ओर है सब जा रहे, इसका नही कुछ ज्ञान ॥

अब भी रहे यदि ऊँघते, बस मान लो अवसान।
सँभले बढे यदि चाहते, जग जीवतो बिच मान ॥ **(मान)**

रसाल छन्द (भ न ज भ ज ज ल)

रसाल के प्रत्येक पाद मे १९ अक्षर निम्न क्रम से रखे जाते है। यति प्राय ९ और १० पर पडती है।

भ न ज भ ज ज ल
ऽ।। ।।। ।ऽ। ऽ।। ।ऽ। ।ऽ। ।

यथा— मोहन मदन गुपाल, राम विभु शोक विदारन।
सोहन परम कृपाल, दीन जन आप उधारन ॥
प्रीतम सुजन दयाल, केशि वर दानव मारन।
पूरण करुण सुजान, दीन दुख दारिद टारन ॥ **(गदाधर)**

२० अक्षरा कृति जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे २०-२० अक्षरो के चार पाद रखे जाते है। क्रम-भेद से प्रस्तार के अनुसार इस जाति के १०४८५७६ छन्द बन सकते है। इस जाति के विशेष प्रसिद्ध छन्द ये है—

दण्डिका छन्द (र ज र ज र ज ग ल)

दण्डिका छन्द के प्रत्येक पाद मे २० अक्षर इस प्रकार रखे जाते है कि क्रम से गुरु लघु के १० जोडे बन जायँ। गण क्रम इस प्रकार से है—

र ज र ज र ज ग ल
ऽ।ऽ ।ऽ। ऽ।ऽ ।ऽ। ऽ।ऽ ।ऽ। ऽ ।

यथा— रोज रोज राज गैल तें लिये गुपाल ग्वाल तीन सात।
वायु सेवनार्थ प्रात्त बाग जात आव लै सुफूल पात ॥
लाय कै धरै सबै सुफूल पात मोद युक्त मात हात।
धन्य मातु मातु बाल वृत्त देखि हर्ष रोम रोम गात ॥

(भानु कवि)

गीतिका छन्द (स ज ज भ र स ल ग.)

गीतिका छन्द के प्रत्येक पाद मे २० अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

स ज ज भ र स ल ग

IIS ISI ISI SII SIS IIS I S

यथा— दशकठ रे शठ छाँडि दे हठ, बार-बार न बोलिये।
अब आजु राज-समाज मे बल, साजु चित्त न डोलिये ॥
गिरिराज ते गुरु जानिये सुर राज को धनु हाथ लै।
सुख पाय ताहि चढाय कै, घर जाहि रे यश साथ लै ॥ **(केशव)**

भृङ्ग छन्द (न न न न न न ग ल)

भृङ्ग छन्द के प्रत्येक पाद मे २० अक्षर इस क्रम से रखे जाते है कि १९ वॉ अक्षर गुरु हो और शेष १-१८ और २० लघु हो। गण परिभाषा के अनुसार उनका क्रम इस प्रकार है—

न न न न न न ग ल

III III III III III III S I

यथा— न रस गलिन कुसुम कलिन, जहँ न लसत भृङ्ग।
वसति कुमति नसति सुमति, जहँ न सुजन सग ॥
कमल नयन कमल वदन, कमल शयन राम।
शरण गहत भजत सतत, लसत परम धाम ॥

(भानु कवि)

२१ अक्षरा प्रकृति जाति

प्रकृति जाति के प्रत्येक छन्द मे २१-२१ अक्षरो के चार पाद रखे जाते है। क्रम-भेद से प्रस्तार की रीति से इस जाति के २०९७१५२ छन्द बन सकते है। इस जाति के विशेष प्रसिद्ध छन्द ये है—

स्रग्धरा छन्द (म र भ न य य य)

[मा रा भा ना य या या सत-सत यति से स्रग्धरा मानते है]

स्रग्धरा के प्रत्येक पाद मे २१ अक्षर निम्न क्रम से रखे जाते है। यति ७, ७, ७ पर पडती है।

म र भ न य य य
SSS SIS SII III ISS ISS ISS

यथा– नाना फूलो फलो से, अनुपम जग की, वाटिका है विचित्रा।
भोक्ता है सैकडो ही, मधुप शुक तथा, कोकिला गानशीला॥
कौवे भी है अनेको, पर धन हरने, मे सदा अग्रगामी।
कोई है एक माली, सुधि इन सबकी, जो सदा ले रहा है॥

(त्रिपाठी)

मनविश्राम छन्द (भ भ भ भ भ न य)

मनविश्राम के प्रत्येक पाद मे २१ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

भ भ भ भ भ न य
SII SII SII SII SII III ISS

यथा— मजु लतानि वितान तने, घन राजत रुचिर अखारे।
कान्ह कृपा सब काम दहे, तरु हेरत सुरतरु हारे॥
सिद्ध वधू अँगराग सुगन्धित, सोहत सुरसर न्यारे।
मन्दर मेरुहि आदि महागिरि, गोबरधन पर वारे॥

(समनेस)

अहि छन्द (भ भ भ. भ , भ भ म)

अहि छद के प्रत्येक पाद मे १२ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

भ भ भ भ भ भ म
SII SII SII SII, SII SII SSS

यथा— भोर समै हरि गेद जु खेलत, सग सखा यमुना तीरा।
गेद गिरी यमुना दह मे झट कूदि परे धरि कै धीरा॥
ग्वाल पुकार करी तब रोवत, नद यशोमति हू धाये।
दाउ रहे समुझाय इतै अहि, नाथि उतै दह ते आये॥
(भानु कवि)

२२ अक्षरा आकृति जाति

आकृति जाति के प्रत्येक छन्द मे २२–२२ अक्षरो के चार पाद रखे जाते है। अक्षरो के क्रम-भेद से प्रस्तार के अनुसार इस जाति के ४१९४३०४ छन्द बन सकते है।

विशेष—आकृति से लेकर उत्कृति जाति तक के (२२ अक्षर पादी से लेकर २६ अक्षर पादी तक के) बडे छन्दो को प्राय सवैया कहते है। हिन्दी मे सवैया छन्दो का विशेष प्रचार है। तुलसी, सुन्दर, रसखान, नरोत्तम, केशव, मतिराम, भूषण, गग, देव, घनानन्द, पद्माकर गुरु गोबिन्दसिह, भारतेन्दु, राजा लक्ष्मणसिह, नाथूराम शकर, सत्यनारायण आदि-आदि अनेक पुराने और नए कवियो ने इनका प्रयोग किया है।

कुछ एक अपवादो को छोडकर सवैया छन्द प्राय किसी एक गण (भगण, तगण, रगण, सगण, आदि) की ७ या ८ बार की आवृत्ति से बने होते है। प्राय कवि लोग इनका एक ही नाम 'सवैया' से उल्लेख करते है, परन्तु अक्षरो की गिनती के आधार पर इन्हे भिन्न-भिन्न जातियो मे दर्शाया गया है और रूप-भेद के कारण इनका नाम-भेद भी कर दिया गया है। लक्षण-आचार्यों ने लगभग ४८ सवैयो का उल्लेख किया है। इनमें से अत्यधिक प्रयुक्त और विशेष प्रसिद्ध आठ ही माने जाते है।

मंदारमाला सवैया (७ त + ग)

मदारमाला के प्रत्येक पाद मे सात जगण और अत मे एक गुरु अक्षर रहता है।

त त त त त त त ग

ऽऽ। ऽऽ। ऽऽ। ऽऽ। ऽऽ। ऽऽ। ऽऽ। ऽ

यथा— तू लोक गोविन्द जावै नरा छोड जञ्जाल सारे भजे नेम सो ।
श्रीकृष्ण गोविंद गोपाल माधो मुरारी जगन्नाथ ही प्रेम सो ।।
मेरी कही मान ले मीत तू जन्म जावै वृथा आपको तार ले ।
तेरी फले कामना हीय की, नाम-मदारमाला हिये धार ले ।।

(भानु कवि)

मदिरा सवैया (७ भ+ग)

मदिरा के प्रत्येक पाद मे ७ भगण और एक गुरु अक्षर रखे जाते है ।

भ भ भ भ भ भ भ ग

ऽ।। ऽ।। ऽ।। ऽ।। ऽ।। ऽ।। ऽ।। ऽ

यथा— सिधु तरचो उनके बनरा तुम पै धनु रेख गई न तरी ।
बाँदर बाँधत सो न बँध्यौ उन वारिधि बाँधि के बाट करी ।।
श्री रघुनाथ प्रताप कि बात तुम्है दसकठ न जानि परी ।
तेलहु तूलहु पूँछ जरी न जरी जरि लक जराइ जरी ।।

(केशव)

मोद सवैया (५ भ म स ग)

मोद के प्रत्येक पाद मे २२ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

भ भ भ भ भ म स ग

ऽ।। ऽ।। ऽ।। ऽ।। ऽ।। ऽऽऽ ।।ऽ ऽ

यथा— गोकुल नायक जै सुखदायक गोविद गोपी प्रान अधारा ।
कस विहडन जै अघ खडन जै जप तू स्वामी करतारा ।।
स्याम सरोरुह लोचन सुन्दर माधव सोभाधाम अपारा ।
श्रीपति जादव वस विभूषन, दानौ दारन देव उदारा ।।

(भिखारीदास)

२३ अक्षरा विकृति जाति

विकृति जाति के प्रत्येक छन्द मे २३-२३ अक्षरो के चार पाद रखे जाते है । अक्षरो के क्रम-भेद से प्रस्तार के अनुसार इस जाति के ८३८८६०८ छन्द बन सकते है। हिन्दी मे इस जाति के प्रसिद्ध सवैये ये है—

मत्तगयद सवैया (७ भ+ग ग)

[भासत दो गुरु को रख के रचते कवि मत्तगयद सवैया]

मत्तगयद के प्रत्येक पाद मे २३ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

भ भ भ भ भ भ भ ग ग
SII SII SII SII SII SII SII S S

यथा—

जाल प्रपञ्च पसार घने कुल गौरव का उर फाड रहा है ।
मानव मण्डल मे मिल दाहक दानव दुष्ट दहाड रहा है ।।
जाति समुन्नति की जड को कर घोर कुकर्म उखाड रहा है ।
भूल गया प्रभु शकर को जड जीवन जन्म बिगाड रहा है ।।
(शकर कवि)

भूषण ने इस सवैया का नाम 'मालती' लिखा है।

गोस्वामी तुलसीदास ने 'कवितावली' मे मत्तगयद सवैया के साथ कही-कही एक या दो पाद 'सुन्दरी' सवैया (८ स+ग) के मिलाकर एक प्रकार के 'उपजातिक' या 'मिश्रित' सवैये लिखे है ।

यथा—

तीखे तुरग कुरग सुरगनि साजि, चढे छँटि छैल छबीले ।
भारि गुमान जिन्है मन मे कबहूँ न भये रन मे तनु ढीले ।।

तुलसी गज से लखि केहरि लौ, झपटे पटके सब सूर सलीले।
भूमि परे भट घूमि कराहत, हाँकि हने हनुमान हठीले ॥[1]

(तुलसी)

इसमे तीसरा पाद 'सुन्दरी' सवैया (८ सगण + गुरु) का है।

चकोर सवैया (७ भ + ग ल)

चकोर के प्रत्येक पाद मे २३ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

भ भ भ भ भ भ भ ग ल
SII SII SII SII SII SII SII S I

यथा—

भासत ग्वाल सखी गन मे हरि राजत तारन मे जिमि चन्द।
नित्य नयो रचि रास मुदा ब्रज मे, हरि खेलत आनँद कन्द ॥
या छवि काज भये ब्रजवासि चकोर पुनीत लखै नँद नन्द।
धन्य वही नर-नारि सराहत या छवि काटत जो भव-फन्द ॥

(भानु कवि)

सुमुखी सवैया (७ ज + ल ग)

सुमुखी के प्रत्येक पाद मे २३ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

ज ज ज ज ज ज ज ल ग
ISI ISI ISI ISI ISI ISI ISI I S

यथा—

हिये वन माल रसाल धरे सिर मोर-किरीट महा लसिबौ।
कसे कटि पीत-पटी लकुटी कर आनन पै मुरली बसिबौ ॥

---

१ 'तुलसी ग्रथावली' दूसरा खण्ड (काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित) दूसरा सस्करण (२००७ स०) पृष्ठ १६० (सवैया ३२) इससे अगला सवैया भी इसी प्रकार का है।

कलिंदिनि तीर खडे बलबीर, सुबालन की गहि बाँह सबौ ।
सदा हमरे हिय मन्दिर में यहि बानक सो करिये बसिबौ ॥

(हरदेव)

वागीश्वरी सवैया (७ य+ल ग)

वागीश्वरी सवैया के प्रत्येक पाद मे २३ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है ।

य य य य य य य ल ग
ISS ISS ISS ISS ISS ISS ISS I S

यथा—

करो भक्ति सारे सदा राम पद्मै, हिये धारि सीतेश्वरी मात को ।
सदा सत्य बोलो हिये गाँठ खोलो, यही योग्य है मानवी गात को ॥
पुरावै वही कामना जो करोगे, बनावै वही ना बनी बात को ।
करो भक्ति साँची महा प्रेम राँची, बिसारो न त्रैलोक के तात को ॥

(भानु कवि-परिवर्तित)

अग्र सवैया (७ त+ग ग)

अग्र के प्रत्येक पाद मे २३ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

त त त त त त त ग ग
SSI SSI SSI SSI SSI SSI SSI S S

यथा—

त्रैलोक गगा ! किये पाप भगा, महा पापियो को सदा तारती तू ।
मो बेर क्यो देर तूने लगाई, नहीं तारिणी नाम क्या धारती तू ॥
सेवा बने मात कैसे तुम्हारी, सदा सेवते सीस पै सर्वगामी ।
मै क्रूर कामी महापाप धामी, तुही एक आधार अम्बे ! नमामी ॥

(भानु कवि)

इसे सर्वगामी सवैया भी कहते है ।

२४ अक्षरा संस्कृति जाति

इस जाति के प्रत्येक छद मे २४-२४ अक्षरो के चार पाद रखे जाते है । अक्षरो के क्रम-भेद से प्रस्तार के अनुसार इस जाति के १६७७७२१६ छन्द बन सकते है । इस जाति के प्रसिद्ध सवैये ये है—

दुर्मिल सवैया (८ स)

दुर्मिल के प्रत्येक पाद मे २४ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

स स स स स स स स

IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS

यथा—

कछु मेद कटे अरु तुन्दि घटे छँटि के तन धावन जोग बने ।
चितवृत्ति पसून की जानि परे भय क्रोध मे लेति पलेट घने ।।
अति कीरति है धनुधारिन की चलतौ यदि बान तें लक्ष्य हने ।
मृगया तें भलो न विनोद कोई तिहि दूषनि माँहि वृथा हि गने ।।

(राजा लक्ष्मणसिह)

अथवा—

द्विज वेद पढे सुविचार बढे बल पाय चढे सब ऊपर को ।
अविरुद्ध रहे ऋजु पथ गहे, परिवार कहे वसुधा भर को ।।
ध्रुव धर्म धरे पर दु ख हरे तन त्याग तरे भवसागर को ।
दिन फेर पिता वर दे सविता कर दे कविता कवि 'शकर' को ।।

(कवि शकर)

किरीट सवैया (८ भ)

किरीट के प्रत्येक पाद मे २४ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

भ भ भ भ भ भ भ भ

SII SII SII SII SII SII SII SII

यथा—

मानुष हौ तौँ वही रसखानि बसौं ब्रज गोकुल गॉव केँ ग्वारन ।
जौ पसु हौ तौँ कहा बसु मेरौँ चरौ नित नन्द कि धेनु मॅझारन ।।
पाहन हौ तौँ वही गिरि कौ जु धरचौ करि छत्र पुरदर धारन ।
जौ खग हौं तौँ बसेरौ करौ मिलि कालिंदि कूल कदब कि डारन ।।[1]

(**रसखान**)

अथवा—

सभ्य समागम के प्रतिकूल न मूढ ! भयानक चाल चला कर ।
वञ्चक ! बान बिसार बुरी रच दभ किसी कुल को न छला कर ।।
देख विभूति महाजन की पड शोक-हुताशन मे न जला कर ।
शकर को भज रे भ्रम को तज रे भव का भरपूर भला कर ।।

(**नाथूराम 'शकर'**)

गगोदक सवैया (८ र)

इसके प्रत्येक पाद मे आठ रगण होते है जिनका क्रम इस प्रकार से है—

र	र	र	र	र	र	र	र
SIS	SIS	SIS	SIS	SIS	SIS	SIS	SIS

यथा—

आज रोमाचकारी समाघात मे तोड के सैन्य सघात तेरा सभी ।
भारती वीर राधेय है आ गया मेटने को अहकार तेरा अभी ।।
वीर, धन्वा उठा, आत्मवत्ता दिखा क्षत्रियो का इसी मे महा गर्व है ।
धर्म सग्राम की भक्कता भूमि मे आज भकारिणी का महा पर्व है ।।

इसे खजन भी कहते है ।

(**अगराज**)

---

१ जिन ए, औ की मात्राओ पर ˘ चिह्न दिया है, वे ह्रस्व है। (देखो अध्याय १ पृष्ठ ३१ का फुटनोट) ।

यथा—

भाव भला उसके मन के किस भाँति कहूँ वह है न बखानता।
ली न कभी उसने सुध भी अपना जन क्या न मुझे वह मानता॥
जान सका वह क्यो न मुझे कहते सब है, वह है सब जानता।
है नित ही उर मे रहता फिर, क्यो न मुझे वह है पहचानता॥

(गोपालशरणसिंह)

२५ अक्षर अतिकृति जाति

इस जाति के प्रत्येक छन्द मे २५-२५ अक्षरो के चार पाद रखे जाते है। अक्षरो के क्रम-भेद से प्रस्तार के अनुसार इस जाति के ३३५५४४३२ छन्द बन सकते है। इस जाति के विशेष प्रसिद्ध सवैये ये है—

✓ सुन्दरी सवैया (८ स + ग)

इसके प्रत्येक पाद के २५ अक्षरो मे ८ सगण और एक गुरु रहता है। इनका क्रम यह है—

स स स स स स स स ग
IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS S

यथा—

बहुधा प्रिय वृत्ति बिनै मधुरी बतियानि सौं चारु विचार दृढावै।
पहचान अनिन्दित नित नई, मति मगल मोदमई मन भावै॥
रस एक अगार पिछार लसै, छल-छिद्र बिना त्रय ताप नसावै।
इमि सज्जन पुण्य चरित्र सदा, चहुँ ओर विजै बरसा बरसावै॥

(सत्यनारायण)

अथ च— हम दीन दरिद्र हुताशन में,
दिन-रात पडे दहते रहते है।
बिन मेल विरोध महानद मे,
मन बोहित से बहते रहते हैं॥

कवि शकर काल-कुशासन की
फटकार कडी सहते रहते है।
पर भारत के गत गौरव की,
अनुभूत कथा कहते रहते है।। (**शकर कवि**)

इसे 'मल्ली' भी कहते है।

अरविन्द सवैया (८ स+ल)

अरविन्द के प्रत्येक पाद के २४ अक्षरो मे आठ सगण और एक लघु होता है। इनका क्रम यह है—

स स स स स स स स ल
।।ऽ ।।ऽ ।।ऽ ।।ऽ ।।ऽ ।।ऽ ।।ऽ ।।ऽ ।

यथा— सब सो लघु आपुहि जानिय जू,
यह धर्म सनातन जान सुजान।
जब ही सुमती अरु आनि बसै,
उर सम्पति सर्व विराजत आन।।
प्रभु व्याप रह्यो सचराचर मे,
तजि वैर सुभक्ति सजौ मतिमान।
नित राम पदै अरविन्दन को,
मकरन्द पियो सुमिलिन्द समान।।

(भानु कवि)

लवगलता सवैया (८ ज+ल)

लवगलता के प्रत्येक पाद के २५ अक्षरो मे आठ जगण और एक लघु रहता है। इनका क्रम यह है—

ज ज ज ज ज ज ज ज ल
।ऽ। ।ऽ। ।ऽ। ।ऽ। ।ऽ। ।ऽ। ।ऽ। ।ऽ। ।

यथा— जु योग लवगलतानि लग्यो,
तब सूझ परै न कछू घर बाहर ।
अरे मन चचल नेक विचार,
नही यह सार, असार सरासर ।।
भजौ रघुनदन पाप निकदन,
श्री जगवदन नित्य हिये धर ।
तजौ कुमती धनि ये सुमती,
शुभ रामहि राम रटौ निसि वासर ।।

('भानु' कवि)

२६ अक्षरा उत्कृति जाति

इस जाति के प्रत्येक छद मे २६-२६ अक्षरो के चार पाद रखे जाते है । अक्षरो के क्रम भेद से प्रस्तार के अनुसार इस जाति के ६७१०८८६४ छन्द बन सकते है । कुन्दलता या सुख इस जाति का प्रसिद्ध सवैया है ।

कुन्दलता (८ स+ल ल)

कुन्दलता मे आठ सगण और दो लघु रखकर २६ अक्षरो का पाद बनाया जाता है । इनका क्रम यह है—

स स स स स स स स ल ल
IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS I I

यथा— जग मे नर जन्म दियौ प्रभु ने,
मृदु भाषत बोल सुराखत लाजह ।
सत कर्म करै सत वृत्त बनै,
समरत्थ रहै नित ही पर काजह ।।
धरवै मन धीर 'विहार' सहा,
करवै करनी जिहि मे जस छाजह ।

सतसग सदा सुख सौ सजवै,
तजवै भ्रम कौ भजवै ब्रज राजह ॥
(साहित्य सागर)

इसे 'सुख' और 'किशा' सवैया भी कहते है ।

(ख) वर्णिक दंडक प्रकरण

जिन छदो के एक पाद मे २३ से भी अधिक अक्षर हो, उन्हे दण्डक कहते है । दडको के भी पूरे चार पाद होते है । अतएव इनकी गणना सम वृत्तो मे की गई है । जैसा कि ऊपर बता आए है, दडक दो प्रकार के है—(१) साधारण और (२) मुक्तक ।

साधारण दडको मे अक्षरो के गुरु-लघु क्रम के नियमो का पालन किया जाता है । परन्तु मुक्तक दडक इन क्रम नियमो से मुक्त है । हाँ, इनमे भी चारो पादो मे अक्षरो की सख्या समान होती है । मुक्तक दडको को प्राय 'कवित्त' कह दिया जाता है ।

नीचे दडको के विशेष भेद और उनके लक्षण लिखे जाते है ।

साधारण दंडक

साधारण दडको मे अक्षर सख्या का कोई विशेष नियम नही है । एक पाद मे २७, २८, २९, ३०, ३३ आदि जितने भी चाहे अक्षर रखे जा सकते है । इनमे नियम बधन इतना ही है कि एक पाद मे जितने अक्षर जिस क्रम से रखे जायँ उतने ही अक्षर उसी क्रम से शेष तीनो पादो मे भी होने चाहिएँ ।

कुछ-एक प्रसिद्ध साधारण दण्डक ये है—

मत्त मातग लीलाकर दण्डक (९ र)

इस दण्डक के प्रत्येक पाद मे प्राय ९ रगण (२७ अक्षर) रहते

है। १० या ११ रगण भी हो जायँ तो भी यही दण्डक रहता है। इसका क्रम यह है—

र र र र र र र र र
ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ

यथा—

योग ज्ञाना नही, यज्ञ दाना नही वेद माना नही,
या कली माहि मीता! कहूँ।
ब्रह्मचारी नही, दण्डधारी नही, कर्मकारी नही,
है कहा आगमै जो छहूँ॥
सच्चिदानन्द आनन्द के कन्द को छाँडि कै,
रे मतीमन्द! भूलो फिरो न कहूँ।
याहि ते हौ कहौ ध्याइ लै जानकीनाथ को,
गावही जाहि सानन्द वेदा चहूँ॥

(भानु कवि)

अनंग शेखर दण्डक (लघु-गुरु युग्म यथेच्छ)

अनगशेखर के प्रत्येक पाद मे लघु-गुरु अक्षरो के १५ या इससे अधिक युग्मक (जोडे) रखे जाते है। नीचे केशव का एक अनग-शेखर उद्धृत किया जाता है जिसमे लघु-गुरु युग्मक १६ ह (३२ अक्षर)

तडाग नीर हीन ते सनीर होत केशोदास,
पुण्डरीक झुण्ड भौर मण्डली न मण्डही।
तमाल बल्लरी समेत सूखि-सूखि कै रहै,
ते बाग फूलि-फूलि कै समूल सूल खण्डही॥
चितै चकोरनी चकोर मोर मोरनी समेत,
हस हसिनी समेत सारिका सबै पढै।
जही-जही विराम लेत रामजू तही-तही,
अनेक भाँति के अनेक भोग भाग सो बढै॥

(केशव)

महीधर दण्डक (१४ ल ग युग्मक)

महीधर के प्रत्येक पाद मे ल ग अक्षरो के १४ जोडे रखे जाते है। यथा—

सदा सुसग धारिये, नही कुसग सारिये,
लगाय चित्त सीख मानिये खरी ।
वृथा न जन्म मानुषीहिँ खोइये, सुकाल पाय,
ध्याव ईश नित्य बन्दना करी ॥
तजै असत्य काम, धारि सत्य नाम अन्त पाव,
पर्म धाम जो जपै सबै घरी ।
हरी हरी हरी हरी हरी हरी हरी,
हरी हरी हरी हरी हरी हरी हरी ॥

(भानु कवि)

अशोक पुष्पमञ्जरी दण्डक (ग ल युग्मक यथेच्छ)

इस दण्डक के प्रत्येक पाद मे क्रम मे गुरु-लघु वर्णो के १४ या १५ जोडे रखे जाते है। यथा १४ युग्मक—

सत्य धर्म नित्य धारि व्यर्थ काम सर्व डारि,
भूलि कै करौ कहा न निन्द्य काम ।
धर्म अर्थ काम मोक्ष प्राप्त होय मीत ! तोहि,
सत्व-सत्य अत पाव राम धाम ॥
जन्म वार-बार मानुषी न पाइये जपो,
लगाय चित्त अष्ट जाम सत्य नाम ।
राम राम राम राम राम राम राम,
राम राम राम राम राम राम राम ॥

(भानु कवि)

सुधानिधि दण्डक (१६ ग ल युग्मक)

सुधानिधि के प्रत्येक पाद मे गुरु-लघु वर्णो के १६ जोडे रखे जाते है।

यथा— का करै समाधि साधि, का करै विराग जाग,
का करै अनेक योग, भोग हू करै सु काह।
का करै समस्त वेद औ' पुराण शास्त्र देखि,
कोटि जन्म लौ पढै, मिलै तऊ कछू न थाह ।।
राज्य लै कहा करै, सुरेश औ नरेश ह्वै न,
चाहिए कहूँ सुदुख होत लोक लाज माह।
सात द्वीप खड नौ त्रिलोक सपदा अपार,
लै कहा सु कीजिये, मिलै जु आप सीय नाह ।।
(काव्य सुधाकर)

कुसुमस्तबक दण्डक (९ या अधिक सगण)

इस दण्डक के प्रत्येक पाद मे ९ या इससे अधिक सगण रखे जाते है।

यथा— जगदब! जरा करुणा कर दो,
निबली पर पीडित दीन दुखी हम है।
हम मे भर दो दुख दारिद दारिणि!
शक्ति महेश्वरि हे! हम वेदम है ।।
मन मदिर मे बिकसे विमला मति,
धीर बने हम वीर शिरोमणि हो ।
यह आरत भारत भारत हो
इसमे फिर वे रण शूर शिरोमणि हो ।।
(सुधा देवी)

सिंह विक्रीडित दण्डक (९ यगण)

इस दडक के प्रत्येक पाद मे ९ या इससे अधिक यगण रखे जाते है—

नही शोक मोही पिता मृत्यु केरो,
लहे पुत्र चारी किये यज्ञ केतौ पुनीता।
नही शोक मोही लखी जन्म भूमी,
रमानाथ केरी अयोध्या भई जो अमीता ।।

नही शोक मोही कियो जोउ माता,
भले ई कहै मोहिँ मूढा सुबुद्धी रु मीता ।
जरै नित्य छाती यहै एक शोका,
बिना पाद त्राणा उदासो फिरै राम सीता ॥
('भानु' कवि)

(ख) मुक्तक दंडक

अक्षर की गिनती यदा, कहुँ कहुँ गुरु - लघु नेम ।
वर्णवृत्त मे ताहि कवि, मुक्तक कहे सप्रेम ॥
(भिखारीदास)

मुक्तक दडको के प्रत्येक पाद मे अक्षरो की सख्या ही समान होने का नियम है । उनमे लघु-गुरु-वर्णो के क्रम या 'गरण बन्धन' का कोई नियम नही । इस 'गरण बन्धन' से मुक्त होने के काररण ही इनको मुक्तक कहते है । हाँ, लय की सुचारुता के लिए कही-कही किसी वर्ण के लघु या गुरु होने का सकेत लक्षरण आचार्यो ने कर दिया है ।[1]

हिन्दी मे साधाररण दडको की अपेक्षा मुक्तक दडक अधिक व्यवहृत हुए है। तुलसी, केशव, पद्माकर, वैताल आदि प्राचीन कवियो—विशेषतया पुराने दरबारी भाटो और चारणो की कविता मे—और 'शकर' उपाध्याय, 'आनन्द कुमार' आदि आधुनिक कवियो ने मुक्तक दडको का आम प्रयोग किया है । जैसे अनेक विध सवैया छन्दो के लिए कवि लोगो ने 'साधाररण सज्ञा सवैया' का प्रयोग किया है । वैसे ही मुक्तक दडको के लिए कवित्त' शब्द का प्रयोग हुआ है ।

---

१ जा के चारिहु चरन मे अक्षर केर प्रमान ।
गरण बन्धन सो मुक्त है, मुक्तक ताहि बखान ॥
कहुँ-कहुँ लय और ढार हित, गुरु-लघु रखे निमित्त।
याही कौ मुक्तक कहत या ही कहत कवित्त ॥
(साहित्य सागर)

कही-कही किसी-किसी कवि ने 'घनाक्षरी', 'रूप घनाक्षरी', 'देव घनाक्षरी', 'मनहरण', आदि विशेष नाम भी लिख दिए है, परन्तु प्राय 'कवित्त' या 'दडक' शब्द का ही अधिक प्रयोग मिलता है ।

क्रम का कोई विशेष नियम न होने के कारण मुक्तक दडको के किसी विशेष वर्गीकरण या भेद-निरूपण का प्रश्न ही पैदा नही होता । प्रयोक्ता की रुचि के अनुसार इनके बीसियो रूप और प्रकार बन सकते है । तथापि हिन्दी-साहित्य मे प्रयुक्त इनके विशेष रूपो को देखकर सख्या के आधार पर मुक्तक दडको का विभाजन इस प्रकार से किया जा सकता है—

(क) ३१ अक्षरों के मुक्तक दंडक

इनमे तीन दडक विशेष प्रसिद्ध है—

१ **घनाक्षरी या मनहर या मनहरण**—इसके प्रत्येक पाद मे ३१ वर्ण होते है । अतिम वर्ण गुरु होना चाहिए ।

२ **मनहरण**—इसके प्रत्येक पाद मे ३१ वर्ण होते है जिनमे से ३० तो लघु वर्ण और अतिम वर्ण गुरु होने का नियम है ।

३ **कलाधर**—इसके प्रत्येक पाद मे ३१ वर्ण होते है जो क्रमश गुरु-लघु के १५ युग्मको मे रखे जाते है । ३१वाँ वर्ण गुरु होता है ।

(ख) ३२ अक्षरो के मुक्तक दडक

इनमे पाँच दडक विशेष प्रसिद्ध है—

१ **रूप घनाक्षरी**—इसके प्रत्येक पाद मे ३२ अक्षर रहते है । अत का वर्ण लघु रखा जाता है ।

२ **जलहरण**—इसके प्रत्येक पाद मे ३२ अक्षर रखे जाते है । अत के दो वर्ण ३१वाँ और ३२वाँ सदा लघु होने चाहिएँ ।

३ **डमरू**—इसके प्रत्येक पाद मे ३२ वर्ण रखे जाते है । कवि-प्रथा के अनुसार इसके सब-के-सब अक्षर लघु ही रखे जाते है ।

४ **कृपाण**—इसके प्रत्येक पाद मे ३२ वर्ण रखे जाते है । इसका

विशेष नियम इतना ही है कि ३१वॉ वर्ण गुरु और ३२वॉ लघु होना चाहिए।

५ **विजया**—इसके प्रत्येक पाद मे ३२ वर्ण रखे जाते है। इसका ३०वाँ, ३१वॉ और ३२वॉ अक्षर सदा लघु होना चाहिए।

(ग) ३३ अक्षरो के मुक्तक

इनमे एक ही मुक्तक प्रयोग मे देखा गया है। वह है—

(१) **देव घनाक्षरी**—इसके प्रत्येक पाद मे ३३ वर्ण रखे जाते हैं। अतिम तीन वर्ण प्राय लघु होते है। यति ८ ८ ८ ९ पर पडती है।[1]

कुछ-एक मुक्तक दण्डको के उदाहरण—

घनाक्षरी (३१ वर्ण, अन्त ऽ)

अग अग दलित ललित फूले किसुक से,
हने भट लाखन लपन जातुधान के।
मारि कै पछारि कै उपारि भुजदड चड,
खड-खड डारे ते विदारे हनुमान के॥
कूदत कवध के कदव वव सी करत,
धावत दिखावत है लाघौ राघौ बान के।
तुलसी महेस विधि लोकपाल देव गन
देखत विमान चढै कौतुक मसान के॥ **(तुलसी)**

---

१ कवि प्रयोग को देखकर मुक्तक दण्डको की 'यति' के सम्बन्ध में किसी विशेष नियम का निर्धारण नही किया जा सकता। भिन्न-भिन्न कवियो ने अपनी इच्छा के अनुसार भिन्न-भिन्न प्रकार से यतियाँ रखी है। और यह स्वाभाविक भी है। आखिर 'यति' या विश्राम का उद्देश्य पढने वाले को सॉस लेने-देने का अवसर जुटाना है। गुरु वर्णों की अपेक्षा लघु वर्णों के प्रयोग से सॉस कुछ अधिक देर में लेने की आवश्यकता पडती है। मुक्तको में गुरु-लघुओ के प्रयोग का बंधन न होने से यति का आगे-पीछे हो जाना सर्वथा स्वाभाविक है।

खड़ी बोली के घनाक्षरी का नमूना देखिये—

आज महाभारत का अद्वितीय वीर कर्ण,
त्रास से त्रिलोक को त्रिदेवो को कँपाता है।
कालदड धारो काल काल के समान वह,
काल पृष्ठ धारी विकरालता दिखाता है॥
मित्र सैनिको का पृतनाहव अपार सुनो,
ब्यूह प्रतिब्यूह भयब्यूह मिटा जाता है।
देखो युयुधान, चेकितान अचेतान पडे,
यान-हीन मान-हीन भीम भगा आता है॥

(आनदकुमार)

कलाधर (३१ वर्ण, गु-ल युग्मक १५+गुरु)

जाय के भरत्थ चित्रकूट राम पास वेगि,
हाथ जोरि, दीन ह्वै, सुप्रेम ते विनै करी।
सीय तात मात कौशिला वसिष्ठ आदि पूज्य,
लोक वेद प्रीति नीति की सुरीति ही धरी॥
जान भूप बैन धर्मपाल राम ह्वै सकोच,
धीर दे गँभीर बधु की गलानि को हरी।
पादुका दई पठाय औध को समाज साज,
देख नेह राम सीय के हिये कृपा भरी॥

(भानु कवि)

रूप घनाक्षरी (३२ वर्ण, अन्तिम लघु)

छन छन छीजत न देखहि समाज तन,
हेरहि न विधवा छ-टूक होत छतियान।
जाति को पतन अवलोकहिँ न आकुल ह्वै,
भूलि ना विलोकहिँ कलकी होत कुलमान॥

'हरि औध' छिनत लखहिँ न सलोने लाल,
लुटत निहारहिँ न लोनी-लोनी ललनान।
खोले कछु खुली पै कहाँ है ठीक-ठीक खुली,
अधखुली अजौ है हमारी खुली अँखियान॥
(अयोध्यासिंह)

देव घनाक्षरी (३३ वर्ण, अन्त नगण)
झूमत रहत नित रंग में उमंग भरे,
मस्त मनमौजी रहैं भाव के भरन भरन।
कहत 'बिहारी' कवि, कवि अरु कुञ्जर की,
एक ही बखानी रीति बानी में बरन बरन॥
कै तो निज गेह, कै नरेस गेह पावैं छवि,
अनत न जावैं ठौर, दो ही ये धरन धरन।
मच्छर तौ नाहिँ तौ जगन्तर में फेरी देयँ,
स्वान तौ नहीं है फिरें घूमत घरन-घरन॥
(बिहारीलाल ब्रह्मभट्ट)

२. अर्धसम वर्णिक छन्द

जिन छन्दों में प्रथम और तृतीय पाद एक समान हों और द्वितीय तथा चतुर्थ पाद एक समान हों, वे अर्ध-सम छन्द माने जाते हैं।[1]

विषम विषम, सम-सम चरण तुल्य, अर्धसमवृत्त।
(भानु कवि)

---

१ हिन्दी में वर्णिक अर्धसम छन्दों का चलन नहीं है। पुराने कवियों ने दोहा, सोरठा, उल्लाला आदि कतिपय मात्रिक अर्धसम छन्दों का प्रयोग तो किया है, परन्तु पुराने किसी भी कवि की रचना में वर्णिक अर्धसम छन्द का प्रयोग हमारे देखने में नहीं आया। लक्षणकारों

कुछ एक अर्धसम वृत्त ये हैं—

मुरली छन्द (१०,११)

इस छन्द के पहले और तीसरे पादो मे १० अक्षर और दूसरे तथा चौथे पाद में ११ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—[1]

१ ३ पाद (विषम पाद)	स	स	ज	ग
	।।ऽ	।।ऽ	।ऽ।	ऽ

ने सस्कृत के अनुकरण पर प्रथा-पालन के लिए हिन्दी में भी अर्धसम वर्णिक छन्दो का उल्लेख अवश्य किया है और अपने ही उदाहरण बनाकर उनका समन्वय भी कर दिया है। यह बात नही कि हिन्दी मे अर्धसम वृत्त बन नहीं सकते। हमारा वक्तव्य इतना ही है कि वे पुराने साहित्य मे बने नही है। हाँ सस्कृत में इनका थोडा-बहुत प्रचार अवश्य रहा है। कहते है महाराष्ट्री में—जो छन्दोबद्ध साहित्य और छन्द-निर्माण की क्षमता के लिए भारत की इतर देश भाषाओ से सबसे अधिक समृद्ध और सक्षम है—अर्धसम छन्द पाए जाते है। साहित्य-सागर के कर्ता ने केवल सस्कृत के अर्धसम वृत्तो के नाम गिना कर यह कह दिया है—

सुरवाणी महाराष्ट्र मे, इनकौ रहत प्रचार।
तासो भाषा नहिँ कहे, बढत ग्रन्थ विस्तार॥

इसी प्रकार 'भानु कवि' ने भी ये शब्द लिखे है—"अर्धसम वृत्तो का प्रयोग 'सस्कृत ही' मे पाया जाता है। भाषा मे इन वृत्तो का बहुत कम प्रचार है।

१ विषमे ससजास्ततो गुरु ।
समपादे मुरली सभलगा ॥

यह स्मरण रखना चाहिए कि छन्दो के नाम रखने में लक्षणकारो ने पूर्ण स्वच्छन्दता से काम लिया है। हेमचन्द्र ने इस छन्द का नाम

२ ४ पाद (सम पाद)   स   भ   र   ल   ग
                      ।।S S।। S।S । S

यथा—   चिरकाल रसाल ही रहा।
         जिस भावज्ञ कवीन्द्र का कहा ॥
         जय हो उस कालिदास की।
         कविता केलि कला विलास की ॥   (गुप्त)

वेगवती (१०,११)

इस छन्द के पहले तथा तीसरे पाद मे १० और दूसरे तथा चौथे पाद मे ११ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

विषम पाद (१ ३)   स   स   स   ग
                   ।।S ।।S ।।S S

सम पाद (२ ४)   भ   भ   भ   ग   ग
                 S।। S।। S।। S   S

यथा—   गिरिजापति मो मन भायो।
         नारद शारद पार न पायो ॥
         कर जोर अधीन अभागे।
         ठाढ भये वर दायक आगे ॥   ('भानु' कवि)

प्रबोधिता, जयकीर्ति ने विबोधिता, तथा किसी ने ललिता, शिखामणि आदि अनेक नाम रखे है। छन्द कौस्तुभकार ने इसी को सुन्दरी' कहा है।

केशव ने भ भ भ स के मोदक छन्द का नाम सुन्दरी लिखा है। 'अगराज' के कर्ता श्री आनन्दकुमार 'द्रुतविलबित' को ही सुन्दरी मानते है। सुन्दरी एक सवैया भी है। कई आधुनिक लेखको ने इस छन्द का नाम भी सुन्दरी लिखा है भ्रम-निवृत्ति के लिए हमने इसका सस्कृत का पुराना नाम ही रख दिया है जिसका लक्षण उद्धत कर दिया है।

द्रुतमध्या छन्द (११, १२)

इस छन्द के विषम पादो (१, ३) मे ११ और सम पादो (२ ४) मे १२ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है।

विषम पाद (१, ३) भ भ भ ग ग
SII SII SII S S

सम पादें (२ ४) न ज ज य
III ISI ISI ISS

यथा—
कौतुक आज कियो बनमाली।
जल विच कूदि परो सुनु आली॥
नाथि फनिदहिँ तोषि फनिन्दी।
प्रगट भयो द्रुत मध्य कलिदी॥

पुष्पिताग्रा छन्द (१२, १३)

पुष्पिताग्रा के विषम पादो मे १२ और सम पादो मे १३ अक्षर इस क्रम से रखे जाते है—

विषम पाद— न न र य
III III SIS ISS

सम पाद— न ज ज र ग
III ISI ISI SIS S

यथा—
प्रभुसम नहिँ अन्य कोई दाता।
सु धन जु ध्यावत तीन लोक त्राता।
सकल असत कामना बिहाई।
हरि नित सेवहु मित्त चित्त लाई॥ ('भानु' कवि)

हरिणप्लुता छन्द (११, १२)

इस छन्द के विषम पादो मे ११ और सम पादो मे १२ अक्षर इस क्रम से रखे जाते हैं—

विषम पाद	स	स	स	ल	ग
	IIS	IIS	IIS	I	S
सम पाद	न	भ	भ	र	
	III	SII	SII	SIS	

यथा—
हरि कौ भजिये दिन रात जू।
टरहिँ तोर सबै भ्रम जाल जू॥
यह सीख जु पै मन मे धरौ।
सहज मे भवसागरही तरौ॥ ('भानु' कवि)

आख्यानिकी तथा विपरीताख्यानिकी छन्द (११, ११)

इन दोनो छन्दो के विषम तथा सम पादो मे ११-११ अक्षर रहते है, परन्तु उनका क्रम भिन्न होता है—

आख्यानिकी	विषम पाद	त	त	ज	ग	ग
		SSI	SSI	ISI	S	S
	सम पाद	ज	त	ज	ग	ग
		ISI	SSI	ISI	S	S
विपरीताख्यानिकी	विषम पाद	ज	त	ज	गं	ग
		ISI	SSI	ISI	S	S
	सम पाद	त	त	ज	ग	ग
		SSI	SSI	ISI	S	S

वस्तुत ये दोनो छन्द पूर्वोक्त इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा के मिश्रित रूप उपजाति वृत्त के नियमित भेद है। उपजाति के लिए यह बन्धन नही है कि किसी विशेष पाद मे इन्द्रवज्रा या उपेन्द्रवज्रा का पाद रहे। किन्तु जहाँ कवि स्वभाव से विषम पादो मे इन्द्रवज्रा और सम पादो मे उपेन्द्र-वज्रा के पाद रहे वहाँ आख्यानिकी, और जहाँ इसके विपरीत रहे—अर्थात् विषम पादो मे उपेन्द्रवज्रा और सम पादो मे इन्द्रवज्रा के पाद रहे वहाँ विपरीताख्यानिकी क्रम अर्धसम वृत्त मान लिए गए है।

थथा—आख्यानिकी

इच्छा न मेरी कुछ भी बनूं मै ।
कुबेर का भी मुँह मै न देखू ॥
इच्छा मुझे एक यही सदा है ।
नये नये उत्तम ग्रन्थ देखूँ ॥

विप्रीताख्यानिकी

दिगन्त मे सार अनन्त तू है ।
उद्योग-उद्यान बसन्त तू है ॥
नही रहेगी यह नित्य काया ।
हे मित्र त्यागो यह मोह माया ॥

इसी प्रकार इन्द्रवशा (त त ज र) और वशस्थ (ज त ज र) तथा चचला (र ज र ग र ल) और पचवक्त्रा (जर जर जग) आदि अनेक छन्दो के नियमित सम-विषम पादी मिश्रणो को अर्धसमवृत्तो मे रखा जा सकता है ।

३　विषम वर्णिक छन्द

जो छन्द न 'समवर्णिक' हो, न अर्धसम वर्णिक उन्हे विषम वर्णिक छन्द कहते है। इनमे न तो यह नियम है कि इनके अवश्य ही चार पाद हो और न ही यह नियम कि प्रत्येक पाद मे या समपादो और विषम पादो मे वर्णों की सख्या और क्रम एक समान हो। ये वस्तुत कुछ फुटकर या मिश्रित छन्द है जो किसी भी विशेष लक्षण मे नही बाँधे जा सके है ।[1]

बनावट के आधार पर हम इन्हे तीन भेदो मे बाँट सकते है—

(क) चतुरक्षर भेदी या पद चतुरूर्द्ध ।

---

१ अर्धसम वर्णिक छन्दो के समान हिन्दी में इन विषमपादी वर्णिक छन्दो का प्रयोग भी प्राय अनुपलब्ध ही है। हाँ इनके 'प्रवर्धित पादी भेद के कतिपय उदाहरण मिल जाते है । प्रथा-पालन के विचार से ही लक्षण आचार्यों ने इनका निरूपण किया प्रतीत होता है ।

(ख) सयुक्त या मिश्रित
(ग) प्रवर्धितपादी

(क) चतुरक्षर भेदी छन्द

इनमे पाद तो चार ही होते है किन्तु चारो पादो मे परस्पर ४-४ अक्षरो का अन्तर होता है। किसी पाद मे ८ किसी मे १२ किसी मे १६ और किसी मे बीस अक्षर होते हैं। इनमे प्रधानतया ५ छन्दो का उल्लेख किया जाता है —

१ आपीड़

इसके प्रथम पाद में ८, दूसरे मे १२, तीसरे में १६ और चौथे मे २० अक्षर होते हैं। विशेष नियम यह है कि इसके प्रत्येक पाद के अन्तिम दो वर्ण गुरु रखे जाते है। शेष सभी वर्ण लघु होते है।
यथा—

प्रभु असुर सहर्ता।
जगविदित पुनि जगत भर्ता॥
दनुज कुल अरि, जग हित धरम धर्ता।
सरबस तज मन, भज नित प्रभु भवदुख हर्ता॥

प्रत्यापीड़

इसके पादो की अक्षर सख्या भी आपीड के समान होती है—८,१२, १६,२०। विशेष नियम यह है कि इसमे प्रत्येक पाद के आदिम और अन्तिम दो-दो वर्ण गुरु रखे जाते हैं, शेष सभी अक्षर लघु होते है।
यथा—

रामा असुर संहर्ता।
साची अहहिं पुनि जगत भर्ता॥
देवारि कुल अरि जगहित धरम धर्ता।
मोहा मद तज, मन भज नित प्रभु भव दुख हर्ता।

(भानु कवि)

३ मजरी

इसके चारो पादो मे अक्षर सख्या इस प्रकार होती है—

प्रथम पाद १२, द्वितीय पाद ८, तृतीय पाद १६ और चतुर्थ पाद २०। उक्त प्रत्यापीड के उदाहरण के प्रथम पाद को द्वितीय और द्वितीय को प्रथम करके पढे तो वही मजरी का उदाहरण हो जायगा।

४ लवली

इसके पाद इस प्रकार रखे जाते है—१६, १२, ८, २० ।

पूर्वोक्त आपीड के उदाहरण के तृतीय पाद को प्रथम और प्रथम पाद को तृतीय करके पढे तो वही लवली का उदाहरण हो जायगा।

५. अमृतधारा

इसकी पाद-व्यवस्था इस प्रकार है—२०, १२, १६, ८

उस आपीड के उदाहरण के प्रथम पाद को चतुर्थ और चतुर्थ को प्रथम करके पढे तो वही अमृतधारा का उदाहरण हो जायगा।

संयुक्त छन्द

इनमे भी प्रत्येक छन्द के पाद चार ही होते है। ये प्राय किन्ही दो या तीन समपादी छन्दो के पादो के सम्मिश्रण से बने होते है। कही कोई पाद किसी छन्द का और कोई किसी अन्य छन्द का। इनके विशेष उल्लेखनीय छन्द ये हैं—

उद्गता

इसकी पाद-व्यवस्था इस प्रकार है—

प्रथम पाद—	स ज स ल IIS ISI IIS I	(१० अक्षर)
द्वितीय पाद—	न स ज ग III IIS ISI S	(१० अक्षर)

तृतीय पाद— भ न ज ल ग (११ अक्षर)
SII III ISI I S

चतुर्थ पाद— स ज स ज ग (१३ अक्षर)
IIS ISI IIS ISI S

यथा— मत छोडिये सुजन सग।
हरि भगति धारिये हिये ॥
वेगि भव जलधि पार करो।
जपिये निरतर, हरी हरी हरी॥

सौरभक

पूर्वोक्त उद्गता छद के ततीय पाद को यदि निम्न क्रम में रखें तो सौरभक छद बन जाता है—

तृतीय पाद— र न भ ग
SIS III SII S

(शेष उद्गता के समान)

पूर्वोक्त उदाहरण का तीसरा पाद यदि यो पढे तो वही सौरभक का उदाहरण हो जायगा—'वेगि पाप चय छार करो।'

ललित

पूर्वोक्त उद्गता छद के तृतीय पाद को यदि निम्न क्रम मे रखे तो ललित छद बन जाता है—तृतीय पाद-न न. स. स. (शेष उद्गता के समान)। पूर्वोक्त उद्गता के उदाहरण के तृतीय पाद को यदि यो पढे तो वह ललित का उदाहरण हो जायगा—

तृतीय पाद—'निज वृजिन निचय छार करो'

उपस्थित प्रचुद

इसकी पाद-व्यवस्था इस प्रकार होती है—

प्रथम पाद— म स ज भ ग ग (१४ अक्षर)
SSS IIS ISI SII S S

द्वितीय पाद—	स	न	ज	र	ग	(१३ अक्षर)
	।।ऽ	।।।	।ऽ।	ऽ।ऽ	ऽ	
तृतीय पाद—	न	न	स			(९ अक्षर)
	।।।	।।।	।।ऽ			
चतुर्थ पाद—	न	न	न	ज	य	(१५ अक्षर)
	।।।	।।।	।।।	।ऽ।	।ऽऽ	

यथा— गोविदार्चन मे जु मिल चित्त लगैहौ।
निहिचै यहि भवसिधु पार जैहौ॥
भ्रम अरु मद तज रे।
तन मन धन सन भज ले हरि को रे॥

(भानु कवि परिवर्तित)

सौम्यशिखा

इसमे पहले दो (प्रथम और द्वितीय पाद) विद्युन्माला (म म ग ग आठो गुरु) के और अन्तिम दो (तृतीय और चतुर्थ) पाद अचलधृति (न न न न न ल १६ लघु) के रखे जाते है। इसका दूसरा नाम अनगक्रीडा भी है।

यथा—

हिंदी मेरी भाषा प्यारी। (८ गुरु)
सूरा चदा गावै न्यारी। (८ गुरु)
तुलसी सम कवि जन जग मन हरनि। (१६ लघु)
इस सम सुभग अरु शुभ नहि अवनि॥ (१६ लघु)

ज्योति शिखा

सौम्यशिखा का उलटा ज्योति शिखा है—अर्थात् प्रथम, द्वितीय पाद अचलधृति के (१६–१६ लघु) और तृतीय, चतुर्थ पाद विद्युन्माला के (८-८ गुरु)।

सौम्यशिखा के उदाहरण को ही यदि तृतीय, चतुर्थ पाद को प्रथम, द्वितीय और प्रथम, द्वितीय को तृतीय, चतुर्थ करके पढे तो यही ज्योति शिखा का उदाहरण हो जायगा। इसी प्रकार पृष्ठ १६ मे उद्धृत तुलसीदास जी का सवैया जो मत्तगयद और सुन्दरी सवैयो का मिश्रित रूप है, इस प्रकार का सयुक्त विषम पाद छद माना जा सकता है। परन्तु इसका नामकरण अभी नही हुआ।

(ग) प्रवर्धितपादी

जिन छन्दो मे चार से अधिक अथवा न्यून पाद हो वे सब इस श्रेणी के विषम छन्द माने जाते है। इनमे किसी भी समपादी या चतुष्पादी छन्द के चार से अधिक पाद रखे जाते है। पुराने कवियो ने इस प्रकार के मात्रा छन्द तो प्रयुक्त किये है, परन्तु वर्ण छन्द उनकी रचना मे कम ही देखने मे आए है। वर्तमान कवियो की प्रवृत्ति इस ओर निश्चित रूप से प्रगति कर रही है। वे पुराने रूढि-बधन मे जकडे रहना पसद नही करते। यदि उनका भाव चार पादो मे पूरा नही हो सकता, तो वे पॉच या छ पाद रचकर ही उसे पूरा करते है।[1] ऐसे प्रवर्धितपादी छन्दो के कुछ नमूने ये है।

षट्पदी प्रमाणिका छन्द (ज र ल ग)

इनमे पूर्वोक्त प्रमाणिका छन्द के छ पाद रखे गए है—

सुधार धर्म कर्म को।
विसार दो अधर्म को॥
बढाय नेह वेलि को।
कथा सुनीति रीति को॥

---

१ वस्तुत. प्रवर्धितपादी छन्दो का चलन वैदिक छन्दो में मिलता है। ऋग्वेद में पचपादी त्रिष्टुप् और अथर्ववेद (३-१५-४) में षट्पादी त्रिष्टुप् का प्रयोग हुआ है। देखो भूमिका-पृष्ठ।

सुना करो अनेक से।
मिलो महेश एक से ॥ (शकर कवि)

षट्पदी भुजङ्ग छन्द (य य य ल ग)

इसमे पूर्वोक्त भुजगी छन्द के छ पाद रखे गए है—

अरे ओ ! अजन्मा कहाँ तू नही।
न कोई ठिकाना जहाँ तू नही ॥
किसी ने तुझे ठीक जाना नही।
इसी से यथातथ्य माना नही ॥
शिखा सत्य की झूठ ने काट ली।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥ (शकर कवि)

षट्पदी तोटक छन्द (स स स. स)

इसमे पूर्वोक्त तोटक के छ पाद रखे गए है—

जल तुल्य निरतर शुभ्र रहो।
प्रबलानल से तुम दीप्त रहो ॥
पवनोपम सत्कृतिशील रहो।
अवनीतलवत् धृतिशील रहो ॥
कर लो नभ-सा शुचि जीवन को।
नर हो, न निराश करो मन को ॥

(मैथिलीशरण गुप्त)

षट्पदी स्रग्विणी छद (र. र र र.)

इसमे पूर्वोक्त स्रग्विणी छद के छ पाद रखे गए हैं—

ज्ञान से मान से शक्ति से हीन हो।
दान से ध्यान से भक्ति से हीन हो ॥
आलसी हो महा, औ' पराधीन हो।
सोच देखो सभी से तुम्ही दीन हो ॥

अग को आँसुओ से भिगोते रहो।
क्यो जगोगे अभी देश ! सोते रहो॥

(रामचरित उपाध्याय)

षट्पदी भुजंगप्रयात छन्द् (य. य. य. य.)

इसमे पूर्वोक्त भुजगप्रयात के छ पाद रखे गए है—

अजन्मा न आरम्भ तेरा हुआ है।
किसी से नही जन्म मेरा हुआ है॥
रहेगा सदा, अन्त तेरा न होगा।
किसी काल मे नाश मेरा न होगा॥
खिलाडी खुला खेल तेरा रहेगा।
मिटेगा नही मेल मेरा रहेगा॥ (शकर कवि)

अथ च—

जहाँ घोषणा राम के नाम की है।
जहाँ कामना कृष्ण के काम की है॥
अहिसा जहाँ शुद्ध बुद्धार्य की है।
प्रतिष्ठा जहाँ शकराचार्य की है॥
वहाँ देव ने दिव्य योगी उतारे।
प्रतापी दयानद स्वामी हमारे॥

(शकर कवि)

षट्पादी पंचचामर छन्द् (ज र ज. र ज, ग)

इसमे पूर्वोक्त पचचामर के छ पाद रखे गए है—

चलो अभीष्ट मार्ग में सहर्ष खेलते हुए।
विपत्ति विघ्न जो पडे उन्हे ढकेलते हुए॥
घटे न हेल-मेल, हाँ बढे न भिन्नता कभी।
अतर्क एक पथ के सतर्क पन्थ हो सभी॥

तभी समर्थ भाव है कि तारता हुआ तरे ।
वही मनुष्य है कि जो मनुष्य के लिए मरे ।।

(मैथिलीशरण गुप्त)

इसी प्रकार आधुनिक कविता मे कही-कही पचपादी रचनाओ के भी दर्शन होते है । इनका पूर्ण विवेचन और नामकरण अभी तक नही हो पाया है । यह विषय निकट भविष्य मे पुष्कल सामग्री की विद्यमानता मे ही छन्द शास्त्रियों के गम्भीर अध्ययन की वस्तु बन सकेगा ।

चौथा अध्याय

प्रत्यय प्रकरण

पिछले दोनो अध्यायो मे मात्रिक और वर्णिक छन्दोजातियो के सम्बन्ध मे हम 'प्रस्तार' की रीति से प्रत्येक जाति के सभाव्य छन्दो की सख्या का उल्लेख करते आए है। इस अध्याय मे हम पाठको की ज्ञान-वृद्धि के लिए प्रस्तार आदि कतिपय अत्यन्त उपयोगी प्रत्ययो का वर्णन करेंगे जिनसे छन्दो के भेद, लक्षण और सख्या आदि का ज्ञान सुगमता से हो जाता है।

छन्द शास्त्र के प्रत्यय एक प्रकार से 'गणित के फार्मूले' है, जिन्हे हम आम भाषा मे 'हिसाब के गुर' भी कह सकते है। इन गुरो की सहायता से किसी भी छन्दजाति या दडक आदि के सभाव्य, निर्दिष्ट या अपेक्षित छन्दो की सख्या और उनके भिन्न-भिन्न लक्षणो को झट से जाना जा सकता है।

साधारणतया हिन्दी के लक्षणकारो ने इस प्रकार के नौ या दस प्रत्ययो का उल्लेख किया है।[1] उनके नाम और विशेष उपयोग नीचे दिये जाते है।

---

१. सस्कृत के पुराने और सभी नये आचार्यों ने छ ही प्रत्ययो का उल्लेख किया है। पिंगल के छन्द शास्त्र में भी छ ही प्रत्ययो का वर्णन है। जयदेव (८ १) और जयकीर्ति (८ १८) में निम्न लिखित छ ही प्रत्ययो का उल्लेख है—

प्रस्तारो नष्टमुद्दिष्टमेक द्वित्रिलघु क्रिया।

संख्या चैवाध्वयोगश्च षड्विध छन्द उच्यते॥ (जयदेव)

१. **प्रस्तार**—इसके द्वारा प्रत्येक जाति के छन्दो के रूप, लक्षण, भेद सख्या आदि का पूरा पता चल जाता है।

२. **सूची**—यह केवल किसी जाति के छन्दो की सख्या को बताती है। (प्रस्तार से भी सख्या का पता चल जाता है)

३. **नष्ट**—'अमुक जाति के अमुकसख्यक छन्द का क्या रूप या लक्षण होगा' —इस बात का परिचय नष्ट से हो सकता है। (यह परिचय प्रस्तार के द्वारा भी मिल जाता है)

४ **उद्दिष्ट**—यह किसी निर्दिष्ट रूप छद की क्रम सख्या को बताता है। (प्रस्तार से भी यह कार्य सम्पन्न हो जाता है)

५ **पाताल**—इससे किसी जाति के आदिलघु, अन्तलघु, आदिगुरु, अन्तगुरु, छन्दो की सख्या तथा सर्वगुरुओ और सर्वलघुओ की सख्या का पता लग जाता है। (प्रस्तार से भी यह कार्य सपन्न हो जाता है)

'प्रस्तारो नष्ट मुद्दिष्टमेकद्व्यादि लघु क्रिया।
सख्यान मध्वयोगश्चेत्युक्त प्रत्यय षट्ककम् (जयकीर्ति)

इस प्रकार केदार (वृत्तरत्नाकर अध्याय ६) में भी इन्हीं छ. ही प्रत्ययों का उल्लेख है।

हेमचन्द्र ८ १ में भी 'अथ प्रस्तारादय. षट् प्रत्यया' छ ही प्रत्ययो का वर्णन है।

'साहित्य सागर' के कर्ता ने हिन्दी में भी छ· ही प्रत्ययो का उल्लेख किया है।

यथा—जासो बहुविधि छन्द के भेद परै पहचान।
ताकौं प्रत्यय कहत है, कोविद सुकवि सुजान।

ताके षट् विध नाम है इत्यादि (सा सा प्रथम भाग पृष्ठ ३०)

६. **मेरु तथा ७ खडमेल**—इनके द्वारा किसी जाति के सर्वगुरु छन्दो और सर्व लघु छन्दो तथा अमुक सख्यक गुरु और अमुक सख्यक लघु वाले छन्दो की सख्या का पता चलता है।

(प्रस्तार के द्वारा यह कार्य भी सपन्न हो जाता है)

८ **पताका**—यह सर्वगुरु और सर्वलघु छन्दो की भेद-सख्या को प्रकट करती है। प्रस्तार से भी यह पता लग जाता है।

९ **मर्कटी**—वर्णो, मात्राओ, लघुओ और गुरुओ आदि की सर्व सख्या को प्रकट करती है। (प्रस्तार से भी इनका पता चल जाता है)

कहना न होगा कि इन सब प्रत्ययो मे प्रस्तार ही विशेष उपयोगी और सर्वग्राही है।[1] शेष प्रत्ययो से जिन बातो का ज्ञान हो सकता है वे सभी प्रस्तार के द्वारा विदित हो जाती है। उपयोग और सुगमता की दृष्टि से सूची भी ज्ञातव्य प्रत्यय है। इससे प्रस्तार का आश्रय लिये बिना ही विभिन्न छन्दोजातियो के छन्दो की सख्या का झट पता चल जाता है। शेष प्रत्ययो से जिन बातो का पता चलता है, वे न तो आवश्यक है और न उनका उपयोग ही कही देखने मे आया है। ये विशेषज्ञो के 'क्रीडा विलास' या 'बौद्धिक व्यायाम' के कौतुक-मात्र है।[2] अत हम

---

१. जयकीर्ति ने प्रस्तार की विशेष उपयोगिता का इन शब्दो में उल्लेख किया है—

गणाना प्रत्ययाना च मुख्य प्रस्तार एव स ।
तस्मात् प्रस्तारसूत्रं तद्वयेक सर्वत्र दृश्यते ॥

छन्दोऽनुशासन ८ १.

२. हिन्दी के प्रसिद्ध लक्षणकार श्री जगन्नाथप्रसाद (भानु कवि) ने इन प्रत्ययो के प्रसग में स्थान-स्थान पर यह चुनौती दी है—"परन्तु प्राचीन मतानुसार यह केवल कौतुक ही है, और यथार्थ में इससे कोई विशेष

प्रस्तार और सूची इन दो ही मुख्य और विशेष उपयोगी प्रत्ययो का निरूपण करते हैं ।

प्रस्तार

प्रस्तार का आधार अकगणित की वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा मूल और निर्दिष्ट सख्याओ के आकलन के द्वारा उनके सभाव्य समाहारो का ज्ञान होता है । छन्दशास्त्र मे प्रस्तार के द्वारा अक्षर-सख्या, अक्षर-भेद-सख्या और स्थिति-क्रम-सख्याओ के आधार पर अपेक्षित जाति के छन्दो के सम्पूर्ण और सभाव्य रूपो या समाहारो का ज्ञान हो जाता है । जैसे यदि दो अक्षरो की जाति (अत्युक्ता) के कुल रूप भेद अथवा सभाव्य समाहार जानने हो तो हमे इन बातो पर विचार करना होगा । अत्युक्ता की अक्षर सख्या २ है । फिर अक्षर दो प्रकार के है—गुरु और लघु । इससे अत्युक्ता मे या तो दोनो अक्षर गुरु हो सकते है (SS -यह एक भेद हुआ) या दोनो लघु (।।- यह दूसरा भेद हुआ) अब अक्षरो के क्रम की स्थितियाँ भी दो हो सकती है—या गुरु अक्षर पहले हो और लघु पीछे (S। —यह तीसरा भेद हुआ) और या लघु अक्षर पहले हो और गुरु पीछे (।S —यह चौथा भेद हुआ) । इस प्रकार दो अक्षरो की जाति के कुल चार ही भेद सभव है—SS, ।।, S।, ।S । इसी प्रकार एक अक्षर की जाति (उक्ता) के कुल दो ही भेद हो सकते है, (S, ।), कारण कि एक अक्षर में स्थितिक्रमजन्य भेद सभव नही । इन सभाव्य समाहारो को बताने वाली प्रक्रिया का नाम प्रस्तार है ।

आपातत प्रस्तार के द्वारा इन बातो का ज्ञान होता है ।

(१) निर्दिष्ट जाति के सभाव्य रूप (SS, ।।, S।, ।S)

लाभ भी नहीं, किन्तु वृथा समय नष्ट होता है ।" ('छन्द प्रभाकर' पृष्ठ ६४) तथा " ·· और यथार्थ में इनके न जानने से कोई विशेष हानि भी नहीं है ।" (पृष्ठ २२४)

(२) निर्दिष्ट जाति के सम्भाव्य छन्दो की सख्या — (४) (सूची)

(३) अमुक सख्यक छन्द का रूप (नष्ट)

(४) अमुक रूप की क्रम सख्या (उद्दिष्ट)

(५) आदि लघु, आदि गुरु आदि छन्दो के रूप तथा सर्वगुरु सर्वलघु, आदि की सर्व सख्या (पाताल—मर्कटी) आदि आदि,

सक्षेप मे, उपर्युक्त नष्ट, उद्दिष्ट आदि प्रत्ययो द्वारा ज्ञातव्य सभी बाते प्रस्तार से स्पष्टतया जानी जा सकती है।

छन्दो के दो प्रधान भेदो के आधार पर प्रस्तार भी दो प्रकार का है—वर्णिक प्रस्तार और मात्रिक प्रस्तार। वर्णिक छन्दो के प्रस्तार को वर्णिक प्रस्तार और मात्रिक छन्दो के प्रस्तार को मात्रिक प्रस्तार कहते है।[1]

(क) वर्णिक प्रस्तार की विधि

आदि गुरु तर लघु नि सक। दाएँ नक्कल बाएँ बक॥

('भानु' कवि)

१ अपेक्षित छन्दोजाति के छन्दो के प्रत्येक पाद मे जितने अक्षर होते है, उतने ही गुरु चिह्न (ऽ) पहले एक पक्ति मे लिख लो। जसे मध्या जाति के छन्दो के प्रत्येक पाद में तीन अक्षर होते है। तो पहले तीन गुरु चिह्न एक पक्ति मे लिख दो— ऽ ऽ ऽ

२, फिर दूसरी पक्ति में बाई ओर से जो सबसे पहला गुरु हो

---

१. वस्तुत. प्रस्तार का मौलिक फार्मूला तो एक ही है किन्तु वर्णों और मात्राओ के आकलन में थोडा भेद होने के कारण दोनो प्रस्तारो की विधि में भी कुछ थोडा सा भेद है। इसी 'रीति भेद' के कारण प्रस्तार के दो भेद माने गए है।

उसके नीचे लघु चिह्न (।) लिख दो और शेष दाहिनी ओर ऊपर के चिह्नो की नकल उतार दो। जैसे ऽ ऽऽऽ
।ऽऽ

३. फिर उससे नीचे की पक्ति मे भी बाईं ओर से जो सबसे पहला गुरु पडे उसके नीचे लघु रख दो और दाहिनी ओर ऊपर के चिह्नो की नकल उतार दो। बाईं ओर को जो स्थान खाली रह गया हो उसे गुरु लिखकर पूरा करो। यथा

ऽऽऽ
।ऽऽ
ऽ।ऽ

४ आगे यही प्रक्रिया करते जाओ—बाईं ओर से सर्व प्रथम गुरु के नीचे लघु, दाहिनी ओर ऊपर के चिह्नो की नकल और बाईं ओर के रिक्त स्थानो मे गुरु लिखते जाओ। यह प्रक्रिया तब तक करते जाओ, जब तक अन्त मे सारे ही लघु न आ जायँ। सर्व लघु आ जाने पर प्रस्तार की समाप्ति समझी जाती है। उक्त त्रैवर्णिक मध्या का पूरा प्रस्तार इस प्रकार चलेगा—

तीन वर्णों का प्रस्तार

भेद सख्या	रूप
१	ऽ ऽ ऽ
२	। ऽ ऽ
३	ऽ । ऽ
४	। । ऽ
५	ऽ ऽ ।
६	। ऽ ।
७	ऽ । ।
८	। । ।

(कुल भेद आठ)

नीचे उदाहरण और अभ्यास के लिए ४, ५, और ६ वर्णों की जातियो के प्रस्तार के नमूने दिये जाते है।

४ अक्षरा (प्रतिष्ठा) जाति का प्रस्तार

सख्या	रूप	सख्या	रूप
१	S S S S	९	S S S I
२	I S S S	१०	I S S I
३	S I S S	११	S I S I
४	I I S S	१२	I I S I
५	S S I S	१३	S S I I
६	I S I S	१४	I S I I
७	S I I S	१५	S I I I
८	I I I S	१६	I I I I

(कुल भेद १६)

५ अक्षरा (सुप्रतिष्ठा) जाति का प्रस्तार

सख्या	रूप	सख्या	रूप
१	S S S S S	१७	S S S S I
२	I S S S S	१८	I S S S I
३	S I S S S	१९	S I S S I
४	I I S S S	२०	I I S S I
५	S S I S S	२१	S S I S I
६	I S I S S	२२	I S I S I
७	S I I S S	२३	S I I S I
८	I I I S S	२४	I I I S I
९	S S S I S	२५	S S S I I
१०	I S S I S	२६	I S S I I
११	S I S I S	२७	S I S I I
१२	I I S I S	२८	I I S I I
१३	S S I I S	२९	S S I I I
१४	I S I I S	३०	I S I I I
१५	S I I I S	३१	S I I I I
१६	I I I I S	३२	I I I I I

(कुल भेद ३२)

६ अक्षरा (गायत्री) जाति का प्रस्तार

संख्या	रूप	संख्या	रूप
१	ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ	२५	ऽ ऽ ऽ । । ऽ
२	। ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ	२६	। ऽ ऽ । । ऽ
३	ऽ । ऽ ऽ ऽ ऽ	२७	ऽ । ऽ । । ऽ
४	। । ऽ ऽ ऽ ऽ	२८	। । ऽ । । ऽ
५	ऽ ऽ । ऽ ऽ ऽ	२९	ऽ ऽ । । । ऽ
६	। ऽ । ऽ ऽ ऽ	३०	। ऽ । । । ऽ
७	ऽ । । ऽ ऽ ऽ	३१	ऽ । । । । ऽ
८	। । । ऽ ऽ ऽ	३२	। । । । । ऽ
९	ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ	३३	ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ।
१०	। ऽ ऽ । ऽ ऽ	३४	। ऽ ऽ ऽ ऽ ।
११	ऽ । ऽ । ऽ ऽ	३५	ऽ । ऽ ऽ ऽ ।
१२	। । ऽ । ऽ ऽ	३६	। । ऽ ऽ ऽ ।
१३	ऽ ऽ । । ऽ ऽ	३७	ऽ ऽ । ऽ ऽ ।
१४	। ऽ । । ऽ ऽ	३८	। ऽ । ऽ ऽ ।
१५	ऽ । । । ऽ ऽ	३९	ऽ । । ऽ ऽ ।
१६	। । । । ऽ ऽ	४०	। । । ऽ ऽ ।
१७	ऽ ऽ ऽ ऽ । ऽ	४१	ऽ ऽ ऽ । ऽ ।
१८	। ऽ ऽ ऽ । ऽ	४२	। ऽ ऽ । ऽ ।
१९	ऽ । ऽ ऽ । ऽ	४३	ऽ । ऽ । ऽ ।
२०	। । ऽ ऽ । ऽ	४४	। । ऽ । ऽ ।
२१	ऽ ऽ । ऽ । ऽ	४५	ऽ ऽ । । ऽ ।
२२	। ऽ । ऽ । ऽ	४६	। ऽ । । ऽ ।
२३	ऽ । । ऽ । ऽ	४७	ऽ । । । ऽ ।
२४	। । ऽ । ऽ	४८	। । । । ऽ ।

सख्या	रूप	सख्या	रूप
४९	ऽ ऽ ऽ ऽ । ।	५७	ऽ ऽ ऽ । । ।
५०	। ऽ ऽ ऽ । ।	५८	। ऽ ऽ । । ।
५१	ऽ । ऽ ऽ । ।	५९	ऽ । ऽ । । ।
५२	। । ऽ ऽ । ।	६०	। । ऽ । । ।
५३	ऽ ऽ । ऽ । ।	६१	ऽ ऽ । । । ।
५४	। ऽ । ऽ । ।	६२	। ऽ । । । ।
५५	ऽ । । ऽ । ।	६३	ऽ । । । । ।
५६	। । । ऽ । ।	६४	। । । । । ।

(कुल भेद ६४)

इसी प्रकार उष्णिक् आदि वर्णिक जातियो तथा दडको आदि का भी प्रतिपाद अक्षर सख्या के अनुसार प्रस्तार क्रम चलता है।

यह स्मरण रहे कि ये सब भेद एक प्रकार से निर्दिष्ट अक्षरो के सभाव्य समाहार मात्र है। इन सबके न तो नाम रखे गये है और न इनका कही प्रयोग हुआ है। लक्षण अचार्यो ने विशेष प्रचलित रूपो के ही नाम रखे है।

(ख) मात्रिक प्रस्तार की विधि

मात्रिक प्रस्तार की रीति भी प्राय वर्णिक प्रस्तार के ही समान है। किन्तु इसमे मात्राओ की सख्या पर विशेष ध्यान रखना पडता है। लघु वर्ण की एक मात्रा होती है और गुरु की दो। इससे जहाँ कही गुरु चिह्न लगाने से मात्राओ की सख्या बढ जाती हो, वहाँ गुरु न रखकर लघु ही रखते है और यदि लघु रखने से भी सख्या बढती हो तो वहाँ कुछ भी न रखकर स्थान खाली ही रहने देते है। उसके विशेष नियम ये है—

१ जितनी मात्राओ की छन्दोजाति का प्रस्तार बनाना हो, उतनी मात्राओ के गुरु चिह्न (प्रति दो मात्राओ के लिए एक गुरु चिह्न के हिसाब से) प्रथम पक्ति मे लिख लो। यह ध्यान रहे कि सम मात्राएँ

(२, ४, ६, ८, १० आदि) तो गुरुओ मे ठीक परिवर्तित हो जाती है, परन्तु विषम मात्राओ (१, ३, ५, ७, ६ आदि) मे एक मात्रा बच जाती है। उस बची हुई मात्रा का लघु चिह्न सदा बाई ओर रखा जाता है। जैसे ४ मात्राओ के प्रस्तार मे पहली पक्ति मे दो गुरु (ऽऽ) चिह्न रखे जायँगे, परन्तु ५ मात्राओ के प्रस्तार मे प्रथम पक्ति यो लिखी जायगी—।ऽऽ

२ दूसरी पक्ति मे पूर्वोक्त वर्णिक प्रस्तार के नियमानुसार ही चिह्न रखे जाते ह—अर्थात् बाई ओर से सर्वप्रथम गुरु चिह्न के नीचे लघु चिह्न और दाई ओर ऊपर के चिह्नो की नकल। बाई ओर के खाली स्थान को भरने मे विशेष सावधानी की आवश्यकता है। नियमानुसार बाई ओर के रिक्त स्थान मे गुरु रखने का विधान है। किन्तु मात्रिक प्रस्तार मे गुरु उसी अवस्था मे रखा जायगा जबकि गुरु रखने से मात्रा सख्या न बढे। यदि गुरु रखने से मात्रा सख्या बढ जाती हो तो गुरु न रखकर लघु ही रख दिया जाता है। कही-कही लघु रखने से भी मात्रा सख्या बढ जाती है। ऐसी स्थिति मे कुछ भी न रखना चाहिए। इसके प्रतिकूल कभी-कभी गुरु रखकर भी मात्रा सख्या कम रहती है। ऐसी स्थिति मे उस न्यूनता की पूर्ति बाई ओर लघु चिह्न रखकर पूरी की जाती है। जैसे चार मात्राओ के प्रस्तार मे दूसरी पक्ति मे प्रथम गुरु के नीचे लघु और द्वितीय गुरु के नीचे गुरु रखने से कुल मात्राएँ ३ ही बनती है। इस एक मात्रा की न्यूनता को बाई ओर एक और लघु चिह्न बढाकर पूरा किया जाता है। यथा चार मात्राओ के प्रस्तार मे

प्रथम पक्ति ऽऽ
द्वितीय पक्ति ।।ऽ
तृतीय पक्ति ।ऽ।

इसमे प्रथम लघु के नीचे गुरु रखने से १ मात्रा बढ जाती थी इसलिए गुरु न रखकर लघु ही रखा गया है।

इसी प्रकार नीचे की पक्तियो में भी यह ध्यान रखना चाहिए। यह

विधि तब तक जारी रखी जाती है, जब तक सब लघु न आ जायँ। सर्व लघु आ जाने पर प्रस्तार की समाप्ति समझी जाती है। नीचे १ मात्रा से लेकर ६ मात्राओं तक के प्रस्तार के उदाहरण दिये जाते हैं। इन्हे ध्यान से समझ लेने पर मात्रा-प्रस्तार की परिभाषा का ज्ञान सुगमता से हो जायगा।

१ मात्रा का प्रस्तार

(१) ।

(कुल भेद १)

२ मात्राओं का प्रस्तार

(१) ऽ
(२) । ।

(कुल भेद २)

३ मात्राओं का प्रस्तार

(१) । ऽ
(२) ऽ ।
(३) । । ।

(कुल भेद ३)

४ मात्राओं का प्रस्तार

(१) ऽ ऽ
(२) । । ऽ
(३) । ऽ ।
(४) ऽ । ।
(५) । । । ।

(कुल भेद ५)

५ मात्राओं का प्रस्तार

(१) । ऽ ऽ
(२) ऽ । ऽ
(३) ऽ । । ऽ
(४) ऽ ऽ ।
(५) । । ऽ ।
(६) । ऽ । ।
(७) ऽ । । ।
(८) । । । । ।

(कुल भेद ८)

६ मात्राओं का प्रस्तार

(१) ऽ ऽ ऽ
(२) । । ऽ ऽ
(३) । ऽ । ऽ
(४) ऽ । । ऽ
(५) । । । । ऽ
(६) । ऽ ऽ ।

(७)	ऽ । ऽ ।
(८)	। । । ऽ ।
(९)	ऽ ऽ । ।
(१०)	। । ऽ । ।
(११)	। ऽ । । ।
(१२)	ऽ । । । ।
(१३)	। । । । ।

(कुल भेद १३)

सूची

सूची के द्वारा वर्णिक और मात्रिक छन्दोजातियो के सपूर्ण छन्दो की सख्या सुगमता से जानी जा सकती है। यद्यपि प्रस्तार के द्वारा भी उक्त सख्या का ज्ञान हो जाता है, तथापि प्रस्तार का आश्रय लिये बिना ही सूची के द्वारा इस सख्या का पता बहुत सरलता और शीघ्रता से लग जाता है। लम्बे छन्दो मे प्रस्तार के द्वारा रूप-भेदो की सख्या लाखो तक पहुँचती है, तब कही जाकर पूर्ण सख्या का पता चलता है। सूची इस कार्य को थोडे मे ही पूरा कर देती है।

प्रस्तार के समान सूची का आधार भी छन्दो के प्रतिपाद अक्षरो या मात्राओ की सख्या है। प्रस्तार के निरूपण मे हम यह बात स्पष्ट कर आए है कि वर्णिक प्रस्तार मे एक अक्षर की जाति के २ भेद हो सकते है, कारण कि अक्षर गुरु और लघु भेद से दो प्रकार के है। इसी प्रकार २ अक्षर की जाति के ४, तीन अक्षर की जाति के ८, ४ अक्षर की जाति के १६, ५ अक्षर की जाति के ३२ और ६ अक्षर की जाति के ६४ भेद होते है। इसी क्रम से ७ अक्षर के १२८, ८ अक्षर के २५६, ९ अक्षर के ५१२ और १० अक्षर के १०२४ होते है। अर्थात् एक-एक अक्षर की वृद्धि से भेद सख्या पूर्व से दुगुनी होती जाती है।

परन्तु मात्रिक प्रस्तार मे एक मात्रा की जाति का एक ही भेद होता है। दो मात्रा की जाति के २, ३ मात्रा की जाति के ३, ४ मात्राओ के ५, ५ मात्राओ के ८, और ६ मात्राओ के १३ भेद होते है।

इसी क्रम से ७ मात्राओ के २१, ८ मात्राओ के ३४, ९ मात्राओ के ५५ और १० मात्राओ के ८९ भेद होते हैं। इस का अर्थ यह हुआ कि मात्रा छन्दो मे प्रति मात्रा की वृद्धि के साथ पिछली २ मात्राओ की भेद सख्याओ को जमा करके सख्या बनती जाती है।

इसी नियम के आधार पर सूची के द्वारा सख्या का ज्ञान कराया जाता है।

प्रस्तार के समान सूची भी दो प्रकार की है—वर्णिक और मात्रिक। वर्ण छन्दो की सख्या को वार्णिक सूची और मात्रा छन्दो की सख्या को मात्रिक सूची प्रगट करती है।

(क) वर्णिक सूची की रीति

१ प्रथम पक्ति मे ज्ञातव्य छन्द के प्रतिपाद अक्षरो की सख्या को १ से लेकर लिखते जाओ। जैसे मव्या के प्रतिपाद मे तीन अक्षर होते है, इनको यो लिखो—१ २ ३

२ इन के नीचे दूसरी पक्ति मे १ को दुगना करके २ लिखो। २ के नीचे बाई ओर के अक (२) को दुगना कर के ४ लिखो। ३ के नीचे बाईं ओर के अक (४) का दुगना (८) लिखो। बस, ३ अक्षरो की जाति के कुल भेद ८ ही हो सकते हैं।

नीचे १२ तक वर्णों की सूची दी जाती है। इसे ध्यान से देखने से सूची की परिभाषा सुगमता से समझ मे आ जायगी।

१२ अक्षरा जगती जाति की सूची

वर्ण सख्या	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
रूप भेद स०	२	४	८	१६	३२	६४	१२८	२५६	५१२	१०२४	२०४८	४०९६

इसी प्रकार अन्य वर्ण जातियो की सूची भी बनाई जा सकती है।

(ख) मात्रिक सूची की रीति

वर्णिक सूची के समान प्रथम पक्ति मे अपेक्षित छन्द की मात्राओ की सख्या (१ से लेकर) क्रमपूर्वक लिख लो। जैसे चार मात्राओ की सूची की प्रथम पक्ति इस प्रकार लिखी जायगी—१ २ ३ ४। फिर इसके नीचे दूसरी पक्ति मे १ के नीचे १ और २ के नीचे २ के अक लिख लो, यथा—१ २ ३ ४
१ २

आगे प्रथम पक्ति के ३ क नीचे द्वितीय पक्ति मे बाई ओर की पिछली दो सख्याओ को मिलाकर जो जोड बने वह लिखो। यहा बाई ओर की दो सख्याए १, २ मिलकर ३ होती हे। इसलिए ३ के नीचे ३ लिख दो आगे चार के नीचे बाई ओर की पिछली दो सख्याओ (३+२=५) को मिलाकर ५ लिखो। यथा—

१ २ ३ ४
१ २ ३ ५

इसस विदित हुआ कि ४ मात्राओ की छन्दोजाति की कुल रूप सख्या ५ होती है।

शेष मात्रिक जातियो की छन्द सख्या भी इसी प्रकार से जान लो। नीचे नमूने के तौर पर १२ मात्रिक आदित्य जाति तक की सूची दी जाती है। इसका ध्यान से अवलोकन करने पर सूची की परिभाषा अच्छी तरह से समझ मे आ जायगी।

१२ मात्रा आदित्य जाति की सूची

मात्रा सख्या	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
रूपभेद सख्या	१	२	३	५	८	१३	२१	३४	५५	८९	१४४	२३३

परिशिष्टिका

हिन्दी छन्दकोश

हिन्दी साहित्य मे प्रयुक्त तथा लक्षणकारो द्वारा भाषित
लगभग १५०० छन्दो का अकारादिक्रम में
सकलित अभिनव लक्षणकोश

"एक समय था जब सब विद्याओ को रटकर कठस्थ कर लिया जाता था, यहा तक कि छन्द, व्याकरण और कोश तक भी रट लिए जाते थे। 'विद्या कठ और पैसा गठ' का सिद्ध वाक्य आम था। परन्तु आज के वैज्ञानिक युग मे प्रेस और पुस्तको की प्रचुरता के कारण 'विद्या कठ' के स्थान पर एक विश्वसनीय कोश या 'सकेत ग्रन्थ' के रूप मे मेज या अलमारी मे धरी हुई विद्या अधिक उपयोगी है। आज के ग्रन्थ-कार को रटने की (सूत्ररूप या छन्दोमय लक्ष्यलक्षणसयुत शैली आदि की) सुविधाए जुटाने की अपेक्षा 'आशुबोध' या 'तुरन्त परिशीलन' की सुविधाए प्रस्तुत करना अधिक वाञ्छनीय है।"

—लेखक

स्पष्टीकरण

(शैली, संकेत तथा स्रोत)

१. इस छन्दकोश के दो भाग है। पहले मे वर्णिक तथा दूसरे में मात्रिक छन्दो का अकारादिक्रम मे सकलन किया गया है।

२ प्रथम भाग मे वर्णिक समचतुष्पदी छन्दो के केवल एक पाद के लक्षण दिये गये है। इनके शेष तीनो पादो मे यही लक्षण चरितार्थ होते है।

३ वर्णिक अर्धसम छन्दो के प्रथम दल, अर्थात् पहले और दूसरे पादो के लक्षण दिये गये है। इनका तीसरा और चौथा पाद क्रमश पहले और दूसरे पाद के समान होता है। प्रकोष्ठ में क्रमश प्रथम तथा द्वितीय पाद की अक्षर-सख्या का निर्देश भी कर दिया है।

४. वर्णिक विषम छन्दो के क्रमश चारो ही पादो के लक्षण लिखे गये है। प्रकोष्ठ मे इनकी अक्षर-सख्या भी क्रमश लिख दी है।

५. अर्धसम और विषम छन्दो की पहचान के लिए छन्द के नाम के साथ ही प्रकोष्ठ म क्रमश (अ० स०) और (वि०) लिख दिया है। शेष छन्द, जिनके नाम के साथ उक्त सकेत नही दिया गया, समचतुष्पादी छन्द है।

६ लक्षण-निर्देश मे पिंगल की दशाक्षर परिभाषा या गणपरिभाषा का ही प्रयोग किया गया है। यह अधिक सुगम, सक्षिप्त और परम्परासमत है। इस परिभाषा का पूर्ण विवरण पुस्तक के प्रथम अध्याय में देखिए।

७ गणबन्धन से मुक्त छन्दो में अक्षर-संख्या का ही निर्देश किया गया है।

८. लक्षण के उपरान्त के प्रकोष्ठ में दी हुई संख्याए यति के नियमों को प्रगट करती है।

९. द्वितीय भाग में सममात्रिक छन्दों की एक पाद की मात्राओं की सख्या और आद्यन्त गुरु-लघु के विशेष नियमों का निर्देश किया गया है। अन्तिम प्रकोष्ठ में यति नियमों का भी उल्लेख कर दिया है।

१० अर्धसममात्रिक छन्दो में पूर्ववत् प्रथम दल का लक्षण देकर प्रकोष्ठ में चारो पादो की मात्राओं की योगसख्या लिख दी है।

११ इसी प्रकार विषममात्रिक छन्दो में क्रमश प्रत्येक पाद की मात्राओं की सख्या देकर प्रकोष्ठ में सम्पूर्ण पादो की योगसख्या लिख दी है।

१२ मात्रिक अर्धसम तथा विषम छन्दों की पहचान के लिए पूर्ववत् (अ, स) और (वि) के सकेत लिख दिए है। शेष सभी छन्द समचतुष्पदी मात्रिक छन्द है।

१३ छन्दों के नाम तथा लक्षणों के सम्बन्ध में विशेष रूप से ध्यान देने योग्य बात यह है कि बहुधा एक ही छन्द के भिन्न-भिन्न आचार्यों ने भिन्न-भिन्न नाम रखे हैं। जैसे न भ भ र लक्षणात्मक छन्द को पिंगल, केदार और हेमचन्द्र आदि ने 'द्रुतविलंबित' नाम दिया है; परन्तु प्राकृत पिंगलकार ने उसे 'सुन्दरी' कहा है। इसी प्रकार काश्यप ने पिंगल की 'वसन्ततिलका' को 'सिंहोन्नता' और सैतव ने 'उद्धर्षिणी' नाम से लिखा है। मधुमाधवी और शोभावती भी इसी के नाम हैं। अथवा प्राकृत पिंगला के 'मोहक' (भ भ भ भ) छन्द को महाकवि केशव ने 'सुन्दरी' नाम से व्यवहृत किया है।

ऐसे ही अनेकत्र यह भी देखने में आया है कि कहीं-कहीं भिन्न-भिन्न छन्दो को अनेक आचार्यों ने एक ही नाम से पुकारा है। जैसे पिंगल (८.१९) ने 'शशिवदना' का लक्षण न ज भ

ज ज ज र किया है किन्तु केदार (३ ८) और हेमचन्द्र (२ ३९) ने 'न य' का ही शशिवदना नाम रखा है। इस प्रकार का नाम-लक्षण भेद—एक छन्द के अनेक नाम और अनेक छन्दों का एक नाम, पचासो छन्दों के सम्बन्ध में मिलता है। परिशीलन की सुकरता के लिए इस कोश में प्रत्येक नाम और प्रत्येक लक्षण का यथास्थान निर्देश कर दिया है। जहाँ कहीं दो या अधिक छन्दो का लक्षण समान मिले, वहाँ यह समझ लेना चाहिए कि एक ही छन्द के ये भिन्न-भिन्न नाम है और जहाँ कहीं एक ही नाम के अनेक छन्द हैं वे तो अकारादिक्रम के कारण स्वभावत ही एकत्र आ गये है।

१४ इस कोश में समाहृत छन्दों के नाम तथा लक्षण प्राय निम्न-लिखित प्राचीन एव प्रामाणिक ग्रन्थो से लिए गये है। निर्वाचन मेरा अपना है।

१	पिंगल	छन्द शास्त्र
२	भरत	नाट्यशास्त्र (अध्याय १४-१५)
३		अग्निपुराण
४.	वराहमिहिर	बृहत्सहिता (उत्पल की टीका)
५	जयदेव	जयदेवछन्द
६	विरहाङ्क	वृत्तजातिसमुच्चय
७	जयकीर्ति	छन्दोऽनुशासन
८	स्वयंभू	स्वयभूछन्द
९	केदार भट्ट	वृत्तरत्नाकर
१०	पिंगल	प्राकृतपिंगल
११.	हेमचन्द्र	छन्दोऽनुशासन
१२.	अज्ञात	कविदर्पण
१३.	गंगादास	छन्दोमंजरी

१४. हलायुध भट्ट — मृतसंजीवनी टीका (पिंगल के छन्दशास्त्र पर)

१५ अज्ञात — छन्द कौस्तुभ (हलायुध की टीका तथा श्री वेलकर के उद्धरणो के आधार पर)

१६. केशव — रामचन्द्रिका (प्रयोग)

१७ भिखारीदास — छन्दोऽर्णव

आधुनिक ग्रन्थो में से श्री जगन्नाथ भानुकवि का 'छन्द प्रभाकर', श्री रामनरेश त्रिपाठी की 'पद्य-रचना' और श्री हरिदत्त वेलकर की 'जयदाम' से भी पर्याप्त सहायता ली गई है।

इस प्रकार इस कोश को यथासाध्य सर्वाङ्गपूर्ण और विश्वसनीय बनाने का पूरा यत्न किया गया है। फिर भी विद्वानों से भूल-चूक सुधार और इसे और अधिक परिपूर्ण बनाने के सुझाव सर्वथा वाछनीय है जिससे यह कोश सर्वसमत और पूर्ण प्रामाणिक सिद्ध होकर हिन्दी ससार की अधिकाधिक सेवा कर सके।

—रघुनन्दन

हिन्दी छन्दकोश

(क) वर्णिक छन्द

अ—

अक्षरपंक्ति	भ ग ग
अक्षरोपपदा	भ ग ग
अक्षि	स ज स
अग्र	त त त त त त त ग ग
अगरुचि	भ भ भ भ ग
अचल	न ज ज र ग
अचल	ज त भ य स त (५+६+७)
अचलधृति	न न न न न ल
अच्युत	र स स ल ग
अतिच्छन्दस्	म म त न न न न न स ज ज ग
अतिरुचिरा	ज भ स ज ग
अतिरेखा	स ज ज न य
अतिशायिनी	स स ज भ ज ग ग (१०+७)
अद्रितनया	न ज भ ज भ ज भ ल ग (११+१२)
अनगक्रीडा (वि०)	१,२=१६ गुरु, ३,४=३२ लघु
अनगलेखा	न स म म य य (६+५+७)
अनगशेखर	ल-ग युग्मक १४ अथवा अधिक
अनद	ज र ज र ल ग
अनवसिता	न य भ ग ग
अनुकूल	भ स

अनुकूला	भ त न ग ग (५+६)
अनुराग	न ज ज न त ज(८+१०)
अनुष्टुप्	८ वर्ण; ५ म लघु, ६ ष्ठ गुरु, ७ म समपादों में लघु। (अन्येष्वनियमीमत.)
अपरभा	ज स
अपर वक्तृ (अ० स०)	(११,१२), न न र ल ग, न ज ज र
अपराजिता	न न र स ल ग (७+७)
अपरातिका	स भ र ल ग
अपवाह	म न न न न न न स ग ग (९+६+६+५)
अप्रमेया	देखो *भुजंगप्रयात*
अब्जविचित्रा	देखो *मणिमाला*
अभिमुखी	न ल ग
अभिहिता	त न न ल ग
अभ्रक	त भ ज ज ग
अमी	न ज य
अमृतगति	न ज न ग (५+५)
अमृतधारा (वि०)	२०, १२, १६, ८, वर्ण
अम्बा	भ म
अरविंद	स स स स स स स स ल
अरविंदक	न ज ज भ र
अरसात	भ भ भ भ भ भ भ र
अर्ण	न न र र र र र र र र
अर्णव	न न र र र र र र र र र
अलोला	म स म भ ग ग (७+७)
अवभ्रण	ज त ज र
अवितथ	न ज भ ज ज ल ग
अशोका	न स न ग ग

अशोक पुष्पमंजरी	ग-ल युग्मक १४ अथवा अधिक
अश्वगति	भ भ भ भ भ ग
अश्वगति	भ भ भ भ भ स
अश्वललित	न ज भ ज भ ज भ ल ग (११+१२)
अश्वाग्दांता	भ भ भ भ भ ग
असवाधा	म त न स ग ग (५+६)
असुविलास	न त न ल ग
अहि	भ भ भ भ भ भ म (१२+६)
आ—	
आख्यानिकी (अ॰स॰)	११, ११, त त ज ग ग; ज त ज ग ग (उपजाति)
आन्दोलिका	त त र ग (५+५)
आपीड	भ न न स म न न न ल ग (१४+१२)
आपीड (वि॰)	८, १२, १६, २० (प्रतिपाद अंत ऽऽ, शेष लघु)
आभार	त त त त त त त त
इ-ई—	
इंदव	भ भ भ भ भ भ भ ग ग
इंदिरा	न र र ल ग (६+५)
इंदुमुखी	न ज र भ भ ग
इंदुवदना	भ ज स न ग ग (अथवा भ ज स न ल ग)
इंद्रवंशा	त त ज र
इंद्रवज्रा	त त ज ग ग
इला (अ॰स॰)	(५,८) स ल ग, स स ल ग
ईश	स ज ग ग
उ-ऊ—	
उज्ज्वल	र स ज ज भ र (८+५+५)
उज्ज्वला	न न भ र (७+५)

उत्थापिनी	त भ ज ल ग
उत्पलमालिका	भ र न भ भ र ल ग
उत्पालिनी	न न त त ग (६+७)
उत्सर	र न भ भ र
उत्सव	र ज र ज र
उत्साह	र ज र ज र
उत्सुक	भ भ र
उदय	भ ज स
उद्गता (वि०)	(१०, १०, ११; १३) स ज स ल, न स ज ग; भ न ज ल ग; स ज स ज ग
उद्गता	स ज स स ज ग
उद्दाम	न न र र र र र र र र र र र र र
उद्धत	म स स ग
उद्धता	र स ग
उद्धर्षिणी	देखो *वसततिलका*
उद्यत	त म र ल ग
उपचित्र	स स स ल ग (६+५)
उपचित्र	न न न न ग ग
उपचित्र (अ०स०)	(११; १२) = स स स ल ग, = भ भ भ ग ग
उपच्युत	न न र
उपजाति	इन्द्रवज्रा+उपेन्द्रवज्रा; (तथा अन्य मिश्रित वार्णिक वृत्त)
उपमालिनी	न न त भ र (८+७)
उपस्थित	ज स त ग ग (६+५)
उपस्थित	ज स त स ग
उपस्थित प्रचुपित (वि०)	(११; १२, ६; १५) स ज भ ग ग; स न ज र ग; न न स; न न न ज य

उपस्थिता	त ज ज ग (२+८)
उपस्थिता	त ज ज ग ग
उपेन्द्रवज्रा	ज त ज ग ग
उमा	भ भ भ भ भ भ भ ग
उरूणी (अ०सू०)	(१५, १४) न न न न स, =न न भ न ल ग
उरुतरगमालिका	र न र न र न र ल ग
उषा	य ल
उषिता	ज ज ज ग
उष्णिह्	र ज ग
ऊर्जित	र स स त ज ज ग (१०+६)
ऊर्वशी	न त त त ग
ऋ—	
ऋद्धि	र ग
ऋषभ	स य स स य (६+६)
ऋषभगजविलसिता	भ र न न न ग (७+६)
ए—	
एकरूप	स स ज ग
एकरूप	म स ज ग ग
एकावली	भ न ज ज ल
एला	स ज न न य (५+१०)
क—	
कच्छपी	र न
कञ्जअवली	भ न ज ज ल
कथागति	त र भ न ज भ र (७+७+७)
कदली	स ल
कनक	म स स
कनकप्रभा	स ज स ज ग

कनकमंजरी	न र र ल ग (६+५)
कनकलता	न य
कनकलता	त न म
कनकलता	न न न न त न ग
कनकलता	न न न न न न ल ग
कन्द	य य य य ल
कन्दुक	य य य य य
कन्या	म य
कमल	न
कमल	न स ल ग
कमलदल	न न न स स भ (५+११)
कमलदलाक्षी	न य न ल ग
कमलमुखी	न ल ग
कमललोचना	न न ज स
कमललोचना	न न स स ग
कमलविलासिनी	न ज ज य
कमला	न न ल
कमला	स ज ज ग
कमलाक्षी	न न स स ग
करता	न ल ग
कर हत	न स ल
करहस	न स ल
करिणी (अ०स०)	(१०;१२) म स स ग; स भ भ स
करिमकरभुजा	न न म य ल ग (७+७)
कर्णोत्पला	त भ ज ज ग ग
कलकंठ	स ज न ज भ न र ल ग
कलगीत	स त य ग (५+५)

कलभाषिणी	न ज ज भ र
कलहंस	स ज स स ग
कलहंसा	न भ ज य
कलहंसी	स य स भ ग ग (६ + ८)
कला	भ ग
कला	न ६ + ल ग
कलाधर	३१ वर्ण, ग-ल युग्मक १५ + ग
कलावती	ज भ स ज ग (४ + ६)
कलिका	भ भ ग
कलिका	र म स ग
कली	भ भ भ ल ग
कल्याण	म म म म
कवित्त	३१ वर्ण, अन्त ऽ, (१६ + १५)
काचन	म म म म
कांचनमाला	भ ग ग
कांची	म र भ य र र (११ + ७)
कांत	न य न य स ग
काता	भ ज स न ग ग
कांता	य भ न र स ल ग (४ + ६ + ७)
कांतोत्पीडा	भ म स म
काम, कामा	ग ग
कामक्रीडा	म म म म म (८ + ७)
कामदत्ता	न न र य
कामदा	र य ज ग
कामना	न त र
कामलता	भ र न भ भ र ल ग
कामलतिका	भ म

कामललिता	भ य
कामिनी	र ज ग
कामिनी	र ज र
कामिनीमोहन	र र र र
कामुकी	म म म म म ग
कामुकी	स स स स स ग
किरीट	,भ भ भ भ भ भ भ भ
किशोर	स स स स स स स स ल ल
कीर्ति	स स स ग
कुब्ज	त ज र स र (८+७)
कुटक	न ज भ ज ज ल ग
कुटज, (जा)	स ज स स ग
कुटजगति	त ज त त ग
कुटिल	स भ न य ग ग (४+१०)
कुटिलगति	न न त त ग (७+६)
कुटिला	म भ न य ग ग(४+६+४), अथवा (४+१०)
कुड्मलदत्ती	भ त न ग ग (५+६)
कुन्तलतन्वी	भ ग ग
कुन्दलता	स स स स स स स स ल ल
कुपुरुषजनिता	न न र ग ग
कुमारललिता	ज स ग
कुमारी	न ज भ ज ग ग (८+६)
कुमुद	न न स
कुमुदनिभा	न य र य (६+६)
कुमुदवती	न य ग
कुमुदिनी	म न न ग
कुरंगिका	म त न ज भ र (५+७+६)

कुलटा	न ज न ग
कुवलयमाला	भ न य ग
कुसुम	न न ल ग
कुसुमवती	न य ग
कुसुमविचित्रा	न य न य (६+६)
कुसुमसमुदिता	म न न ग
कुसुस्तवक	६ या इससे अधिक स
कुसुमितलतावेल्लिता	म त न य य य (५+६+७)
कुतोद्धता	भ स स ग
कृपाण	३२ वर्ण; (८+८+८+८)
कृष्ण	ल ल
केकिरव	स य स य
केतकी	स स स ज न र (१०+८)
केतन	भ य स स य
केतुमती (अ०स०)	(१०;११)—स ज स ग, भ र न ग ग
केशा	य
केसर	न र न र ल ग
केसर	म भ ल य र र (४+७+७)
केहरी	र त म ज
कोकिल	न ज भ ज ज ल ग (७+६+४)
कोमललता	म त स त त म (४+५+७)
कोमलायिनी	स ज स ज ग
कोल	ज स स य
कौमुदी	न त त त ग
क्रीडा	य ग
क्रीडा	य म न स त स (६+६+६)
क्रीडा चक्र	य य य य य य

क्रौंच, क्रौंचपदा	भ म स भ न न न न ग (५+५+८+७)
क्रौंचा	म त य न न न न ग
क्षमा	न न ज त ग (७+६)
क्षमा	न न त त ग
क्षमा	न त त र ग
क्षमा	म र ल ग
क्षाति (अ०स०)	(१२,७) न न न य, म म ग
क्ष्मा	न न म र ग (७+६)

ख—

खजन	र र र र र र र र
खजा (अ० स०)	(३१;२६)=३० ल+ग, २८ ल+ग
खेटक	देखो *उष्णिह्*

ग—

गगन	स स स म म
गगाधर	देखो *खजन*
गगोदक	देखो *खजन*
गजगति	न भ ल ग
गजतुरगविलसित	देखो *ऋषभगजविलसित*
गजललित	देखो *कुसुमविचित्रा*
गजवरविलसित	देखो *ऋषभगजविलसित*
गण्डका	र ज र ज र ज ग ल
गतविशोका	देखो *अशोक*
गरुडरुत	न ज भ ज ल ग
गाथ	र स स ग
गाथा	देखो '*कनक*'
गान्धर्वी	म म ग
गिरा	म र

गिरिजा	म स म स स म ल (२+७+१०)
गिरिधारी	स न य स
गीता	स ज ज भ र स ल ग
गीति	देखो *कन्या*
गीतिका	स ज ज भ र स ल ग (१२+८)
गीत्यार्या	देखो *अचलधृति*
गुणलयनी	न स ग ग
गुरुमध्या	स भ
गुर्वी	न स य
गोमिनी	देखो *कामिनी*
गौ	ग
गौ	न न भ भ र
गौरी	न न र र
गौरी	न न त स ग
गौरी	त ज ज य
ग्राहि	त त त ग ग (६+५)
ग्वाल	ग ल

घ—

घनपंक्ति	स ग ग
घनमयूर	न न भ स र ल ग (७+६+४)
घनश्याम	ज ज भ भ भ ग (६+१०)
घनाक्षरी	३१ वर्ण, अन्त ग (१६+१५)
घनाक्षरी (रूप०)	देखो '*रूपघनाक्षरी*'
घनाक्षरी (देव०)	देखो '*देवघनाक्षरी*'
घोटक	देखो '*दुर्मिल*'

च—

चकिता	भ स म त न ग (८+८)

चकोर	भ भ भ भ भ भ भ ग ल
चक्र	भ न न न ल ग (७+७)
चक्र चक्रपद चक्र विरति	भ न न भ न न भ न न भ य
चचरी	र स ज ज भ र (८+१०)
चञ्चरीकावली	य म र र ग (६+७)
चञ्चला	र ज र ज र ल
चञ्चलाक्षी (क्षिरा०)	देखो *गौरी*
चडरसा	देखो *कनकलता*
चडवृष्टिप्रपात	न न र र र र र र र
चडी	देखो *कमललोचना*
चतुरशा	देखो *कनकलता*
चन्दनप्रकृति	र ज त त न न स
चन्द्रकला	देखो '*दुर्मिल*'
चन्द्रकान्ता	म म य य (५+७)
चन्द्रकन्न्ता	र र म स य (७+८)
चन्द्रकान्ता	र र म य य (७+८)
चन्द्रकान्ता	र र त य य (७+८)
चन्द्रकान्ता	य म न स र र ग (६+६+७)
चन्द्रबिंब	म त न स स त त ग (५+७+७)
चन्द्रमाला	न न म म य य
चन्द्रमाला	न न न ज न न ल
चन्द्ररेखा	न स र र ग (६+७)
चन्द्रलेखा	म र म य य (७+८)
चन्द्रवर्त्म	र न भ स
चन्द्रशाला	न र त त त ग (७+७)

चन्द्रावती (०वर्ता)	न न न न स (६+९)
चन्द्रिका	न न त त ग (७+६)
चन्द्रिणी	देखो *चचरीकावली*
चन्द्रोद्योत	न न म र र (८+७)
चन्द्रौरस (०सा)	म भ न य ल ग
चपलगति	भ म स भ न न न ल ग
चपला	न भ ज ल ग
चम्पकमाला	भ म स ग (५+५)
चर्चरी	देखो *चचरी*
चलधृति	न न न न न ग
चलनेत्रिका	देखो *उज्ज्वला*
चलमध्या (अ०स०)	(११, १२) भ भ भ ग ग, न ज ज य
चला	म भ न ज भ र (४+७+७)
चामर	र ज र ज र
चारुहासिनी	ज त र
चित्तविलसित	न ज ग ग
चित्र	भ न ग
चित्र	र ज र ज र ग [1]
चित्रक	र न र न र न र ल ग
चित्रगति	भ भ भ ग
चित्रपदा	भ भ ग ग
चित्रमाला	म र भ न त त ग ग

---

१. पुराने आचार्यों ने चित्र का लक्षण र ज र ज र ग माना है। (चित्र सञ्ज्ञ मीरितरजौ रजौ रगौ चवृत्तम्") परन्तु 'भानुकवि' ने इसे चचला का ही अन्य नाम लिखा है। उसके अनुसार इसका लक्षण—र ज र ज र ल है।

चित्रलता	न ज भ ज ज ज र
चित्रलेखा	देखो *अतिशायिनी*
चित्रलेखा	म भ न य य य
चित्रशोभा	देखो *चञ्चला*
चित्रा	म म म य य (८+७)
चिन्तामणि	देखो *इन्दुमुखी*
चूडामणि	त भ ग
चेटीगति	य य य य य य य य ल ग
चौरस	त य
छ—	
छाया	य म न स त त ग (६+६+७)
छाया	य म न स भ त य (६+६+७)
छित्तक	देखो *तोटक*
ज—	
जगमोहन	३१ वर्ण (मुक्तक दण्डक) अतऽ (१६+१५)
जतु	भ ल
जत्रु	ग ल
जनहरण	३१ वर्ण, ३० लघु+१ गुरु
जपा	ज ल
जया	ज ग
जया	य ल ग
जया	देखो *कनकप्रभा*
जया	म र र स ल म
जयानन्द	य म न स र ग (६+१०)
जलधरमाला	म भ स म (४+८)
जलमाला	भ भ म स
जलहरण	३२ वर्ण, (८+८+९+७), अन्त ल ल अथवा ल ग

३२

जला	त र
जलोद्धतगति	ज स ज स (६+६)
जीमूत	न न र र र र र र र र र र र
जोहा	र र
ज्योति	देखो *कामक्रीडा*
ज्योतिशिखा (वि०)	१, २=३२ लघु, ३,४=१६ गुरु
ज्योत्स्ना	म र म य ल ग (७+७)
ड—	
डमरू	३२ लघु
त—	
तटी	म य
तडित्	र
तत	न न म र
तति	न ज ज र
तनुमध्या	त य
तन्वी	भ त न स भ भ न य (१२+१२)
तपी	भ भ ग
तरग	स म स म म ग ग (५+५+७)
तरग	र न र न र न र
तरगक	देखो *दोधक*
तरगमालिका	र न र न र न र
तरंगवती	देखो *कामिनी*
तरणिजा	न ग
तरल	स न य न य न ग (९+१०)
तरलनयन	न न न न (६+६)
तरुणी वदनेन्दु	स स स स स स ग
तामरस	न ज ज य

तार	स स म
तारक	स स स स ग
तारका	न न र र र र
तारा	म ल
तारा	त ग
तारिणी	न स य स
तारी ('ली)	म
ताल	र ज र ल ग
तिन्ना	म ग
तिलका } तिलना } तिल्ल } तिन्लक } तिल्लना } तिल्ला	स स
तीव्र	भ भ भ भ भ स
तीर्णा	म ग
तुंग	न न ग ग
तुरंगम	देखो *तुंग*
तूण (०क)	र ज र ज र
तोटक	स स स स
तोमर	स ज ज
त्रपु	त ल
त्राता	त य य म ग (६+७)
त्रिभंगी	न न न न न न स स भ म स ग
त्वरित गति	देखो *अमृतगति*
त्वरितगति	न न न त ग

द—

दँडिका	देखो *गडका*
दमनक	न न
दमनक	न न न ल ग
दमनक	न न न ग ग
दयि	न ल
दर्दुरक	भ भ र स ल ग
दान	भ स ज स
दिवा	देखो *मदिरा सवैया*
दीपक	भ त न त य (१०+५)
दीपकमाला	भ म ज ग
दीपकमाला	भ म त ग
दीपार्चि	म स ज स ज स ग (१२+१०)
दीपिकाशिखा	भ न य न न र ल ग (३+६+११)
दीप्ता	देखो *हंसमाला*
दुख	देखो *जत्रु*
दुर्मिल सवैया	स स स स स स स स
दृक्	देखो *कमल*
देवघनाक्षरी	३३ वर्ण, (८+८+८+६) अंत ल ल ल
दोधक	भ भ भ ग ग
द्रुत	देखो *सोमराजी*
द्रुतगति	न न ग
द्रुतपद	न भ न य
द्रुतपद्गा	न भ ज य (४+८)
द्रुतपादगति	देखो *सुमुखी*
द्रुतमध्या (अ. स)	(११;१२) भ भ भ ग ग, न ज ज य
द्रुतविलंबित	न भ भ र

द्रुता	र ज स ल ग (५+६)
द्विज	शालिनी+वातोर्मि (उपजाति)
द्विनराचिका	ल-ग युग्मक १४ अथवा अधिक
द्वियोधा	र र
ध—	
धर	ज ल
धरणी	त न स ग (४+६)
धरा	त ग
धर्म	भ स न ज न भ स (१०+५+६)
धवल	न न न न न न ग
धाम	म त ज त ज (५+१०)
धार	म ल
धारि	र ल
धारी	ज ज ज य
धीर लालता	भ र न र न ग
धुनी	भ ज ग
धृतश्री	देखो *चित्रलता*
धृति	य
धृति	न ल ग
धृति	र ल ग
धृति	न ज भ ज ल ग
न—	
नगस्वरूपिणी	ज र ल ग
नगानिका (०णिका)	ज ग
नदी	म र
नदी	भ न ल ग
नदी	न न त ज ग ग (७+७)

नन्दक	भ भ भ भ र स ल ग
नन्दन	न ज भ ज र र (११+७)
नन्दा	त ल ग
नन्दिनी (नवल०)	देखो *कलहंस*; (एव, कनकप्रभा)
नन्दिनी	स ज स र ल ग
नन्दीमुखी	न न त त ग ग
नभ	न य स स
नराच	देखो *पञ्चचामर*
नराचिका	त र ल ग
नरेन्द्र	भ र न न ज ज य (१३+८)
नर्कुटक	देखो *अवितथ*
नर्तकी	देखो '*कुटिल गीत*'
नर्दटक	देखो *अवितथ*
नलिनी	स स
नलिनी	स स स स स
नवमालिनी (०लिका)	न ज भ य (८+४)
नागरक	भ र ल ग
नागराज	देखो *पञ्चचामर*
नान्दीमुखी	देखो *मालिनी*
नान्दीमुखी	न न त त ग ग (७+७)
नायक	स ल ल
नाराच	देखो *पञ्चचामर*
नाराच	न न र र र र (६+६)
नाराचक	देखो *प्रमाणिका*
नाराचिका	त र ल ग
नारी	म
नितम्बिनी (अ० स०)	(३, १६) र, ज र ज र ज ग

निलया	न न न ग
निवास	भ य य
निवास	न न र च
निशा	देखो *तारका*
निशिपाल (०लिका)	भ ज स न र
निश्चल	भ त न म त (५+६+४)
निसि	भ ल
नील	भ भ भ भ भ ग
नीलचक्र	ग-ल युग्मक १६
नीलतोया	र म
नृत्तललित	भ ज स न भ ज स न भ य
नौ	देखो *'काम'*

प—

पकजअवली	भ न ज ज ल
पकजमुक्ता	न न स स त य (४+६+५)
पकजवक्ता	देखो *पंकजमुक्ता*
पकजवाटिका	देखो *पंकजअवली*
पकावली	देखो *पकजअवली*
पक्ति	भ ग ग
पक्ति	म स
पक्तिका	र य ज ग
पञ्चकावली	न ज भ ज ज ज र (११+१०)
पञ्चचामर	ज र ज र ज ग
पञ्चमगति	भ ज ग
पञ्चाल	त
पणव	म न य ग (५+५)
पणव	म न ज ग

पतिता	देखो *अनवसिता*
पथा (०थ्या	स ज स य ल ग (५+६)
पथ्यावृत्त (अ० स०)	(८,८) स स ग ग, स स ल ग र
पदचतुरुर्ध्व (वि०)	८, १२, १६, २०
पदरुचि	देखो *आपीड*
पद्म	न स ल ग
पद्ममाला	र र ग ग
पद्ममुखी	देखो *अश्वगति*
पद्मसद्म	र स न ज न भ र (११+१०)
पद्मिनी	र र र र
पवन	भ त न स (५+७)
पवित्रा	म भ स
पिपीलिका	म म त न न न न ज भ र (८+१५+७)
पिपीलिकाकरभ	म म त न न न न न ल ल ज भ र
पिपीलिकापणव	म म त न न न न+१० ल+ज भ र
पिपीलिकामाला	म म त न न न न+१५ ल+ज भ र
पाईता	देखो *पवित्रा*
पावाताली	देखो *पवित्रा*
पावक	भ म भ ग
पावन	भ न ज ज स (८+७)
पीनश्रोणी	म भ स ग ग
पुज	स ल
पुट	न न म य (८+४)
पुटभेद	र स स स स स ल ग
पुण्डरीक	म भ र य
पुष्प	ल ल
पुष्प	देखो *ऋद्धि*

पुष्पदाम	म त न स र र ग (५+७+७)
पुष्पमाला	न न र र म (६+४)
पुष्पविचित्रा	देखो *मणिमाला*
पुष्पसमृद्धा	भ म न भ न न न ग ग
पुष्पसमृद्धि	देखो *चंपकमाला*
पुष्पिताग्रा	(१२, १३) न न र य; न ज ज र ग
पृथ्वी	ज स ज स य ल ग (८+६)
प्रकाशिता	न र ग
प्रचित	२ न+८ व अधिक र
प्रचितक	२ न+७ य
प्रज्ञा	न य म म भ म (६+४+८)
प्रतिभा	स भ त न ग ग (८+६
प्रत्यवबोध	देखो *अनुकूला*
प्रत्यापीड (वि)	(८,१२;१६,२०) ग ग+४ ल+ग ग; ग ग+८ ल+ग ग; ग ग+१२ ल+ग ग; ग ग+१६ ल०+ग ग
प्रत्यापीड	(८, १२; १६; २०) ग ग+६ ल, ग ग+१० ल, ग ग+१४ ल, ग ग+१८ ल.
प्रथिता	म भ स
प्रथिता	देखो *पथ्या*
प्रबोधिता	देखो *कनकप्रभा*
प्रभद्रक	भ र न र न र न ग (१०+१२)
प्रभद्रिका	न ज भ ज र
प्रभा	न न र र (८+४)
प्रभावती	ज भ स ज ग (४+६)
प्रभावती	त भ र ज ग (४+६)
र ावती	त भ स ज ग (४+६)

प्रमदा	न ज भ ज ल ग
प्रमदा	स त य स भ ग
प्रमदानन	देखो *गीता*
प्रमाण	ज र ज र
प्रमाणिका (०णी)	देखो *नगस्वरूपिणी*
प्रमिता	स ज स ग
प्रमिताक्षरा	स ज स स
प्रमुदितवदना	न न र र (८+४)
प्रमुदिता	देखो *धीरललिता*
प्रवर	स
प्रवरललिता	य म न स र ग (६+१०)
प्रसभ	न न र ल ग
प्रहरणकलिका	न न भ न ल ग (७+७)
प्रहर्षिणी	म न ज र ग (३+१०)
प्रियवदा	न भ ज र (४+४+४)
प्रियवदा	ज भ ज र
प्रिया	र
प्रिया	स ल ग
प्रिया	न न र र र र
प्रीति	र ग ग

फ—

फुल्लदाम	म त न स र र ग (५+७+७)

ब—

बधु	देखो दोधक
बधूक	भ न म ग
बंधूक	भ भ म ग
बनमाली	त भ त भ (४+४+४)

बाधाहारी	न ज य ग ग (७+४)
बाला	र र र ग
बिंदु	भ भ म ग (६+४)
बिंब	न स य
बिंब	म त न स त त ग (५+७+७)
बुद्बुद	न ज र
बुद्बुद	स ज स ज त र
बुद्बुदक	स न स त ग
बृहतिका	न र र
बृहत्य	य य य
ब्रह्म	म म म म म ग
ब्रह्मरूपक	र ज र ज र ल

भ—

भक्ति	त य ग
भङ्गि	भ भ भ भ न य
भद्रक	भ र न र न र न ग (४+६+६+६)
भद्रपद	देखो *अनुकूला*
भद्र विराट (अ० स०)	(१०, ११) त ज र ग, म स ज ग ग
भद्रिका	र न र
भद्रिका	न न र ल ग
भाम	भ म स स स (६+६)
भामा (अ० स०)	(१२, १२) त भ स य, ज भ स स
भामिनी	देखो *मोदक*
भारती	म म य ल ग (६+५)
भाराक्रान्ता	म भ न र स ल ग (४+६+७)
भाविनी	देखो *कामिनी*
भासुर	देखो *नन्दक*

भित्तक	देखो *दोधक*
भीम	त भ म ज
भुग्राल	ज य य
भुजग विजृ भित	
अथवा	म म त न न न र स ल ग (८+११+७)
भुजग विजृंभित	
भुजगशिशुसुता (०भृता)	न न म
भुजगेटित	म य न त न न र स ल ग (८+११+७)
भुजगप्रयात	य य य य
भुजगसगता	स ज र
भुजगी	य य य ल ग
भुजगेटित	म य न त न त र य ल ग (८+११+७)
भूतलतन्वी	भ ग ग
भूतलतन्वी	म त य न ल ग
भूतलतन्वी	भ म स भ स
भूमिसुता	म म म स (८+४)
भृङ्ग	न न न न न न ग ल (६+६+८)
भृङ्गाब्जनीलालका	देखो *मेघमाला*
भोगवती	भ भ ग
भोगिनी	न न र य य
भ्रमर पद (०क)	भ र न न न स (६+१२) अथवा (६+६)
भ्रमरमाला	त स ग
भ्रमरविलसित (०ता)	म भ न ल ग (४+७)
भ्रमरावली (०लि)	देखो *तोटक*
भ्रमरावली	स स स स स
भ्रमरी	स ग
भ्रमरी	देखो *कलहंस*

म —

मकरन्द	ज ज ज ज ज ज ज य
मकरन्द	न य न य न न न न ग ग (६+६+८+६)
मकरन्दिका	य म न स ज ज ग (६+६+७)
मकरलता	त न म
मकरलता	म न य
मकरशीर्षा	देखो *शशीवदना*
मकरावली (अ०स०)	(१२, १५) न भ भ र, न भ भ भ र
मङ्गल	स भ त ज य (७+८)
मङ्गलमङ्गना	न भ ज ज ज ग (४+१२)
मङ्गली	स स ज र ल ग (३+६+५)
मञ्जरी	स ज स य ल ग (५+६)
मजरी (सवैया)	देखो *वाम*
मजरी (वि०)	१२, ८, १६, २०
मजारी	म म भ त य ग ग (६+८)
मजीर (०रा)	म म भ म स म (६+६)
मजुभाषिणी	स ज स ज ग
मजुभाषिणी	ज त स ज ग
मजुभाषिणी	न ज स ज ग
मजुमालिनी	देखो *मालिनी*
मजुमाधवी (अ० स०)	(११, १२) त त ज ग , त त ज र
मजुवादिनी	ज त स ज ग
मजुसौरभ (अ० स०)	(१२, १३) न ज ज र, स ज य ज ग
मजुहासिनी	देखो *मजुवादिनी*
मणि	म स ज ग ग
मणिकटक	देखो *धृति*
मणिकल्पलता	देखो *इन्दुमुखी*

मणिकिरण	न न भ न ज न न न न ल ग (७+७+८ +७)
मणिकुण्डल	स य स ज ग
मणिगुण	न न न न स (६+६)
मणिगुणनिकट	न न न न स (८+७)
मणिबध	भ म स
मणि भूषण	र न भ भ र
मणिमध्या	भ म स
मणिमञ्जरी	य भ न य ज ज ग (१२+७)
मणिमाल	स ज ज भ र स ल (१२+७)
१ मणिमाला	त य त य (६+६)
२ मणिमाला	भ भ भ भ भ स (११+७)
मणिरग (०राग)	र स स ग
मण्डूकी	देखो *चित्रा*
मत्तकोकिल	न भ ज र
मत्तक्रीडा	म म त न न स (८+५+८)
मत्तगजविलसित	भ र न न न ग (७+६)
मत्तगयद	भ भ भ भ भ भ भ ग ग
मत्तवेष्टित	देखो *नगस्वरूपिणी*
मत्तमयूर	म त य स ग (४+६)
मत्तमातग लीलाकर	र ८ देखो *खंजन*
मत्तमातगलीलाकर	र ६ अथवा अधिक
मत्तविलासिनी	भ भ भ भ भ भ र
मत्ता	म भ स ग (४+६)
मत्ताक्रीडा	म म त न न न ल ग (८+५+१०)
मत्तेभ	त भ य ज स र न ग (७+१५)
मत्तेभ विक्रीडित	स भ र न म य ल ग (१३+७)

मद	ल ल
मदकलनी	न ज न भ स न ल ग (५+५+५+५)
मदकलिता	न ज न स ग
मदन	स
मदनमल्लिका	र ज ग ल
मदनमोदक	देखो मल्ली
मदनललिता	म भ न म न ग (४+६+६)
मदनसायक	न भ ज भ ज भ ज न
मदनारि	भ स न य (६+६)
मदललिता	देखो *मदकलिता*
मदलेखा	म स ग
मदिरा	भ भ भ भ भ भ भ ग
मदिराक्षी	त य स ग
मद्रक	देखो *भद्रक*
मधु	देखो *मद*
मधु	न ग
मधुकर सदृशाख्या	देखो *तुङ्ग*
मधुकरिका	त न ग
मधुकरिका	न न म
मधुमति	न न ग
मधुमती	न भ ग
मधुमाधवी	देखो *उद्धर्षिणी*
मध्यक्षामा	देखो *कुटिला*
मनहर	३१ वर्ण, अन्त गुरु, (१६+१५)
मनहरण	स स स स स
मनहरण (दडक)	देखो *मनहर*
मनहरन	न स र र र

मनहृस	स ज ज भ र
मनोज्ञा	न र ग
मनोरम	स स स स ल ल
मनोरमा	न र ज ग (६+४)
मनोव्रती	देखो कनकप्रभा
मनोहृस	देखो *मनहृस*
मन्तेभ	म म म म म त य म ग (४+४+५+१२)
मन्थान	त त
मन्दक्रीडा	देखो *मत्ताक्रीडा*
मन्दभाषिणी	देखो *मंजुवादिनी*
मन्दर	भ
मन्दा	देखो *नन्दा*
मन्दाकिनी	न न र र (८+४)
मन्दाकिनी	त म य र त ग (४+४+४+४)
मन्दाक्रान्ता	म भ न त त ग ग (४+६+७)
मन्दारमाला	स त न य य य (५+६+७)
मन्दारमाला (सवैया)	त त त त त त त ग
मयतनया	म स न ल ग (६+५)
मयूरगति	भ भ भ भ भ भ भ ग ग
मयूरपिच्छ	देखो *प्रहर्षिनी*
मयूरललित	ज स न भ य
मयूरसारिणी	र ज र ग
मयूरी	र ज र ग
मरालिका	देखो *पक्तिका*
मल्लिका	देखो *मदनमल्लिका*
मल्लिका (सवैया)	ल ज ज ज ज ज ज ल ग
मल्ली	स स स स स स स स ग

महर्षि	ज ज य
महातरुणीदयित	देखो *हंसगति*
महानाराच	ल-ग युग्मक १५ वा अधिक
महाभुजगप्रयात	य य य य य य य य
महामदनसायक	न भ ज भ ज भ ज र
महामलिका	न न र र र र (९+९)
महामोदकारी	य य य य य य
महालक्ष्मी	र र र
महास्रग्धरा	स ज त न स र र ग (८+७+७)
महास्रग्धरा	स त त न स र र ग (८+७+७)
महिता	देखो *इन्दुवदना*
महिषी	देखो *धीरललिता*
मही	ल ग
मही	न स ल ग
मही	स स ल ग
महीधर	ल—ग युग्मक १४
महेन्द्रवज्रा	स य स य
महोत्सव	देखो *उत्सव*, तथा *पञ्चचामर*
माणवक (०का क्रीड, क्रीडितिक)	भ त ल ग
माणिक्यमाला	देखो *अनवसिता*
माता	म न न ग ग (५+६)
माधव	इन्द्रवंशा+वंशस्थ (उपजाति)
माधवी	ज ज ज ज ज ज ज य
माधवीलता	म र भ स स ज ग (७+१२)
मान	न र स म न म (१०+८)
मानस	न य भ स (६+६)
मानसहंस (०न हंस)	स ज ज भ र

मुदिता	य स ग
मुद्रा	य ल
मुद्रा	न भ भ म स स ल ग (११+९)
मुनिशेखर	स ज ज भ र स ल ग (१२+८)
मुरली (अ० स०)	(१०,११) स स ज ग, स भ र ल ग
मृगी	र
मृगेन्द्र	ज
मृगेन्द्रमुख	न ज ज र ग
मृदग	त भ ज ज र
मेघमाला	न न र र र र र र
मेघवितान	स स स ग
मेघविस्फूर्जिता	य म न स र र ग (६+६+७)
मेघावली	न र र र
मैनावली	त त त त
मोटक (०टनक)	त ज ज ल ग
मोतियदाम	देखो *मौक्तिकदाम*
मोद	भ भ भ भ भ म स ग
मोदक	भ भ भ भ
मोहन	स ज
मोहन	स ज स ज
मोहन	भ न ज य
मोहप्रलाप	म भ भ भ ग
मोहिनि	स भ त य स (७+८)
मोहिनी	र भ त य स (७+८)
मौक्तिक	र य ज ग
मौक्तिकदाम	ज ज ज ज
मौक्तिकमाला	भ त न ग ग (५+६)

य—

यम (०क)	न ल ल
यमवती (अ० स०)	(१२, १३) र ज र ज ग, ज र ज र ग
यमुना	न ज ज र (७+५)
यवमती(०वती)(अ०स०)	(१३, १३) र ज रज, ज र ज र ग
यशोदा	ज ग ग
यादवी	स स ज भ ज ग ग (१०+७)
युक्ता	न न म

र—

रक्ता	र ज ग
रुगी	र ग
रचना	न ज भ य भ ज ग (७+१२)
रचना	न ज भ य स ज ग (११+८)
रजनी	स
रञ्जन	भ न ज न स न न भ ग ग (७+७+७+५)
रञ्जिता	र ज स ल ग (५+६)
रणहंस	स ज ज भ र
रति	स ल ग
रति	भ त न स (५+७)
रति	स भ न स ग (४+६)
रतिपद	न न स
रतिमाला	देखो तुङ्ग
रतिलीला	ज स ज स ज स ग (६+५+७)
रतिलेखा	स न न न स ग (११+५)
रत्नकरा	म स स
रथपद	न न स ग ग
रथोद्धता	र न र ल ग

रमण स
रमणी स स
रमणीयक र न भ भ र
रमा स ग
रमा स ल ग
रमेश न य न ज
रम्भा देखो *मेघविस्फूर्जिता*
रम्या म य
रलका म स स
रसना न य स न न ल ग (७+१०)
रसाल ज स त य र ल (७+६)
राग र ज र ज ग
राजरमणीय ज स र न ग ग (७+७)
राजहंसी न र र ल ग
राधा र त म य ग (८+५]
राधारमण न न म स
रामा त य ल ल
रुक्मवती म स ग
रुचि त भ स ज ग (४+६)
रुचिरमुखी न य न ल ग
रुचिरमुखी न ज ज य न ल ग
रुचिरा त भ य
रुचिरा भ त न ग ग (५+६)
रुचिरा ज भ स ज ग (४+६)
रुचिरा न न न न स (४+१+४+६)
रुचिरा न ज भ ज ज ज र
रूपघनाक्षरी (दण्डक) ३२ वर्ण, अन्त ग ल

रूपमाला	म म म
रूपा	म म म म म ग (८+८)
रेखा	स ज ज न य (५+१०)
रेवा	म स त न ग ग
रोचक	भ भ र ग ग
रोहिणी	न स म म य ल (६+४+७)
ल—	
लक्षी	देखो *खजन*
लक्ष्मी	म स त न ग ग
लक्ष्मी	र र ग ल
”	त भ स ज ग
”	र त त ग म (७+७)
”	भ स त त ग ग
”	म र त त ग (७+७)
”	म स त भ ग ग
लक्ष्मीधर	र र र र
लघुगति	न न न न ग
लघुमणिगुणनिकर	न न स
लघुमालिनी	भ र
लटह	न न ग
लता	न न र भ र र (१०+८)
लताकुसुम	देखो *मदिरा*
लय	न स ज ज ग
लयग्राहि	त त त ग ग
ललना	भ म स स (५+७)
”	भ त न स (५+७)
”	र न न न [illegible]

ललित	न न भ र
,,	न न म त भ र (७+४+७)
,,	देखो *अश्वललित*
ललित (वि०)	स ज स ल, न स ज ग, न न स स; स ज स ज ग (१०, १०, १२, १३)
ललितकेसर	न र न र ल ग
ललितगति	न ज ल ग
ललितपद	न न न ज स (५+२१)
ललितपदा	देखो *तामरस*
ललितलता	न न भ न ज न य (७+७+१०)
,,	न न न न न न न न न न न न ल ग (१०+१०+१०+८)
ललितविक्रम	भ र न र न र र (१०+११)
ललिता	भ ग
ललिता	त भ ज र
ललिता	देखो *धीरललिता*
ललिता (अ० स०)	(८, १०) र स ल ग, स ज ज ग
,, ,,	देखो *मुरली*
लवली (वि०)	(१६, १२, ८, २०,)
लवगलता	ज ज ज ज ज ज ज ज ल
लहरिका	न न न न न न न न न न ग(८+८+८+७)
लालसा	त न र र र र (६+६)
लालसी (०सा)	न न र र र र (१०+८)
लालित्य	म स र स त ज न ग (६+५+८)
लालित्य	म स ज य भ भ न ग
लालिनी	र स ज ग
लासिनी	ज ग

लीला	भ त ग
लीला	देखो *नील*
लीलाकर	न न र र र र र र र र र र र र र
लीलाखेल	देखो *कामक्रीडा*
लोला	देखो *अलोला*

व—

वशदल	भ र न भ न ल ग (१०+७)
अथवा	
वशपत्र पतित (०ता)	,,
अथवा	
वशपत्रललित	,,
वशमाला	वशस्थ+इन्द्रवशा (उपजाति)
वशस्थ (-विल)	ज त ज र
वक्त्र	भ म म (५+४)
वञ्चक	त स ग
वञ्चित	म त न स ल ल ग (५+७+७)
वतसिनी	(३,२४) र, ज र ज र ज र ज र
वन	य
वनमञ्जरी	न ज ज ज ज भ र
वनमयूर	देखो *इन्दुवदना*
वनलता	र न भ भ ग ग
वनलतिका	न न न न न न न न ग ग
वरकृत्तन	र स ज य भ र (६+४+८)
वरतनु	न ज ज र (६+६)
वरदा	देखो *महामालिका*
वरयुवती	भ र य न न ग (९+७)
वरसुन्दरी	देखो *इन्दुवदना*

वरूथिनी	ज न भ स न ज ग (५+५+५+४)
वर्त्म	देखो *धारि*
वर्धमान (बि०)	(१४, १३, ६, १५) म स ज भ ग ग, स न ज र ग, त ज र, न न न ज य। कहीं तीसरा-पाद=न न स न न स (१२)
वर्ष	म त ज
वलना	देखो *वनलता*
वलि	ल ल
वल्लकी	र भ ज त त त ग (१०+६)
वल्ली	म ल
वसन्त	देखो *नदीमुखी*
वसन्तचत्वर (०चामर)	ज र ज र
वसन्ततिलक (०का)	त भ ज ज ग ग
वसन्तमँजरी	देखो *अवभ्रशा*
वसन्ता	देखो *मेघावली*
वसुधा	स ज स य ल ग
वसुधारा	न न न न न ग ग (५+१२)
वसुमती	त स
वागीश्वरी	य य य य य य य ल ग (१२+११)
वागुरा	र ल ग
वाचालकाञ्ची	देखो *काञ्ची*
वाणिनी	न ज भ ज र ग
वाणिनी	न ज भ ज ज ग ग
वातोर्मि	म भ त ग ग (४+७)
वातोर्मि	म भ भ ग ग (४+७)
वानरी (अ० स०)	(८, ३) ज र ल ग, र
वापी	म य ग ल (४+४)

वाम	ज ज ज ज ज ज ज य
वामा	त य भ ग (२+८)
वायुवेगा	म स ज स न ज ग (१२+७)
वारिधर	र न भ भ
वारुणी (अ० स०)	(३, २०) र, ज र ज र ज र ल ग
वासना	न स ज र
वासन्ती	म त न म ग ग (६+८)
वाहिनी	त म म य (७+५)
विकसितकुसुम	म भ न न न न न न स (४+८+८+७)
विक्रान्ता	भ म
विक्रान्ता	म म म स
विचित	देखो *वञ्चित*
विच्छिति	देखो *भगि*
विजया	३२ वर्ण, (८+८+८+८), अन्त ल ग अथवा ल ल ल
विजोहा (०ज्जोदा)	र र
वितान	स भ ग ग
वितान	ज त ग ग
वितान	भ भ ग ग
वितान	स स स ग
विदग्धक	देखो *वागुरा*
विदुषी	स स स ल ग
विद्याधर (०धारी)	म म म म
विद्युत्	न न त त ग
विद्युद्भ्रान्ता	म ग ग
विद्युन्माला	म म ग ग
विद्युन्मालिका	न स त त ग

विद्युल्लेखा	म म
विधुवक्त्रा	भ स ग
विध्वकमाला (०ध्यग०)	त त त ग ग (६+५)
विंदु	भ भ म ग (६+४)
विपरीतपथ्यावृत्त (अ० स०)	(८, ८ स स ल ग, स स ग ग
विपरीताख्यानिकी (अ०स०)	(११, ११) ज त ज ग ग, त त ज ग ग (उपेन्द्रवज्रा + इन्द्रवज्रा)
विपिनतिलक (०का)	न स न र र
विपिनभुज (०जा)	न ज य ग
विपुला	भ र ल ल
विबुधप्रिया	देखो *उज्ज्वल*
विबोधिता (अ०स०)	देखो *मुरली* (अ० स०)
विभा	त र ग ग
विभावरी	देखो *प्रमाण*
विभूषणा	देखो *राजहंसी*
विभ्रमगति	म स ज स त त भ र
विभ्रमा	न न स स ग ग
विमलजला	स न ल ग
विमला	स य
विमला	स ज ग
विमला	स म न ल ग
विमोहा	देखो *विजोहा*
वियोगिनी (अ० स०)	देखो *मुरली* (अ० स०)
विराट	म स ज ग
विलम्बितगति	देखो *पृथ्वी*
विलम्बिता	ज र ग

विलम्बिता	देखो *कनकप्रभा*
विलसित लीला	(११, १३,) भ भ त ल ग, न ज न स ग,
विलास	म स स र र र
विलास (वि०)	(१०, १०, ६, ११) त म य ग, त त ज ग, स त म, स स स ल ग
विलास (वि०)	(६, १०, ६, ११) त म स, त र ज ग, स त म, स स स ल ग
विलासिनी	देखो *लासिनी*
विलासिनी	ज र ज ग ग
विलासिनी	न ज भ ज भ ल ग (१५+५)
विलासी	म त म म ग (५+३+५)
विशाला	देखो *गुर्वी*
विशुद्धचरित	देखो *प्रभद्रक*
विशेषक	देखो *नील*
विश्लोक	देखो *उत्थापनी*
बिस्मिता	य म न स र र ग (६+६+७)
वीथी	म स
वीरवर	न स ल
वृत्त	देखो *गण्डका*
वृत्तललित	देखो *नृत्तललित*
वृत्तसमृद्धा	भ म न ग
वृत्ता (०न्ता)	न न स ग ग (४+७)
वृद्धि	देखो *क्रीडा*
वृन्दारक	ज स ज स य य य ल ग
वृषभचरित (०ललित)	न स म र स ल ग (६+४+७)
वृषभगजविलसित (०ता)	देखो *ऋषभ गजविलसित*
वेगवती	न ज न स भ न न न ल ग

वेगवती (अ० स०)	(१०, ११) स स स ग, भ भ भ ग ग
वेल्लिता	स स न न म ग
वेश्याप्रीति	म भ य म न भ न स
वेश्यारत्न	त न त न त न ग ग (६+६+८)
वैतिका	देखो ताल
वैश्वदेवी	म म य य (५+७)
व्याल	न न र र र र र र र र र र
व्रीडा	य ग

श

शख	त ज ज ज ज ज ज ल ग
शख (दडक)	न न र र र र र र र र र र र र र र
शखनारी	देखो *सोमराजी*
शखनिधि (अ० स०)	(१२, १२) ज त ज र, त त ज र
शफटिका	न र
शम्भु	स त य भ म म ग (५+७+७)
शरभ	न न न न स (६+९)
शरभललित	न भ न त ग ग
शरभललित	म भ न त ग ग
शरभा	न भ न त ग ग (४+६+४)
शरमाला	भ भ भ भ स ग
शर्म	भ ल ग
शलभविचलिता	देखो *गुर्वी*
शशाङ्करचित	त भ ज भ ज भ ल ग
शशिकला	न न न न स (७+८ अथवा ६+९)
शशिलेखा	न ज य
शशिवदना	न य
शशिवदना (गाथा)	न ज भ ज ज ज र (११+१०)

शशी	य
शारद	त भ र स ज ज (६+६)
शारदी	भ ज ग
शार्ङ्गी	देखो *ऊर्जित*
शार्दूल	म स ज स र म (१२+६)
शार्दूलललित (ता)	म स ज स त स (१२+६)
शार्दूलविक्रीडित (ता)	म स ज स त त ग (१२+७)
शालिनी	म त त ग ग (४+७)
शाली	र त त ग ग (४+७)
शालू	त न न न न न न न न ल ग (१४+१५)
शिखडित	ज स र ग
शिखडिन	देखो *उपस्थित*
शिखडिनी	य म
शिखडी (अ०स०)	(१२, ३,) ज र ज र र
शिखरिणी	य म न स भ ल ग (६+११)
शिखा	ज ग ग
शिखामणि (अ०स०)	देखो *मुरली* (अ० स०)
शिखि (अ०स०)	(३, १२) र, ज र ज र
शिवा	न म य ल ग
शिविका	देखो *केकिरव*
शिशु	त ज स स य
शिष्या	म स ग
शीर्षरूपक	म म ग
शील	स स स ल ल
शुद्धगा	
शुद्धविराट	म स ज ग
शुद्ध विराट ऋषभ(वि०)	(१४, १३, ६, १५) म स ज भ ग ग,

	स न ज र ग,
	त ज र, न न न ज य
शुभोदर	भ भ भ
शूर	भ य स त य ग ल (५+५+७)
शृंगारिणी	देखो स्रग्विणी
शेखराज	देखो *विद्युल्लेखा*
शैल	य य य ज
शैलशिखा	भ र न भ भ ग (५+६+५)
शैलसुता	न ज ज ज ज ज ज ल ग (१३+१०)
शोभा	य म न न त त ग ग (५+७+७)
शोभावती	देखो *उद्धर्षिणी*
श्याम	न य य
श्यामा	त स ग ग
श्यामांगी	देखो *नारी*
श्येनिका (०नी)	र ज र ल ग
श्रद्धा	देखो *माली*
श्री	ग
श्री	भ त न ग ग
श्री	स स स स स
श्रीधरा	देखो *मन्दाक्रान्ता*
श्रीपद	न त ज य (४+८)
श्रुति	त भ स य (४+८)
श्रेणि	देखो *श्येनिका*
श्रेणि	देखो *चन्दनप्रकृति*
श्रेयोमाला	म म ज ज ग (४+६)
श्लोक	देखो *अनुष्टुप*

ष—

षट्पदा (अ०स०)	(१७, १२) त भ र ज र ग ग, र ज र य
षट्पदावली (अ०स०)	(१३, १२) ज र ज र ग, र ज र ज

स—

सयुत् (०ता ०क्ता)	स ज ज ग
सङ्गत	देखो *अश्वाक्रान्ता*
सङ्गतक	भ भ म स स
सङ्गता	देखो *मदिरा*
सती	न ग
सती	ज ग ग
सदागति	देखो *कलावती*
सद्म	य ल
सद्रत्नमाला	म न स न म य ल ग (५+८+७)
सन्धिवर्षिणी	देखो *मञ्जुवादिनी*
समदविलासिनी	न ज भ ज भ ल ग (१२+५)
समान	र ज र ज
समानिका	र ज ग
समानी	र ज ग ल
समुच्चय	भ र न न ज ज य (१३+८)
समुदविलासिनी	न ज भ ज भ ल ग (१०+७)
समुद्रतता	ज स ज स त भ ग (८+४+७)
समृद्धि	देखो *ऋद्धि*
सम्पीड	देखो *अंतगापीड*
सम्भ्रान्ता	न य भ त न न न स
सम्मोहा	म ग ग
सरल	म भ ग
सरसी	न ज भ ज ज ज र (११+१०)

सरिता	त य स भ र य ग ल (१०+१०)
सर्वगामी	त त त त त त त ग ग
सलिलनिधि	देखो *सरसी*
सवासन	न ज ल
सान्द्रपद	भ त न ग ल
साधु	न स त ज (७+५)
सायक	स भ त ल ग
सार	ग ल
सारग (रूपक)	त त त त
सारगिक (०का)	न य स
सारगी	म म म म म (८+७)
सारणी	स ज य ल ग
सारवती	भ भ भ ग
सारसिका (अ०स०)	देखो *वेगवती* (अ० स०)
सारसी (अ०स०)	(१६, ३) ज र ज र ज ग, र
सारिका	स स स स स ल ग (१०+७)
सारिणी	ज स य ल ग
सालूर	त न न न न न न न न ल ग
सावित्री	म ल ग
सिंह	न म र स ल ग (७+७)
सिंहनाद (०नी)	स ज स स ग
सिंहलीला (०लेखा)	र ज ग ग
सिंहविक्रान्त	न २+य ७ वा अधिक
सिंहविक्रीड	य ६ वा अधिक
सिंहविक्रीडित	न न र र र र
सिंहविस्फूर्जित (०ता)	म म भ न य य (५+६+७)
सिंहाक्रान्ता	म भ स

सिंहोद्धता (०न्नता) देखो *वसततिलका*

सिद्धि (०द्धक) देखो *चित्रलता*

सीता र त म य र

सुकेसर न र न र ल ग

सुख ल ग

सुख (सवैया) स स स स स स स स ल ल

सुखदानी देखो *मल्ली*

सुखेलक न ज भ ज र

सुगीत ज भ र स ज ज

सुचन्द्रप्रभा ज र ग ल

सुदती देखो *घनपंक्ति*

सुदन्त स य स ज ग

सुदर्शना स ज न र ल ग (५+६)

सुधा य म न स त स (६+६+६)

सुधाकलश न ज भ ज ज ज भ ज ल ग (१४+१२)

सुधानिधि ग-ल युग्मक १६

सुधी ज ग

सुनन्दा म य

सुनन्दा स भ स ज ग ग (४+१०)

फुनन्दिनी देखो *कनकप्रभा*

सुन्दर र न भ भ र

सुन्दरलेखा म त य

सुन्दरी र न भ भ

सुन्दरी न र ज ग (६+४)

सुन्दरी न भ भ र (द्रुतविलबित)

सुन्दरी भ भ भ भ

सुन्दरी स स भ स भ स त ज ज ल ग ६+७+

सुन्दरी (अ० स०) देखो *मुरली* (अ० स०)
सुन्दरी (सवैया) देखो *मल्ली*
सुपवित्र (०त्रा) न न न न ग (८+६)
सुप्रभा देखो *चित्रमाला*
सुप्रिया देखो *शशिकला*
सुभद्र देखो *किरीट*
सुभद्रा ज र ग
सुभद्रिका न न र ल ग
सुभावा देखो *चापकमाला*
सुमङ्गलिका देखो *कलहंस*
सुमङ्गली देखो *कनकप्रभा*
सुमति स ग
सुमति न र न य
सुमधुरा म र भ न म न ग (७+६+६)
सुमालती ज ज
सुमालती न र ल ग
सुमाला स स ग
सुमुखी न ज ज ल ग
सुमुखी (सवैया) ज ज ज ज ज ज ज ल ग
सुरतललिता म न स त र ग
सुरदयिता भ त न ग
सुरनर्तकी देखो *तरंगमालिका*
सुरभि स न ज न भ स (३+५+५+५)
सुरसरि त न भ स
सुरसा म र भ न य न ग (७+७+५)
सुरेन्द्र य म न न ग (५+८)
सुललित (०ता) य म न स र ग (६+१०)

सुवंशा	म र भ न त त ग ग (७+६+७)
सुवक्त्रा	न ज ज र ग
सुवदन्त	म र भ न य भ ल ग (७+७+६)
सुवस्तु	ज
सुवासि	न ज ल
सुविलासा	स र ग ल
सुवृत्ता	देखो *मेघविस्फूर्जिता*
सुसमा (०षमा)	त य भ ग (२+८)
सूचीमुखी	स म
सूर	त म ल
सेना	त
सेनिका	देखो *श्येनिका*
सेवा	त र स ल
सोमकुल	देखो *अनुकूल*
सोमडक	देखो *कामुकी*
सोमप्रिया	त ग
सोमराजी	य य
सोमवल्लरी	र ज र ज र
सौम्यशिखा (अ० स०)	(१६, ३२) १६ गुरु, ३२ लघु
सौम्या	स स स
सौरभ	भ ज स स
सौरभक (वि०)	(१० १० १० १३) स ज स ल, न स ज ग, र न भ ग; स ज स ज ग
स्खलित	देखो *इन्दुवदना*
स्खलितविक्रमा	स भ म स भ ग
स्त्री	ग ग
स्थिर	देखो *नगस्वरूपिणी*

स्निग्धा	भ म म
स्मरशरमाला	देखो *शरमाला*
स्मृति	ज भ स य (४+८)
स्रक्	न न न न स (६+६)
स्रग्धरा	म र भ न य य य (७+७+७)
स्रग्विणी	र र र र
स्वागता	र न भ ग ग
स्वैरिणीक्रीडा (०उन)	र र र र र र र र

ह—

हस	भ ग ग
हसक्रीडा	म भ भ ग
हसगति	न ज ज ज ज ज ज ल ग
हसपद	भ म स भ न न न य (५+५+८+६)
हसपदा	त य भ भ न न न न ग (१०+१५)
हसमाला	स र ग
हसमाला	र र ग
हसरुत	म न ग ग
हसलय	न न न न स भ भ भ ग (८+७+१०)
हसश्यामा (०श्येनी)	देखो *कुटिला*
हसास्य	ज र भ र
हसिनी	र य ल ग
हसी	म भ न ग
हंसी	म म त न न न स ग (८+१४)
हंसी (अ० स०)	(२४, ३) ज र ज र ज र ज र, र
हयलीलागति	देखो *अश्वललित*
हरनर्तक	म स ज ज भ र (८+५+५)
हरनर्तन	र स ज ज भ र (८+५+५)

हरनर्तन — र त ज ज भ र (८+५+५)
हरा — ज ल
हरि — न ल
हरिणप्लुत — म स ज ज भ र (८+५+५)
हरिणप्लुत — देखो *द्रुतविलंबित*
हरिणप्लुता (अ० स०) — (११, १२) स स स ल ग, न भ भ र
हरिणी — ज ज ज ल ग
हरिणी — न स म र स ल ग (६+४+७)
हरिणी — भ भ भ ग
हरिणीपद — न स म त भ र (६+४+८)
हरिलीला — त भ ज ज ग ल (८+६)
हरिविलसित — न न ग
हरिहर — न ज म स त ज ज (८+५+८)
हलमुखी — र न स (३+६)
हारिणी — म भ न भ य ल ग (४+६+७)
हारी (–त) — त ग ग
हित — स न य ग ग (५+६)
हीर (–क) — भ स न ज न र (१०+८)
हृद्य — भ
ह्री — न न न स

(ख) मात्रिक छन्द

अ—

अतिबरवै (अ० स०)	१२, ६, १२, ६, (कुल ४२ मात्रा)
अभीर	११ मा०, अत ।ऽ।
अमृतकुँडली (वि०)	तिलोकी + हरिगीतिका के दो पाद (षट्पदी)
अमृतधुनि (वि०)	दोहा + २४ × ४ (१४४ मा०) (षट्पदी)
अरल	२१ मा०, अत ऽऽ।ऽ या ।।।ऽ
अरिल्ल	१६ मा०, (४ चौकल), अत ।।या।ऽऽ
अरुण	२० मा०, अन ऽ।ऽ (५ + ५ + १०)
अवतार	२३ मा०, अत ऽ।ऽ (१३ + १०)
अहीर	देखो *अभीर*

आ—

आनन्दवर्धक	१६ मा०, अंत ऽ या ।।
आर्या (वि०)	१२, १८, १२, १५ (५७ मा०)
आर्यागीति (अ० स०)	१२, २०, १२, २० अत ऽ (६४ मा०)
आल्हा	३१ मा०, अत ऽ। (१६ + १५)

उ—

उज्ज्वला	१५ मा०, अत ऽ।ऽ
उडियाना	२२ मा०, अत ऽ (१२ + १०)
उदीच्यवृत्ति (अ० स०)	१४, १६, १४, १६ (६० मा०) विषमपादो में आदि । ऽ
उद्गीति (वि०)	१२, १५, १२, १८ (५७ मा०) अत ऽ
उद्धत	४० मा०, अत ऽ। (१० + १० + १० + १०)

उपगीति (अ० स०)	१२, १५, १२, १५ (५४ मा०) अंत ऽ
उपचित्रा	१६ मा०, (४ चौकल) (८+ऽ+४+ऽ)
उपमान	२३ मा०, अंत ऽऽ (१३+१०)
उल्लाल (अ० स०)	१५, १३, १५, १३ (५६ मा०) समपादो मे अंत ।
उल्लाला	१३ मा०, (११वी लघु)
क—	
कज्जल	१४ मा०, अंत ऽ।
कबीर	२७ मा०, अंत ऽ। (१६+११)
कमन्द	३२ मा०, अंत ऽऽ (१५+१७)
कमलावती	३२ मा०, अंत ऽऽ (१०+८+१४)
कटखा	३७ मा०, ।ऽऽ (८+१२+८+९)
कर्ण	३० मा०, अंत ऽऽ (१३+१७)
कामकला	३२ मा०, (८ चौकल) अंत ।।ऽ
कामरूप	२६ मा०, अंत ऽ। (९+७+१०)
काव्य	२४ मा०, (११वी लघु) (११+१३ या १२+१२)
कुकुभ	३० मा०, अंत ऽऽ (१६+१४)
कुडल	२२ मा०, अंत ऽऽ (१२+१०)
कुडलिया (वि०)	दोहा+रोला (१४४ मा०) षट्पदी
कुरग (अ० स०)	१२, ७, १२, ७ (३८ मा०) अंत ।ऽ। या ऽऽ।
ख-ग—	
खरारी	३२ मा०, (८+६+८+१०)
गगनाङ्गना	२५ मा०, अंत ऽ।ऽ (१६+९)
गङ्ग	९ मा०, अंत ऽऽ
गजल	२८ मा०, आदि ।, अंत ऽ
गाहिनी (गाहा) (वि०)	१२, १८, १२, २० (६२ मा०) अंत ऽ

गीता	२६ मा०, अंत ऽ। (१४+१२)
गीति (अ॰ स०)	१२, १८, १२, १८ (६० मा०)
गीतिका	२६ मा० अंत ।ऽ (३, १०, १७, २४ मात्रा लघु) अंत ।ऽ (१४+१२ या १२+१४)
गुपाल	१५ मा०, ।ऽ।
गोपी	१५ मा०, अंत ऽ
च—	
चञ्चरी (वि०)	१२, १२, १२, १० (४६ मा०) अंत ऽ
चण्डिका	१३ मा०, अंत ऽ।ऽ
चन्द्र	१७ मा०, (१०+७)
चन्द्रमणि	१३ मा०, (११वीं लघु)
चवपैया	३० मा०, अंत ऽ (१०+८+१२)
चान्द्रायण	२१ मा०, (१०+११)
चित्रा	१६ मा०, (चौकल) ५, ८, ६ लघु
चुलियाला	२६ मा०, अंत ।ऽ।। (१३+१६)
चौपाई	१५ मा०, अंत ऽ।
चौपाई	१६ मा०, (अंत में ।ऽ। या ऽऽ। न हों)
चौबोला	१५ मा०, अंत ।ऽ
छ—	
छप्पय	रोला+उल्लाला (२ पाद), षट्पदी (कुल १४८ या १५२ मा०)
छवि	८ मा०, अंत ऽ। या ।ऽ।
ज—	
जग	२३ मा०, अंत ऽ। (१०+८+५)
जयकारी	१५ मा०, अंत ऽ।
झ—	
झूलना १	२६ मा०, अंत ऽ। (७+७+७+५)

झूलना २	३७ मा०, अंत ।ऽऽ (१०+१०+१०+७)
झूलना ३ द्विपदी	३७ मा०, अंत ।ऽऽ (१०+१०+१०+७)
ड—	
डिल्ला	१६ मा०, (४ चौकल) अंत ऽ।।
त—	
तन्त्री	३२ मा०, अंत ऽऽ (८+८+६+१०)
तमाल	१९ मा०, अंत ऽ।
ताटक	३० मा०, अंत ऽऽऽ (१६+१४)
ताण्डव	१२ मा०, आदि-अंत ।
तिलोकी	२१ मा०, आदि ऽ, अंत ।ऽ
तोमर	१२ मा०, अंत ऽ।
त्रिभंगी	३२ मा०, अंत ऽ (१०+८+८+६)
द—	
दण्डकला	३२ मा०, अंत ।।ऽ (१०+८+१४)
दिगपाल	२४ मा०, अंत ऽऽ (१२+१२)
दिण्डी	१९ मा०, अंत ऽऽ (९+१०)
दीप	१० मा०, अंत ।।।ऽ।
दुर्मिल	३२ मा० अंत ।।ऽऽऽ १०+८+१४)
दृढ़पद (०द्)	२३ मा०, अंत ऽऽ (१३+१०)
दोवें	२८ मा०, अंत ऽऽ या ।। या ऽ या ऽऽऽ
दोहा (अ०स०)	१३, ११, १३, ११ (४८ मा० दलादि में ।ऽ। निषिद्ध, दलांत में ।ऽ। या ऽऽ।)
दोहाचण्डालिनी (अ०स०)	१३, ११, १३, ११ (४८ मा०) दलादि में ।ऽ।
दोही (अ० स०)	१५, ११, १५, ११, (५२ मा०) अंत ।
दौड़ (र०) (वि०)	देखो *मनोहर*
ध—	
धत्ता (अ०स०)	१८, १३, १८, १३, (६२ मा०) दलात ।।।

घत्तानन्द (अ०स०) ११+७, १३, ११+७, १३ (६२ मा०) दलात ।।।

धरणी १३ मा०, अंत ऽ।ऽ (८+५)

धारा २९ मा०, अत ऽ (१५+१४)

ध्रुव (अ०स०) १२, ७, १२, ७ (३८ मा) अत ।ऽ। या ऽऽ।

न—

नरहरि १९ मा०, अत ।।।ऽ (१४+५)

नाग २५ मा०, अत ऽ। (१०+८+७)

नित १२ मा, अत ।ऽ या ।।।

निधि ९ मा० अत ।

निश्चल २३ मा०, अत ऽ। (१६+७)

प

पज्झटिका १६ मा०, (४ चौकल+८+ग+४+ग)

पदपादाकुलक १६ मा०, (आदि द्विकल)

पद्धरि १३ मा०, (४ चौकल) अत ।ऽ।

पद्मावती ३२ मा०, अंत ऽऽ (१०+८+१४)

पादाकुलक १६ मा०, (४ चौकल)

पीयूषवर्ष १९ मा०, १० वीं लघु, अत ऽ

पुनीत १५ मा०, अत ऽऽ।

पुरारि १८ मा०, अंत ऽ

प्लवगम २१ मा०, आदि ऽ, अत ।ऽ।ऽ (८+१३)

ब

बदन १८ मा०, अंत ऽ।

बरवै (अ०स०) १२, ७, १२, ७ (३८ मा०) अत ।ऽ। या ऽऽ।

बिधाता २८ मा०, अंत ऽऽ (१४+१४)

बिहारी २२ मा०, (१४+८)

बीर ३१ मा०, अंत ऽ। (१६+१५)

बुद्धि (वि०)	थमदल ३०, द्वितीयदल २७ (२७ मा०) (यति यथेच्छ)
वैताल	२३ मा०, अंत ऽ। (६+७+१०)
भ—	
भव	११ मा०, अंत ऽ।
भानु	२१ मा०, अंत ऽ। (६+१५)
भुजगिनी	१५ मा०, अंत ।ऽ। (८+७)
म—	
मञ्जुतिलका	२० मा०, अंत ।ऽ। (१२+८)
मत्तसमक	१६ मा८, (४ चौकल) ६ वी लघु
मत्तसवैया	पादाकुलक (२पाद)+समान सवैया
मदन	२४ मा०, अंत ऽ। (१४+१०)
मदनगृह (०हर)	४० मा०, आदि ।।, अंत ऽ (१०+८+१४ +८ या ३२+८)
मदनाग	२५ मा०, अंत ऽ (१७+८)
मधुभार (०मार)	८ मा०, अंत ।ऽ।
मधुमालती	१४ मा०, अंत ऽ।ऽ (७+७)
मनमोहन	१४ मा०, अंत ।।। (८+६)
मनोरम	१४ मा०, आदि ऽ, अंत ऽ।। या ऽऽ
मनोहर (वि०)	१३, १३, १३, २८ (६७ मा०) अथवा १३, १३, १३, १३, १३ (पचपदी) (६५ मा०)
मरहटा	२९ मा०, अंत ऽ। (१०+८+११)
मरहटा माधवी	२९ मा०, अंत ।ऽ (११+८+१०)
मात्रिक (सवैया)	३१ मा८, अंत ऽ। (१६+१५)
मानव	१४ मा०, अंत ऽ
माली	१८ मा०, अंत ऽ
मुक्तामणि	२५ मा०, अंत ऽऽ (१३+१२)

मृदुगति	२४ मा०, अंत ऽऽ (१२+१२)
मोहन	२३ मा० (५+६+६+६)
मोहिनी (अ०स०)	१२, ७, १२, ७, (३८ मा०) अंत ।।ऽ
य—	
योग	२० मा०, अंत ।ऽऽ (१२+८)
र—	
रसाल	२४ मा०, आदि ।ऽ।, अंत ।ऽ। (१०+१४)
राजीवगण	१८ मा०, अंत ऽ
राधिका	२२ मा०, (१३+६)
राम	१७ मा०, अंत ।ऽऽ (६+८)
रास	२२ मा०, अंत ।।ऽ (८+८+६)
रुचिरा	३० मा०, अंत ऽ (१४+१६)
रुचिरा (अ०स०)	१६, १४, १६, १४, (६० मा०) अंत ऽऽ
रूप चौपाई	देखो चौपाई
रूपमाला	२४ मा०, अंत ऽ। (१४+१०)
रोला	२४ मा०; (११+१३ या १२+१२)
ल—	
ललितपद	२८ मा०, अन्त ऽऽ या ।। या ऽ या ऽऽऽ (१६+१२)
लक्ष्मी (वि०)	देखो बुद्धि
लावनी	३० घा०, अंत ऽऽ (१६+१४)
लीला	१२ मा०, अंत ।ऽ।
लीला	२४ मा०, अन्त ।।ऽ (७+७+१०)
लीलावती	३२ मा०, अन्त ऽऽ या ।ऽ। (१०+८+१४)
व—	
वानवासिका	१६ मा०, (४ चौकल) ६, १२ लघु
विजया	४० मा०, अ त ऽ।ऽ(१०+१०+१०+१०)

विजात	१४ मा०, आदि ।
विदोहा (अ०स०)	१२, ११ (४६ मा०)
विद्या	२८ मा०, आदि ।, अ त ।SS (१४+१४)
विधाता	देखो *विधाता*
विमल-ध्वनि (वि०)	दोहा+समान सवैया (षट्पदी)
विष्णुपद	२६ मा०, अ त S (१६+१०)
विश्लोक	१६ मा०, (चौकल) ५, ८ लघु
वैताल	देखो *बैताल*
वैताली (अ०स०)	१४, १६, (६० मा०)
श—	
शक्ति	१८ मा०, आदि ।, अ त ।।S या S।S या ।।।, १, ६, ११, १६ लघु
शङ्कर	२६ मा०, अ त S। (१६+१०)
शास्त्र	२० मा०, अ त S।
शिव	११ मा०, अंत ।।S या S।S या ।।।
शुद्ध गीता	२७ मा०, अ त S। (१४+१३)
शुद्धध्वनि	३२ मा०, अत S (१०+८+८+६)
शुभग	४० मा०, SS। (१०+१०+१०+१०)
शुभगति	७ मा०; अत S
शुभगीता	२७ मा०, अ त S।S (१५+१२)
शुभङ्गी	३० मा०, अत S या SS (८+८+८+६)
शृङ्गार	१६ मा०; (४ चौकल-आदि ३ + २, अत S। या ।S)
शोकहर	३० मा०, अन्त S (८+८+८+६)
शोभन	२४ मा०, अत ।S। (१४+१०)
स—	
सखी	१४ मा०, अत SSS या ।SS

सगुण	१६ मा०, आदि ।, अंत ।ऽ। (५+५+५ +४)
सन्त	२१ मा०, अंत ।।ऽ (३+६+६+६)
समान सवया	३२ मा०, अंत ऽ।। (१६+१६)
सम्पदा	२३ मा०, अंत ।ऽ। (११+१२)
सरस	१४ मा०, अंत । (७+७)
सरसी	२७ मा०, अंत ऽ। (१६+११)
सवाई	३२ मा०, अंत ऽ।। (१६+१६)
सार	२८ मा०, अंत ऽऽ या ऽ या ऽऽऽ या ।। (१६+१२)
सारस	२४ मा०, आदि ऽ (१२+१२)
सार्थ	३० मा०, अंत ऽऽ (१३+१७)
सिंह	१६ मा०, (४ चौकल), आदि । अंत ।।ऽ
सिंहनी (वि०)	१२, २०, १२, १८ (६२ मा,) अंत ऽ
सिंहिका	२४ मा, अंत ।ऽ। (१४+१०)
सिन्धु	२१ मा०, आदि ।
सुखदा	२२ मा०, अंत ।।ऽ (१२+१०)
सुगति	७ मा०, अंत ऽ
सुगीतिका	२५ मा०, आदि ।, अंत ऽ। (१५+१०)
सुजान	२३ मा०, अंत ऽ। (१४+९)
सुमन्दर	२७ मा०, अंत ऽ। (१६+११)
सुमित्र	२४ मा०, आदि । ऽ।, अंत ।ऽ। (१०+१४)
सुमेरू	१९ मा०, (१२+७ या १०+९)
सुलक्षण	१४ मा०, अंत ऽ।
सोरठा (अ०स०)	११, १३, (४८ मा०) (दोहा उल्टे सोरठा)
ष—	
षट्पद (दं.)	देखो छप्पय

ह—

हंसगति	२० मा०, (११+६)
हसाल	३७ मा०; अन्त ।ऽऽ (२०+१७)
हरिगीतिका	२८ मा०, अन्त ।ऽ या ऽ।ऽ (१६+१२) (रचना क्रम २+३+४+३+४+३+४+५=२८)
हरिपद (अ०स०)	१६, ११, (५४ मा०) अन्त ऽ।
हरिप्रिया	४६ मा०, अन्त ऽ (१२+१२+१२+१०)
हाकलि (का)	१४ मा०, अन्त ऽ
हीर	२३ मा०, आदि ऽ अन्त ऽ।ऽ (६+६+११)
हुल्लास (वि०)	पावाकुलक+त्रिभगी (१६+४+३२+४= (१९२ मा०)